प्रौढ़ शिक्षा में

सामाजिक और राजनैतिक उत्तरदायित्व

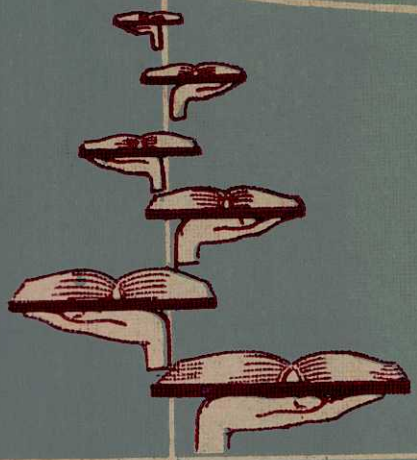

इन्डियन एडल्ट एजूकेशन एसोसिएशन
30, फ़ैज़ बाज़ार, दिल्ली.

प्रौढ़ शिक्षा में सामाजिक और राजनैतिक उत्तरदायित्व

हैम्बर्ग में [८ से १३ सितम्बर १९५२ तक] यूनेस्को इन्स्टीट्यूट द्वारा आयोजित अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन की रिपोर्ट

सिरीज़ न० २९
१९५७

इन्डियन एडल्ट ऐजूकेशन एसोसिएशन
३०, फ़ैज़ बाज़ार, दिल्ली

श्री अवध शर्मा (ऑफिस सेक्रेटरी) द्वारा
इण्डियन एडल्ट एजूकेशन एसोसियेशन के लिए
मई १९५७ में प्रकाशित

प्रथम संस्करण १९५७

मूल्य ढाई रुपये

मुद्रक : श्री गोपीनाथ सेठ, नवीन प्रेस, दरियागंज, दिल्ली

आभार-प्रदर्शन

"प्रौढ़-शिक्षा" का कोई महत्व न होगा यदि यह हमारे सामाजिक और राजनैतिक दायित्वों में अभिवृद्धि न करे। इसकी सफलता के लिए आवश्यक है कि इस क्षेत्र में यह, उचित प्रशिक्षण का अवसर तथा ऐच्छिक संघटनों व समितियों की गतिविधियों द्वारा व्यक्तियों को सहायता प्रदान करे जिससे कि वे पारस्परिक सहयोग और उत्तरदायित्व की भावना को समझें और अनुभव करें।

हेम्बर्ग में, यूनेस्को इन्स्टीट्यूट ऑफ एजूकेशन ने सन् १९५२ में एक सम्मेलन का आयोजन इस उद्देश्य से किया था कि कार्यकर्त्ता यह स्पष्ट रूप से समझ सकें कि प्रौढ़-शिक्षा किस तरह लोगों के सामाजिक व राजनैतिक दायित्वों के विकास में सहायक हो सकती है।

उक्त इन्स्टीट्यूट द्वारा प्रकाशित प्रतिवेदन का हिन्दी (रूपान्तर) अनुवाद प्रस्तुत करते हुए हमें प्रसन्नता है। हम इन्स्टीट्यूट ऑफ एजूकेशन के आभारी हैं कि उन्होंने मूल प्रतिवेदन को हिन्दी में प्रकाशित करने की अनुमति प्रदान की। साथ ही प्रतिवेदन के सम्पादक श्री फ्रैंक जेसप हमारे धन्यवाद के पात्र हैं जिन्होंने अपना अमूल्य समय और शक्ति मूल प्रतिवेदन के सम्पादन में लगाई। केन्द्रीय शिक्षा-मन्त्रालय से मिलने वाली आर्थिक सहायता के लिए भी हम उसके आभारी हैं।

हमें आशा है कि भारत में समाज-शिक्षण क्षेत्र के कार्यकर्ता योरोपीय देशों के इन अनुभवों से लाभ उठायेंगे तथा अपने ज्ञान और अपने कार्यों को इस प्रकार व्यवस्थित करेंगे कि भारत में लोकतन्त्रीय और लोक-मंगलीय समाज की स्थापना का लक्ष्य प्राप्त हो सके।

एस० सी० दत्ता
जनरल सेक्रेटरी
इण्डियन एडल्ट एजूकेशन एसोसियेशन

१७ मई १९५७
३० फ़ैज़ बाज़ार
दिल्ली

• • •

प्रस्तावना

यूनेस्को शिक्षा संस्था, निजी आयोजित अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलनों की अन्तर्वस्तु व परिणामों को प्रकाशित करेगी। यह प्रतिवेदन उसी शृंखला का प्रथम चरण है। ऐसे प्रतिवेदन अनिवार्य रूप से उन कठिनाइयों पर प्रकाश डालते हैं जिनकी उत्पत्ति इस तथ्य से होती है कि एक अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन के सदस्य न केवल भिन्न-भिन्न भाषा ही बोलते हैं, अपितु उनकी विचारधारा भी भिन्न होती है।

ऐसे सम्मेलनों में, जहाँ सदस्य केवल एक सप्ताह के लिए ही एकत्र होते हैं, विषयों का पूर्णरूपेण विवेचन नहीं हो सकता। फिर भी हमें विश्वास है कि ये प्रतिवेदन विविध देशों की परिस्थितियों के विवरण तथा अनुभूतियों के विनिमय के अभिलेखों से कुछ अधिक ज्ञान प्रदान करेंगे।

नाना राष्ट्रों की ऐतिहासिक, राजनैतिक व धार्मिक पृष्ठभूमि कितनी ही विभिन्न क्यों न हो, अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलनों से यह स्पष्ट होता है कि अनिवार्य शैक्षिक समस्याएँ न केवल एक समान हैं अपितु एक ही हैं, यद्यपि उनकी प्रणाली व हल एकरूप नहीं है। इसी कारण हमें विश्वास है कि पाठकों के लिए प्रतिवेदन रोचक और लाभप्रद होंगे।

इस प्रतिवेदन के संकलन में, सम्पादक के रूप में श्री० जेसप ने जो अथक परिश्रम किया है, यूनेस्को शिक्षा संस्था उसके लिए धन्यवाद देती है।

—वाल्दर मर्क

• • •

विषय-सूची

	पृष्ठ संख्या
आभार-प्रदर्शन	(iii)
प्रस्तावना	(v)
भूमिका	१
पहला अध्याय	
उद्घाटन भाषण—(प्राध्यापक जोहन्स नोवरूप) ...	५
दूसरा अध्याय	
फ्राँस में प्रौढ़-शिक्षा—(श्री एम० पौल लैन्ग्रान्ड) ...	१२
तीसरा अध्याय	
इंगलैण्ड में प्रौढ़-शिक्षा—(श्री एम० बरमीस्टर) ...	२३
चौथा अध्याय	
जर्मनी में प्रौढ़-शिक्षा के कुछ नव-विकास—(डॉ० फ्रिज़ बोरिन्सकी) ...	३०
पाँचवाँ अध्याय	
सामूहिक प्रतिवेदनों के संकलन—(सम्पादक) ...	४४
छठा अध्याय	
सम्मेलन के सदस्यों द्वारा टिप्पणियाँ, समाज और गृह—(डॉ० यूगेन रोज़ेन स्टोक हूसी नोरवीय) ...	६०
सातवाँ अध्याय	
नागरिक के लिए राजनैतिक उत्तरदायित्व—(श्री सोहनसिंह) ...	६७
आठवाँ अध्याय	
प्रौढ़ शिक्षण में व्यक्तित्व का प्रशिक्षण—(प्रो० डॉ० बर्टा ह्यूबर बिन्डशेडलर) ...	७३

नवाँ अध्याय

आवासिक संस्थाओं का मूल्य डेन्मार्क—(प्रो० जोहन्स नोवरूप) ... ७४

दसवाँ अध्याय

आवासिक संस्थाओं का मूल्य—(डॉ० फ्रिज़ वोरिन्सकी) ... ७७

ग्यारहवाँ अध्याय

आवासिक संस्थाओं का मूल्य इंगलैंड—(श्री लेसली स्टीफन्स) ... ८४

बारहवाँ अध्याय

नीदरलैंड में अव्यवस्थित युवकों के क्लब—(जैकोबस डब्ल्यू० उम्स) ... ८७

तेरहवाँ अध्याय

बैलजियम में सरकारी सहायता—राजनैतिक दल व प्रौढ़-शिक्षा—
(डॉ० पौल रॉक) ... ९९

चौदहवाँ अध्याय

कार्यकर्ताओं के मध्य डान्टे—(ल्यूसिआनो गोरल्डो) ... १०२

पन्द्रहवाँ अध्याय

प्रौढ़-शिक्षा में विज्ञानेतर विषयों की महत्ता—
(प्राध्यापक : डब्ल्यू० एस० सेफ़र्त) ... १०८

सोलहवाँ अध्याय

राजनैतिक तथा सामाजिक उत्तरदायित्व हेतु—प्रौढ़-शिक्षा में इंगलैंड के विश्वविद्यालय का कार्य—(प्राध्यापक आर० डी० वालर) ... ११६

भूमिका

सितम्बर १९५२ में, १५ भिन्न-भिन्न देशों के प्रौढ़ शिक्षा से सम्बन्धित ३८ पुरुष व स्त्रियाँ, हैम्बर्ग में यूनेस्को शिक्षा संस्था के विनम्र एवं प्रेरक वातावरण में, विचार-विनिमय हेतु एकत्र हुए। विषय था "सामाजिक व राजनीतिक उत्तरदायित्व के विकास और दृढ़ता का साधन प्रौढ़-शिक्षा" इस सम्मेलन की आयोजक समिति के विचार से प्रौढ़-शिक्षा से सम्बन्धित अनेक विषयों में से यही एक था जिसके ऊपर शीघ्रतम वाद-विवाद की आवश्यकता थी। इसके विवाद से विशेष लाभ यह था कि सारे सदस्य अनेक विभिन्न देशों की समस्याओं, प्रयोगों, कठिनाइयों व सफलताओं की अनुभूतियों के आधार पर बोलने में समर्थ थे।

उद्घाटन अधिवेशन में, आध्यात्मक नोवरूप, एम० लैनग्रान्ड, श्री० बरमीस्टर तथा प्राध्यापक कोह ने भाषण दिए। इस अधिवेशन के पश्चात् अल्प और अनिवार्य सामान्य तर्क-वितर्क हुआ। तदुपरान्त सम्मेलन के सदस्य चार समूहों में विभक्त हो गए (उनमें से एक को भाषा के कारण और भी दो भागों में विभाजित किया)। प्रत्येक समूह के लिए सम्मेलन के प्रमुख विषय के अन्तर्गत एक विशेष विषय निर्धारित किया गया। सामूहिक वाद-विवाद लगभग एक सप्ताह तक चलता रहा और अन्तिम अधिवेशन में, प्रत्येक समूह ने अपने-अपने निर्णयों का प्रतिवेदन किया। इनके ऊपर समूचे सम्मेलन ने सारांश में विचार-विनिमय किया।

जैसा कि प्राध्यापक नोवरूप ने अपने उद्घाटन भाषण में कहा था, "हमें वहाँ किसी विशिष्ट या असामान्य शैक्षिक समस्या पर नहीं, अपितु उलझनों से भरपूर बीसियों ज्वलन्त और प्रायः समाधानरहित, शोकान्त समस्याओं से परिपूर्ण, समुन्नत संसार के ऊपर विचार-विमर्श करने के लिए आमन्त्रित किया गया है।" यह आश्चर्य की बात नहीं है कि सम्मेलन, उलझनपूर्ण समस्याओं के कारण उन सब प्रश्नों का उत्तर नहीं दे सका जो विवेचन के समय उठ खड़े हुए थे। फिर भी कुछ ऐसे निर्णय किये गए जिन पर अधिकतर सदस्य सहमत हुए और जो अस्पष्ट, सामान्य, अनर्थक, वार्ताविहीन थे। इस प्रतिवेदन के पंचम भाग में उन सबका सम्बद्ध रूप प्रस्तुत करने के लिए प्रयास किया गया। तृतीय भाग में, डेन्मार्क के

प्राध्यापक नोवरूप का उद्घाटन भाषण है। चतुर्थ भाग में फ्रान्स के एम० लैन्ग्रान्ड तथा इंगलैंड के श्री० बारमीस्टर के प्रौढ़ शिक्षण पर भाषण, और जर्मनी के डा० फ्रिज़ बोरिन्सकी का लघु लेख है। सम्मेलन के अनेक सदस्यों ने तत्क्षण अथवा पश्चात् लघु-लेख दिए थे जिन्हें छठे भाग में एकत्रित किया गया है। ये समस्त लेख उन विषयों पर थे जिनमें उनकी विशेष रुचि थी। इनमें से एक नई दिल्ली के श्री० सोहनसिंह का लेख था, जिनके सम्बन्ध में ईर्ष्या-रहित महत्व देकर मैं यहाँ कह सकता हूँ। शेष हम सब पश्चिमी यूरोप की उत्पत्ति हैं। यह एक कल्याणकारी अनुभव है कि हमारे मध्य में एक अन्य तथा महान संस्कृति का प्रतिनिधि था जिसके कारण हम समय-समय पर अपने आधारभूत विचारों का पुनः परीक्षण कर लेते हैं। उन्होंने कुछ ऐसे परिचित विचारों को जिनके सम्बन्ध में हम अचेतन थे, नवीन दृष्टिकोण से देखने के लिए बाधित किया। हमने वास्तव में एक-दूसरे से बहुत कुछ सीखा, यद्यपि हमारे सहवास की अवधि न्यून थी। प्रौढ़ शिक्षा के अनुभव एक देश से अन्य देश में कहाँ तक उसी रूप में लागू हो सकते हैं यह जटिल प्रश्न है। परन्तु जो कार्य एक देश में सफलतापूर्वक किया जा चुका है, दूसरों के लिए भी शिक्षाप्रद हो सकता है। अतः यह आशा की जाती है कि प्रौढ़ शिक्षा के भिन्न-भिन्न क्षेत्रों में किये गए सफल प्रयोगों का विवरण सैद्धान्तिक रूप के अतिरिक्त और नवीन प्रयोगों के लिए प्रोत्साहन देता है। कदाचित् यह कहना किंचित आवश्यक नहीं है कि प्रतिवेदन के छठे भाग में, पश्चिमी यूरोप तथा अमरीका के संयुक्त राज्य के प्रौढ़-शिक्षा के कार्य-कलापों का विस्तृत व सन्तुलित विवरण करने का प्रयास नहीं किया गया। इस प्रकार के पृथक-पृथक लेखों के संग्रह में अशृंखलता का होना स्वाभाविक है।

इस प्रकार के प्रतिवेदन प्रस्तुत करने में सम्पादक का कार्य सराहनीय है पर सहज नहीं। प्रौढ़ शिक्षा द्वारा सामाजिक तथा राजनीतिक उत्तरदायित्व को दृढ़ बनाने के हेतु सामग्री तैयार करना ही इस सम्मेलन का कार्य नहीं था, यदि इसने ऐसी सामग्री का उत्पादन भी होता तो वह निःसार होता। तथापि जिन निर्णयों पर हम पहुँचे हैं उनमें अवश्य ही कुछ तत्व होगा या फिर वे अस्पष्ट व धुंधले होंगे तथा बेकार होंगे। कोई सम्पादक निष्पक्ष होने की कितनी भी चेष्टा करे, लेखों के चुनाव व उनकी व्यवस्था तथा उन पर दिये गए महत्त्व अवश्य ही उसके अपने दृष्टिकोण व विश्वासों की झलक दर्शाते हैं। मैंने अत्यधिक चेष्टा की है कि इसके अन्तर्गत पाँचों समूह में से हरेक की अधिकतम महत्त्वपूर्ण बातें आ जायँ। सम्भवतः समूहों की ही भाषा व्यवहृत की गई, पर मुझे भय है कि उसे पूर्ण रूप देने के प्रयत्न में अनजाने ही मैं उन के तर्क-वितर्क के साथ पूर्ण न्याय करने में असमर्थ होऊँ। मैं केवल यही कह सकता हूँ कि मैंने अवश्य ही भिन्न व असमान प्रतिवेदनों में एक

प्रकार का तारतम्य उत्पन्न करने का प्रयास किया है। मुझे आशा है कि मेरे निजी दृष्टि-कोण के साथ या पूर्व-निर्णीत सामान्य संस्थान के साथ मिलाने के लिए मैंने उसका विशेष रूप नहीं बिगाड़ा। लेखों के लिए न ही मैं कीर्ति का अधिकारी हूँ और न ही मेरे ऊपर उसका कोई उत्तरदायित्व है। सम्मेलन के सारे सदस्यों ने उसके लेख लिखे हैं, जो अनेक बुद्धिमानों व भिन्न-भिन्न देशों के प्रौढ़-शिक्षा-शास्त्रियों के विविध अनुभवों का प्रतिनिधित्व करते हैं।

इस सम्मेलन की प्रारम्भिक निष्कपटता से, जो सारे वाद-विवादों में दृष्टिगोचर होती है, मैं अत्यन्त प्रोत्साहित हुआ। जहाँ कहीं मतभेद थे वहाँ उनका सामना करने की इच्छा थी। भिन्न दृष्टिकोण का अध्ययन करके उसे समझने की चेष्टा थी। ऐसे सूत्रों को अस्वीकार किया गया जो मौखिक एकमत के आवरण में वास्तविक अन्तरों को छिपाए थे। परन्तु एक विषय पर कोई अन्तर या मतभेद न था—संस्था ने जो ऐसा वातावरण उत्पन्न किया कि हम इतनी उपयोगिता से विचार विनिमय कर सके उसके लिए हम सभी संस्था के ऋणी हैं। अन्तिम अधिवेशन में, सम्मेलन के सभी सदस्यों नें संचालक, प्राध्यापकमंडल, व उनके सहायकगण के प्रति धन्यवाद निवेदन किया था संस्था के भविष्य के लिए हमारी शुभ कामनाओं का मैं यहाँ लिखकर प्रतिवेदन करना चाहूँगा। मैं संस्था के लिए अपनी शुभ कामनाएँ व्यक्त करता हूँ और हमें आशा है कि पश्चिमी यूरोप के विकास में शिक्षा के महत्त्व के कारण संस्था को आगामी वर्षों में आवश्यक सहायता व रुचि प्राप्त होगी।

फ्रैंक डब्ल्यू० जैसप

ऑक्सफोर्ड, सितम्बर १९५३

पहला अध्याय

उद्घाटन भाषण

प्राध्यापक : जोहन्स नोवरूप
यूनेस्को की शिक्षा संस्था के प्रबन्ध मण्डल के अध्यक्ष

जैसा कि डॉ० थॉमसन तथा प्राध्यापक मर्क ने पहले ही कहा है कि यह संस्था एक नवीन प्रयोग है और यह सम्मेलन, जिसका कि उद्घाटन होने वाला है, संस्था का सर्वप्रथम कार्य है। आज प्रातः का सम्मेलन इसे शरीर व प्राण प्रदान करने वाले कार्यों का आरम्भ है। इस संस्था के प्रबन्ध मण्डल के एक सदस्य के नाते इस क्षण मुझे विशेष उत्तरदायित्व तथा गम्भीरता का अनुभव हो रहा है।

डॉ० थॉमसन, प्राध्यायक मर्क तथा मैं ही जानते हैं कि जहाँ तक हम अब पहुँच पाए हैं वहाँ तक पहुँचने के लिए हमें अर्थ के अतिरिक्त अन्य कितना मूल्य चुकाना पड़ा है। इसका हमें दृढ़ता से निश्चय हो गया था कि यूरोप तथा संसार की जनता को सहयोग देना सीखना चाहिए। राष्ट्रीयता से ऊपर एक संस्था की स्थापना करना ही एकमात्र मार्ग है। आप समझ सकते हैं यह क्षण हम सभी के लिए महत्त्वपूर्ण क्षण है।

हमने कुछ देशों से ३५ प्रौढ़ शिक्षकों को एक सप्ताह तक के लिए आमन्त्रित किया है ताकि आज की अत्यधिक नाजुक व विषम समस्या के सम्बन्ध में कुछ विचार-विनिमय हो सके। समस्या है—युवा व प्रौढ़ों में सामाजिक तथा राजनीतिक चैतन्य व उत्तर-दायित्व का विकास।

इस प्रथम सम्मेलन में यह एक विशिष्ट या विशेष शिक्षा सम्बन्धी समस्या नहीं है जिसके ऊपर विचार-विनिमय हो रहा है। यह हमारा अपना विकसित संसार है जिसके अन्तर्गत अनेक उलझनें व ऐसी बीसियों ज्वलन्त और प्रायः दुःखान्त समस्याएँ हैं जिनका कोई हल नहीं हो पाया।

मेरे विचार से एक शिक्षा-सम्बन्धी संस्था के लिए यह एक शुभ चिह्न है, क्योंकि बाह्य समाज ही इसकी शक्ति और उद्देश्य-प्राप्ति में सहायक हो सकता है न कि इसकी निजी प्रयोगशाला।

शिक्षा के दूसरे रूप से प्रौढ़ शिक्षा में कुछ भिन्नता है। यह विशिष्ट प्रकार के कला-कौशल व ज्ञान की शिक्षा पर ध्यान एकत्रित नहीं करती। इसके छात्र पाठशाला जाने के लिए तथा निश्चित नियम व अनुशासन के अनुसार चलने को बाधित नहीं किए जाते।

सिद्धान्त के अनुसार स्कूल के शिक्षकगण भी गम्भीर रूप धारण करके डेस्क पर नहीं बैठते। प्रौढ़ शिक्षा का स्थान जीवन की दैनिक यथार्थता के निकट है। कभी-कभी किसी की प्रौढ़-शिक्षा का केवल यही अर्थ लगाने की प्रवृत्ति होती है कि समाज के वयस्क सदस्य अन्य वयस्क सदस्यों (अध्यापकों) से भेंट करें ताकि वे अपनी रुचि में स्फूर्ति प्राप्त कर सकें अथवा वे व्यक्तिगत व समाज के सदस्य के जीवन की निजी समस्याओं की गहराई तक पहुँच सकें।

यूरोप में शताब्दियों से यह मत चला आ रहा है कि शिक्षा हमारे बालकों व युवकों को परम सत्य समझाने का एक साधन है। सत्य एक ऐसी निरपेक्ष वस्तु थी जिसे कण्ठस्थ किया जा सकता था। गिरिजा व विश्व-विद्यालय संस्कृति के आलय थे और यह उन्हीं पर निर्भर था कि वे जितने भी सामान्य मनुष्यों को लैटिन व ग्रीक, वैज्ञानिक, धार्मिक सत्य के उच्च क्षेत्रों तक पहुँचा सकते हैं पहुँचाएँ। संस्कृति और जनता के दैनिक जीवन के मध्य एक खाई थी, एक अथाह गड्ढ़ा था।

कुछ दर्शकों से इस पुरातन तथा दृढ़ परिपाटी की ओर हमारी प्रतिक्रिया हुई है। प्रथम विश्व-युद्ध के पश्चात् १० वर्ष तक यह प्रतिक्रिया अत्यन्त तीव्र थी तथा कभी-कभी कुछ अप्रभावित भी। परन्तु शीघ्र ही हमारी प्रतिक्रिया का अनुसरण करने वाली प्रतिक्रिया का हमें सामना करना पड़ा। प्रामाणिकता की पुरातन परिपाटी को नाज़ीवाद व साम्यवाद ने पुनः स्थापित कर दिया। अध्यापक एक बार फिर निश्चित आदर्श-पालक बन गया। उससे यह आशा की जाती थी कि वह अपने छात्रों को एक निश्चित संस्थापन के अनुसार ढाले। यहाँ तक कि प्रजातान्त्रिक देशों में भी यह प्रतिक्रिया हुई।

प्रौढ़-शिक्षा का मूल प्राथमिक व माध्यमिक शिक्षा के मूल से बिलकुल भिन्न है। जबकि प्राथमिक व माध्यमिक शिक्षा का सहस्रों वर्षों से गिरिजा तथा राजनीतिक क्षेत्र में प्रभुत्व और अधिकार से सम्बन्ध रहा है। प्रौढ़-शिक्षा प्रजातन्त्र का यथार्थ उत्पादन है। अथवा स्कैंडीनेविया के विकास को सोचते हुए मुझे कहना चाहिए कि वह प्रजातन्त्र तथा ईसाईयों द्वारा मनुष्य जाति की सेवा का फल है। आरम्भ से ही यह गिरिजा व राजनीतिक दृढ़ता, प्रभुत्व व संस्कृति के उस संस्थापन के विरुद्ध, जिसके अनुसार मनुष्य जाति सभ्य व असभ्य अर्थात् जानवरों में विभक्त हो गई थी, यह एक विद्रोह था। सौ वर्ष से अधिक हुए, डेन्मार्क में, ग्रुन्तविग ने मानव वैभव के इस भयानक उल्लंघन पर प्रबल आक्रमण किया। पूर्णतः नवीन पाठाशाएँ, जनता विश्वविद्यालय प्रौढ़-शिक्षा को चाहिए कि वे धनी व निर्धन, ऊँच तथा नीच, ज्ञानी व अज्ञानी के मध्य की खाई को पाट दें और इस प्रकार परिवर्तन को कृत्रिम व प्रजातन्त्र को सम्भव बना दें। जनता विश्वविद्यालय, जिन्हें वास्तव में लोग उच्च विद्यालय कहते थे, को चाहिए कि वह सामान्य आदमी को केवल बुद्धि और ज्ञान न दें,

पर उस सामान्य मनुष्य के दैनिक जीवन व उसकी समस्याओं को भी विश्वविद्यालय में लाएँ। उन समस्याओं को दैनिक वास्तविकता से देखें, उन्हें नवीन बनाएँ तथा उनका नव-निर्माण करें। लोक उच्च विद्यालय ही जनता और नव-संस्कृति निर्माण करने वाले बुद्धि-मानों के मध्य की कड़ी होनी चाहिए, जिससे ऊँच-नीच सब एक हो जाय, एक यथार्थ लौकिक सभ्यता।

दोनों विश्व-युद्धों की अन्तरावधि में प्रौढ़-शिक्षा में एक परिवर्द्धक रुचि पाई गई। द्वितीय विश्व-युद्ध के अन्त में यूरोप युद्ध और आयुधों के कारण निर्जन व नष्ट हो चुका था। मनोवैज्ञानिक तथा आध्यात्मिक मूल का विनाश हो गया था। भूख और मकानात की दुखद अवस्था के कारण शारीरिक दशा शोचनीय हो गई थी। आर्थिक दशा खोखली हो गई या सर्वस्व लुट गया था। मुझे यदा-कदा आश्चर्य होता था कि ऐसी दशा में क्या यूरोप इतना साहस और धन एकत्र कर सकेगा कि प्रौढ़-शिक्षा के कार्यों में यह फिर से रुचि उत्पन्न कर सके जैसा कि इसने १९३९ से पहले प्रदर्शित की थी।

किन्तु शीघ्र ही मुझे विश्वास हो गया कि अनेक देशों में प्रौढ़-शिक्षा का प्रयास तीव्र हो जायगा। मैं उसे सिद्ध करने का प्रयत्न नहीं करूँगा। यह एक दीर्घ-कथा हो जायगी, परन्तु मैं निश्चिन्त हूँ कि हम नूतन शिक्षा के विकास के मध्य में हैं जो हमारे भविष्य के लिए विशेष उपकारी व महत्वपूर्ण होगा।

१८वीं शताब्दी की अवधि में यूरोप के अधिकतम देश ७ और १४ वर्ष की अवस्था के बालकों के हेतु प्राथमिक पाठशाला पद्धति स्थापित करने में सफल हुए। उन्होंने प्राथमिक पाठशाला और व्याकरण या लेटिन—पाठशाला जो विश्वविद्यालय तक पहुँचते थे, व प्राथमिक पाठशाला के मध्य कड़ी के रूप में माध्यमिक पाठशालाएँ स्थापित कीं। १९वीं शताब्दी में, प्रावैधिक, व्यापार या व्यवसाय-सम्बन्धी पाठशालाओं की पद्धति का निर्माण किया जिसका विस्तार दूर-दूर तक हुआ। मुझे यह आभास होता है कि आज से सौ वर्ष पश्चात् शिक्षकगण २०वीं शताब्दी के उत्तर भाग के यही लक्षण उल्लेख करेंगे कि इस काल में प्रौढ़-शिक्षा सैकड़ों विभिन्न प्रणाली द्वारा, यौवनावस्था को प्राप्त हुई तथा निरन्तर पुरातन शिक्षा पद्धति को प्रभावित व परिवर्तित करती रही।

निःसन्देह, यह आशावाद का बाहुल्य हो सकता है परन्तु मेरे लिए यथार्थ महत्वपूर्ण बात इस विचार पर भार देना है कि हम प्रौढ़-शिक्षा सम्बन्धी शिक्षा आन्दोलन की समाप्ति पर नहीं परन्तु आरम्भ में स्थित हैं। कुछ नवीन होने वाला है। इस प्रविधि, विश्राम, जनता (कभी-कभी इन्हें नवीन असभ्य भी कहते हैं) के युग में शिक्षा की नवीन आवश्यकता स्पष्ट हैं। जिस प्रकार प्रजातन्त्र के संकट के समय ने समान समस्या के प्रति चक्षु खोल दिए।

मैं प्रौढ़-शिक्षा के कुछ सिद्धान्तों को आपके सामने रखता हूँ। प्रौढ़-शिक्षा व्यावसायिक शिक्षा नहीं है। इसका उद्देश्य अपने विद्यार्थियों को जीवन में उत्तम आरम्भ, व एक नूतन पद देने का नहीं है। सैद्धान्तिक रूप से तो प्रौढ़-शिक्षा उनके लिए है जो जीवन में पहले ही काम-धन्धा प्राप्त कर चुके हैं। मानव जाति सदा ही प्रगति की ओर अग्रसर नहीं होती; प्रायः सभी को क्लर्क, कर्मचारी, किसान व मछुए बनकर जीवन काटना है। उनके लिए भी पाठशालाएँ क्यों न खोली जायँ, कर्मचारियों की हैसियत से नहीं, अपितु मानव जाति की तरह। अब हमारे समक्ष एक मौलिक, लगभग पूर्व परिणत शिक्षा का विचार है कि हमें उनके लिए पाठशालाएँ खोलनी चाहिए जो वहीं स्थिर रहेंगी जहाँ कि अब वे स्थित हैं।

दूसरे, प्रौढ़-शिक्षा पूर्णतः स्वेच्छाकृत होनी चाहिए। विद्यार्थियों को न ही उनके माता-पिता भेजते हैं और न ही उनको सरकार जाने के लिए बाधित करती है। वे अपनी स्वेच्छा से आते हैं। जब इच्छा हो छोड़कर जा सकते हैं, सम्भवतः वे हमारी कक्षा में आने के लिए स्वयं ही शुल्क भी देते हैं। हम उनके अधिकारी नहीं हैं। विद्यार्थी और शिक्षक हम सभी एक-दूसरे के समान हैं, प्रौढ़ अन्य प्रौढ़ों के साथ सम्पर्क रखते हैं। प्रौढ़ शिक्षा के अन्तर्गत एक जैसों के मध्य परस्पर स्वतन्त्र सम्बन्ध रहता है।

जनता प्रौढ़-शिक्षा में क्यों जाती है ? इसके अनेक उत्तर दिए जा सकते हैं। परन्तु मैं केवल दो उत्तर तक ही सीमित रखूँगा।

प्रथम, इस प्रविधि व यन्त्रीकरण के युग में सहस्रों मनुष्यों को अपने अवकाश का लाभ उठाकर मानव बनना पड़ेगा। जो साधारणतः उनके लिए आवश्यक है वह नवीन ज्ञान नहीं बल्कि रचनात्मक व सुप्त योग्यताओं को जागृत करना है, व्यक्तित्व का विकास करना है। जो उनकी प्राथमिक आवश्यकता है वह नूतन पाठशालाओं की नहीं अपितु जीवन के नवीन रूप की जो उन्हें जीवन के मूल्य का अनुभव कराए।

द्वितीय, लोकतन्त्र के युग में, जहाँ प्रत्येक व्यक्ति को सामाजिक व राजनीतिक मामलों में सह-उत्तरदायित्व अनुभव करना चाहिए, प्राथमिक पाठशालाएँ पर्याप्त नहीं हैं। कारण कि बालक व युवक इतने परिपक्व नहीं हैं कि वे इस प्रकार के मामले बुद्धिमत्ता तथा स्वेच्छापूर्वक हाथ में ले सकें। आधुनिक समाज की उलझनों को समझाने के लिए ही प्रौढ़-शिक्षा आवश्यक है। इसलिए भी आवश्यक है कि साहित्य, कला व विभाजन का मूल्य समझ सकें और जीवन में उद्देश्य और लक्ष्य निर्धारित करें। आज ऐसे बीसियों प्रौढ़ हैं जो यह आवश्यकता समझते हैं कि वे इस मूल्य और विचारों के संसार से परिचित कराए जायँ। बिना किसी सहायता और पाठशाला के वे मूल्य और विचारों के इस संसार को

भेदने में असमर्थ हैं। उन्हें एक ऐसे स्थान की आवश्यकता है जो अपनी रुचि के स्त्री-पुरुषों से भेंट कर सकें। और ऐसे अध्यापक उन्हें मिलें जो मेज कुर्सी वाला अध्यापक न हो परन्तु ऐसे मानवों से भेंट हों जिनका उनके विषय, कविता, इतिहास, सामाजिक विज्ञान व दर्शन-शास्त्र के साथ व्यक्तिगत सम्पर्क हो।

दूसरे शब्दों में, इस समूह के जीवन को नये रूप की आवश्यकता है, ऐसी पाठ-शालाओं की नहीं जहाँ उन्हें इसकी शिक्षा दी जाती है कि क्या करें और क्या विचार करें। परन्तु उन्हें ऐसे स्थान की आवश्यकता है जहाँ वे बाहर की अपेक्षा अधिक मात्रा में अपनी रुचि के कार्य कर सकें तथा अन्य प्रौढ़ों के साथ अपने अनुभवों का आदान-प्रदान कर सकें।

क्लब तथा सामुदायिक केन्द्र, संध्याकालीन मनोरंजनार्थ संस्थाएँ, रुचि-पूर्ति सुवि-धाओं को स्थापित करने के लिए वर्तमान आन्दोलन उपर्युक्त प्रथम समूह के अनुरूप है। मेरे विचार से वह उतना ही मूल्यवान है जितना उदाहरण स्वरूप आवासिक विद्यालय के प्रस्थापन का आन्दोलन जो उपरोक्त द्वितीय समूह के अनुरूप है। कुछ के लिए आवासिक विद्यालय आवश्यक हैं और कुछ के लिए क्लब व सामुदायिक केन्द्र।

कुछ अंश को निम्न व महान् उल्लेख किए बिना ही प्रौढ़-शिक्षा को हम एक पूर्ण रूप मान लें। अपने औद्योगिक नगरों और कुछ पृथक् ग्रामों तक पहुँचने का विशाल कार्य हमारे समक्ष है। सब उपायों व साधनों का अपने-अपने स्थान पर कुछ-न-कुछ मूल्य है।

यह कह कर, स्कैन्डीनेविया के प्रौढ़-शिक्षा के मुख्य अंश के सम्बन्ध में कुछ चर्चा कर के, यह लघु भूमिका समाप्त करना चाहता हूँ। सौ वर्ष से अधिक व्यतीत हुए हमने और उसके पश्चात् ही अन्य स्कैन्डीनेविया के देशों ने प्रौढ़-शिक्षा का विशेष आन्दोलन आरम्भ किया। हमारे सारे देश में जनता कॉलिज तथा लोक उच्च विद्यालय स्थापित किए गए।

इस आन्दोलन के पीछे हम पर्याप्त प्रतिभाशाली पादरी ग्रुन्तविग से भेंट करते हैं जो वास्तव में पादरी नहीं थे, अपितु एक गिरिजा के मिनिस्टर, एक कवि और महान इतिहासवेत्ता थे। १८३० में उन्हें विश्वास हो गया था कि लोकतन्त्र युवावस्था को प्राप्त होने वाला था चाहे हम उसे पसन्द करें चाहे न करें। श्रंखलित पुस्तकों में उन्होंने एक नव-पाठशाला के विचार प्रगट किए हैं प्रौढ़ों की पाठशाला—जिसका उद्देश्य होगा अपने छात्रों के जीवन को प्रेरित तथा जागृत करना, उनके हित के लिए सोचना जिससे लोकतन्त्र राज्य के सच्चे व उत्तरदायी नागरिक बन जायँ। वे आवासिक कॉलिज में एकत्रित हो जाएँ, (ऑक्सफोर्ड और कैम्ब्रिज ने ग्रुन्तविग के ऊपर गहन प्रभाव डाला है), विद्यार्थी व अध्यापकों को स्वतन्त्र व बिना किसी नियम के परस्पर सम्पर्क में आना चाहिए। इतिहास और देश की वर्तमान परिस्थिति ही मुख्य विषय होने चाहिए। परन्तु यह शिक्षा शुष्क

अध्यापकों द्वारा या पुस्तकों को उच्च स्वर से पढ़कर नहीं होनी चाहिए। परन्तु समाज और जनता के जीवन के एक अंग रूप पुरुषों और स्त्रियों द्वारा यह शिक्षा होनी चाहिए। आदान-प्रदान के सरल और अनियमित विधि से यह शिक्षा होनी चाहिए। अवस्था प्राप्त छात्रों के साथ वाद विवाद करके अध्यापक विद्यार्थी के समान कुछ सीख सकता है। गृह व समाज के यथार्थ जीवन असम्बन्धित ज्ञान प्रदान करने की मन्द व श्रान्ति उत्पादक विधि की अपेक्षा शिक्षा हर्षप्रद, आनन्दमय उत्सव प्रेरक व प्रोत्साहक कार्य होना चाहिए।

मैं इस प्रकार के कालिजों को स्कैन्डीनेविया की प्रौढ़ शिक्षा का मुकुट मानूँगा। ये वे स्थान हैं जहाँ छात्रगण ५-६ मास तक मैत्री पूर्वक रहते हैं। इस अवधि में वे वहाँ के निवासियों का, यूरोप की संस्कृति के विकास का व मनुष्य जीवन का अध्ययन करते हैं। यह अध्ययन सब अध्यापक व विद्यार्थी के साथ रहकर उत्पन्न हुए वातावरण में होता है जहाँ दोनों को अपनी रुचि के विषयों पर ध्यान एकत्रित करने की स्वतन्त्रता हो। यद्यपि राज्य-विद्यालय व विद्यार्थी दोनों की ही सहायता करता है तथापि वह विद्यालय के दैनिक जीवन व शिक्षा में विघ्न नहीं डालता।

नागरिकता की सामाजिक राजनीतिक व सांस्कृतिक विकास के लिए क्या शिक्षा होनी चाहिए यह ग्रुन्तविग व लोक उच्च विद्यालय के प्रथम अध्यक्ष ने स्पष्टरूप तथा आधुनिक शब्दों में कहा :

लोक उच्च विद्यालय को धर्मोन्मत्त के पोषण की अपेक्षा जागृत पुण्यात्मा नागरिक उत्पन्न करने चाहिए। छात्रों को यथार्थ परिस्थितियों के जिनने वास्तविक स्वरूप प्रदर्शित कर सकें करें। भिन्न भिन्न धारणाओं की ओर उनके पक्ष में व उनके विरुद्ध विशेष तर्कों की ओर उनका ध्यान आकर्षित करना चाहिए। वर्तमान समस्याओं की ओर उनकी चेतनता को जागृत करने का प्रयत्न करना चाहिए। छात्रों की मानसिक व मेधावी शक्तियों का विकास करना चाहिए ताकि उन समस्याओं को हल करने की रुचि उत्पन्न हो, उन समस्याओं को वे ठीक से समझ सकें, परन्तु स्वयं हल नहीं बताने चाहिए। तभी उनके मस्तिष्क वास्तव में उनके निजी हो पाएँगे, केवल इसी प्रकार वे स्वतन्त्र व क्रियाशील नागरिक का जीवन व्यतीत करने में समर्थ हो सकेंगे।" ("डेन्मार्क में प्रौढ़-शिक्षा" से लिया हुआ)

इस भूमिका को समाप्त करते समय क्या मैं एक और विचार प्रगट कर सकता हूँ जो कि मेरे विचार से इस स्थान हैमबर्ग में यूनेस्को की अन्तर्राष्ट्रीय संस्था में उपयुक्त होगा। अधिकतम यूरोप के देशों में प्राथमिक शिक्षा राष्ट्रीय भावना व उत्साह से प्रेरित व प्रभावित हुई थी जो कि १९वीं व २०वीं शताब्दी के प्रथम भाग का विशेष गुण रहा है।

प्रौढ़-शिक्षा २०वीं शताब्दी की उत्पत्ति है। अनेक देशों में यह कार्य अभी आरम्भ किया गया है।

क्या मैं यह आशा व्यक्त कर सकता हूँ कि शेष २०वीं शताब्दी में प्रौढ़ शिक्षा अपने वर्तमान क्षेत्र से कहीं दूर तक विस्तार कर जायगी और यह ऐसी भावना से प्रभावित हो जायगी जिसकी आजकल सर्वाधिक आवश्यकता है—राष्ट्रों में परस्पर समझौते की भावना तथा सहयोग देने की इच्छा।

युद्ध-समाप्ति से अब तक विभिन्न देशों के प्रौढ़ शिक्षकों में अनेक नवीन सम्पर्क स्थापित किये गए हैं। प्रौढ़ शिक्षकों के मध्य एक प्रकार का अन्तर्राष्ट्रीय भ्रातृत्व कुछ मात्रा तक विद्यमान है। भविष्य के लिए यह महान् प्रगति का प्रतीक है। यह हमारी हार्दिक आशा है कि आगामी कुछ वर्षों की अवधि में यह संस्था लगभग बिखरे हुए प्रयत्नों के केन्द्र का कार्य करेगी। यूरोप की प्रौढ़-शिक्षा को वास्तविक सहायता प्रदान करेगी।

दूसरा अध्याय

फ्राँस में प्रौढ़ शिक्षा

एम० पौल लैन्ग्रान्ड
शिक्षा विभाग यूनेस्को, पेरिस

अपने व्याख्यान से पूर्व मुझे एक विख्यापन करना चाहिए। अन्तर्राष्ट्रीय संस्था की चार वर्ष सेवा करने के पश्चात् मैं एक प्रकार का मिश्रण बन गया हूँ, अन्तर्राष्ट्रीय जाति के नागरिक का व एक विशेष राष्ट्र का सदस्य होने के कारण एक विचित्र-सा सम्मिश्रण हो गया हूँ। जब इस संस्था के प्रशासन ने मुझसे अपने देश फ्रान्स में प्रौढ़-शिक्षा की स्थिति के सम्बन्ध में वक्तव्य देने को कहा तब मैं इस परिवर्तन के सम्बन्ध में चेतन था। मुझे यह प्रतीत हुआ कि समस्या के सम्बन्ध में कभी मुझे फ्रान्स की धारणा थी व कभी विदेशी धारणा। मैं निश्चित रूप से नहीं बता सकता कि मेरे व्याख्यान में कौन-सा दृष्टिकोण किस मात्रा में रहेगा। फिर भी यह निश्चित है कि मेरा विश्लेषण तथा व्याख्यान, शैक्षिक क्षेत्र में यथार्थ कार्यकर्ता फ्रांस के शिक्षक के व्याख्यान से बहुत भिन्न होगा।

कुछ प्रश्न जो मेरे अन्दर उठते हैं और जो निःसन्देह आपने भी पहले विचारे होंगे, मैं अपने व्याख्यान को उन्हीं प्रश्नों के उत्तरस्वरूप समझूँगा। प्रथम प्रश्न हैं—फ्रान्स के ढाँचे और जीवन में प्रौढ़ शिक्षा का महत्व एवं कार्य क्या होगा? यह एक ऐसा मौलिक प्रश्न है जो समस्त शैक्षिक कार्यों के सम्बन्ध में पूछा जाना चाहिए। किसी देश का जीवन उसकी शिक्षा-व्यवस्था से किस सीमा तक प्रभावित होता है? शैक्षिक कार्य-कलापों से देश का ढाँचा या व्यक्ति विशेष की अथवा सामूहिक स्थिति कहाँ तक परिवर्तित होती है? इस प्रकार जो शिक्षा बालकों तथा युवकों को प्राथमिक, माध्यमिक पाठशालाओं तथा विश्व-विद्यालयों में दी जाती है, उसका कार्य व मूल्य आंकना सम्भव हो सकेगा। इस प्रश्न का जो उत्तर होगा, वही उत्तर प्रौढ़-शिक्षा का उचित मूल्य आँकने में अन्तिम निर्णय दे सकेगा।

यदि आप उन संस्थाओं के कार्यों का अध्ययन करें जो वास्तविक प्रौढ़ शिक्षा तक ही अपने कार्य को सीमित रखती हैं तो प्रस्तुत उत्तर उत्साह नाशक हैं। मुझे विश्वास है कि मेरे फ्रान्स के सहकारी मेरी बात नहीं काटेंगे यदि मैं कहूँ कि प्रौढ़-शिक्षा में विशेषता प्राप्त करने वाली संस्थाओं से प्रभावित व्यक्तियों की संख्या तुलना में अल्प है। हमें यह स्वीकार करना चाहिए कि १० वर्ष कार्य करने के पश्चात् अधिकतम स्त्री-पुरुष प्रौढ़-शिक्षा

से दूर ही हैं। प्रचलित विश्वविद्यालय में, सन्ध्याकालीन कक्षा में जो भाग लेते हैं, अथवा जो अपना अवकाश का समय किसी क्लब में व्यतीत करते हैं, किंवा जो किसी चलते-फिरते कॉलिज में समाज प्रशिक्षण ग्रहण करते हैं उनकी संख्या अल्प है।

फ्रान्सीसियों के चरित्र में कोई ऐसी बात खोजनी कठिन होगी जो प्रौढ़-शिक्षा द्वारा प्रभावित हुई हो। यह उतनी ही असम्भव है जितनी किसी सामाजिक अथवा राजनीतिक परिणामवाद किंवा सार्वजनिक-मत-आन्दोलन का नाम लेना जिसकी उत्पत्ति इस प्रकार के कार्य-कलापों में रही हो।

फ्रान्स की प्रौढ़-शिक्षा के परिणाम अन्य देशों की प्रौढ़-शिक्षा के परिणामों की तुलना में कहीं पीछे हैं। फ्रांस की अपेक्षा अन्य देशों में इस आन्दोलन की नींव कहीं अधिक गहन है, उदाहरणार्थ इंगलैंड व संयुक्त राज्य में। गत रात्रि को ही मैं अपने अंग्रेज़ मित्र से इस समस्या के सम्बन्ध में विचार-विमर्श कर रहा था। उन्होंने इस विचार की पुष्टि की कि उनके देश में प्रौढ़-शिक्षा ने ब्रिटेन के राष्ट्रीय जीवन को तीव्रता से प्रभावित किया है। यह स्कैन्डीनेविया के देशों में भी सत्य है. जहाँ लोक उच्च विद्यालय के कार्यों के कारण देश का ढाँचा निश्चित रूप से परिणत हुआ है। डेन्मार्क व स्वीडन में प्रौढ़-शिक्षा की विभिन्न संस्थाओं के कार्यों की बिना गणना किये डेन्मार्क व स्वीडन की जनता को नहीं समझा जा सकता।

जैसा कि आपने देखा इन प्रारम्भिक प्रश्नों के उत्तर उत्साहवर्धक नहीं हैं। क्या इसका अर्थ है कि फ्रान्स में प्रौढ़-शिक्षा ही नहीं है? नहीं, इस प्रकार का उत्कर्ष पूर्णतः अनुचित होगा।

विदेशी अभ्यागत प्रायः फ्रान्स की जनता के सांस्कृतिक जीवन के तुलनात्मक उच्च स्तर से प्रभावित हैं। जीवनमय प्रतिक्रिया की, भाव-अभिव्यक्ति की योग्यता, वाद-विवाद की सरलता तथा राजनीतिक व जीवन की सामान्य समस्याओं के सम्बन्ध में बहुधा मौलिक विचार विदेशी अभ्यागतों को प्रभावित करते हैं। उनको कोई सहज ही निष्क्रिय कहकर दोषी नहीं ठहरा सकता। अन्य जनता की अपेक्षा उनमें सम्भवतः कम अधिसत्व है। उन्हें निजी मेधावी साधन पूर्णता, निर्णय तथा विचारशक्ति में अधिक विश्वास है। फिर फ्रांस में, क्रियाशील कर्ताओं के पास शक्तिशाली, सामाजिक तथा बौद्धिक उपकरण उपलब्ध होते हैं, चाहे वे समाजवादी हों या ईसाई या साम्यवादी। उन्हें आर्थिक समस्याओं, सामाजिक जीवन तथा राष्ट्रीय व अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति के विभिन्न पक्षों का भली-भाँति ज्ञान है।

इस स्थिति में पहुँचने में सहायक कारण का ज्ञान होने के लिए फ्रान्स की जनता का सामाजिक एवं बौद्धिक विकास के पूर्व इतिहास का अध्ययन करना पड़ेगा। परन्तु

तत्क्षण इस संस्कृति के कुछ विशेष पहलू दृष्टिगोचर होते हैं जो निश्चित रूप से महत्वपूर्ण प्रगट होते हैं। प्रथम तो सामाजिक चैतन्य का उच्च स्तर है। यह कैसे सम्भव हुआ कि प्रौढ़-संस्थाओं के तुलनात्मक पञ्चायन के उपरान्त भी सांस्कृतिक जीवन का स्तर उच्च है। नियमानुसार फ्रान्स का निवासी अत्यधिक सामाजिक है। वह अन्य निवासियों से सम्पर्क, विनिमय व वार्त्तालाप के अवसर खोजता रहता है। वह निजी विचारों व भावों को व्यक्त करने तथा उनकी दूसरों के साथ तुलना करने के अवसर की टोह में रहता है। बिचार, दृष्टिकोण का यह आदान-प्रदान विविध वातावरण व स्थानों में होता रहता है। जैसे भोजनालय, बस, आहार के समय, फैक्टरी, रेस्तोराँ, परिवार के आनन्द-दिवस तथा सभाओं में, जिन्हें कभी फ्रान्स के इस जीवन के साथ परिचय-प्राप्ति का सुअवसर प्राप्त हुआ हो, उन्होंने ऐसे अवसरों पर बहुधा रीजनीति व सरकार पर मौलिक विचार सुने हैं। यह स्वीकार करना होगा कि सरकार की धारणा अकृत्रिम व सरल है। यह धारणा एक अस्पष्ट सूत्र 'वे' में समाई हुई है जिसके अन्तर्गत गणराज्य का राष्ट्रपति, संसद सदस्य तथा पुलिस सभी आ जाते हैं। एक बात और भी है, फ्रान्स की जनता के लिए सरकार एक आदरणीय वस्तु नहीं है, परन्तु नागरिकों द्वारा सदा समालोचना व गुण-दोष के विवेचन तथा निर्णय की पात्र है। विदेशी जनता की विशेषताओं का भी निरन्तर परीक्षण होता रहता है। ब्रिटेन, जरमनी, स्पेन व इटली की विशेषताओं तथा उनकी रीति-रिवाजों की परस्पर तुलना की जाती है। निःसन्देह, विवाह, स्त्री-पुरुष, पिता-पुत्र, सामाजिक सम्बन्ध व सामाजिक संस्थानों के विषय में अनन्त वाद-विवाद होता रहता है।

हम इन विचारों तथा दृष्टिकोणों का मूल्यांकन किस प्रकार करें ? आरम्भ करने के लिए हमें इस तत्व के महत्त्व को समझना चाहिए कि इस प्रकार का विनिमय होता है। इस प्रकार वैयक्तिक तथा सामूहिक विचार विनिमय होता रहता है जो देश के सांस्कृतिक जीवन हेतु अत्यन्त महत्त्वपूर्ण हैं। जो किसी मूल्यांकन का साहसपूर्ण कार्य करता है उसे यह स्वीकार करना चाहिए कि इस प्रकार के वाद-विवाद तथा विचार-विनिमय सदैव ही विशेष उच्च स्तर के नहीं होते। अधिकतया, दूसरों के दृष्टिकोण को समझने तथा उसके अपने अनुभव से भिन्न अन्य किसी के अनुभव से शिक्षा प्राप्त करने की अपेक्षा फ्रांस निवासी अपने निजी विचारों को दृढ़तापूर्वक स्थापित करना और उन्हें अन्य किसी पर थोपना चाहता है। इस प्रकार के विचार-विनिमय तथा वाद-विवाद प्रायः निषेधात्मक और नियम विरोधी होते हैं। फ्रांस निवासी प्रायः सत्ता की आलोचना तक ही सीमित रहता है। परन्तु जहाँ तक फ्रांस की जनता राजतान्त्रिक शासन-पद्धति को सहन करना असम्भव बनाता है, अधिकारियों के हेतु यह अवरोध शैक्षिक मूल्य का है। फिर भी यह निषेधात्मक पहलू अपूर्ण है। इसको

पूर्ण बनाने के लिए स्पष्ट क्रियात्मक मार्ग अपेक्षित है जो वाद-विवाद व विचार-विनिमय को एकत्रित कर उन्हें सामाजिक, राजनीतिक तथा सांस्कृतिक जीवन के पहलुओं के अनुसन्धान के लिए उपयुक्त आधार की भाँति व्यवहार में लाए। यह कहने की आवश्यकता और है कि अध्ययन-केन्द्रों के शैक्षिक कार्य का अधिकांश भाग फ्रांस में निरन्तर विचार विनिमय तथा अनुभवों के आदान-प्रदान द्वारा सम्पन्न किया जाता है। ये लेटिन देशों के नैसर्गिक सामाजिकता के अंश हैं।

फ्रांस में प्रौढ़ शिक्षा संस्थाओं में रुचि का इतना अभाव क्यों है इसका कारण फ्रांस की जनता की द्वितीय विशेषता है। विशेषता यह है कि वहाँ अन्य लेटिन देशों की भांति शिक्षा की अपेक्षा राजनीति का अधिक मूल्य है। जब कभी जीवन स्तर के सुधार का प्रश्न उठता है। फ्रांस निवासी राजनीतिक शक्ति व संस्थाओं के उलट-फेर के सम्बन्ध में विचारता है, व्यक्तिगत जीवन के परिवर्तन के विषय में नहीं। यहाँ यह स्पष्ट विरोध है। मैं यह निश्चित रूप से नहीं कह सकता कि तत्कालीन शासन शक्ति में अविश्वास होना ही इस प्रवृत्ति का कारण है या प्रभाव। राजनीतिक उथल-पुथल या धोखे के कारण, भ्रमजाल से मुक्ति तथा मनुष्य-द्वेषी सिद्धान्त के परिवर्तन काल की अवधि के अतिरिक्त यह कहना अनुचित न होगा कि अधिकतर फ्रांसीसी सरकार के परिवर्तन यहाँ तक कि सत्ता के परिवर्तन से भी फ्रांसीसी अपनी समस्याओं के समाधान की आशा करते हैं। यहाँ हमें राजनीतिक कार्य की सुविधा प्राप्त स्थिति का ध्यान रखना चाहिए जोकि कार्मिक संघ और साम्प्रदायिक संगठनों के प्रतिनिधियों के द्वारा प्रौढ़ शिक्षा में एक महत्त्वपूर्ण कार्य करती है। वाम पक्ष की चरम सीमा पर साम्यवादी दल हैं। इसमें कई दल तथा संगठन संयुक्त हैं, उदाहरणार्थ मजदूर संघ, सांस्कृतिक संगठन इत्यादि तथा कुछ सीमा तक समाजवादी संघ। दूसरी ओर ईसाई दृष्टिकोण वाले समूह हैं जोकि धार्मिक व राजनीतिक दोनों ही क्षेत्रों में समान रूप से सक्रिय हैं। राजनीतिक व साम्प्रदायिक संगठन अल्पसंख्यक को प्रभावित करते हैं जोकि शक्तिशाली हैं। उनके महत्त्व को कम नहीं आँकना चाहिए। निस्संदेह यह प्रभाव पक्षातीति नहीं है। यह अवश्य ही शक्ति प्राप्ति की ओर लगा है। प्रत्येक प्राणी उनके शिक्षात्मक कार्य के मूल्य का निर्णय निजी सिद्धान्तों व साधनों के औचित्य के अनुसार करता है। यह भी अस्वीकार नहीं किया जा सकता कि दलों के कार्य का एक पहलू शिक्षा के विरुद्ध हैं। उनकी क्रिया प्रायः पूर्व ग्रहों, एक पक्षता तथा नारों को प्रोत्साहित करती है। यह विरोधी की घृणा उभारती है। परिणामस्वरूप मस्तिष्क निरुद्योगी हो जाता है और समस्याओं के सम्बन्ध में विचारने की अपेक्षा अधिकारियों के वक्तव्य को दुहराते रहते हैं। दूसरी ओर यह स्वीकार

करना चाहिए कि प्रौढ़ शिक्षा के उद्देश्य का अधिकाँश भाग इन्हीं कार्यकलापों द्वारा सम्पन्न होता है।

मजदूर संघों, दलों व साम्प्रदायिक विशिष्ट जातियों के संगठनों की अधिकारों के लिए झगड़ने की प्रवृत्ति मनुष्य को एकाकीपन से बचाती है। यह उन्हें उस निराशा से छुटकारा दिलाती हैं जो ऐसे आधुनिक नगरों में उत्पन्न हो जाती है जहाँ मनुष्य अपने साथियों से पृथक व्यक्ति की भाँति रहता है, या एक असंगठित वस्तु में एक अणु। यह उन्हें कुछ संगठनों तक पहुँचाती है और उन सभी से मिलाती है जो उन्हीं की भाँति समान कार्य में भाग ले रहे हों। ऐसे मनुष्यों का बन्धन कसता जाता है जो एक-दूसरे को पहचानने व समझने लगते हैं तथा जिनमें परस्पर आदर की वृद्धि होती है। व्यक्ति क्रिया व अभिव्यक्ति के साधन प्राप्त करते हैं जिनके सम्बन्ध में उन्हें पूर्व केवल अस्पष्ट धारणा थी। उसमें आत्म-विश्वास उत्पन्न हो जाता है और साथ ही वह अपने साथियों में विश्वास अनुभव करने लगता है। ये कार्य-कलाप उन युवकों के बौद्धिक विकास में अनेक सहायता करते हैं जिनकी मानसिक शक्तियाँ चौदह-पन्द्रह वर्ष की आयु में विद्यालय छोड़ देने के कारण उचित अवसर के अभाव में बेकार पड़ी थीं। इस प्रकार एक श्रावक की नेक प्रवृत्तियाँ जागृत हो उठती हैं। उसके मानसिक व चरित्र लक्षण, उसका अचूक व विस्तृत ज्ञान विरोधियों को भी आश्चर्यचकित कर देते हैं। उनके आचरण भी विचार के उपयुक्त हैं। कुछ व्यक्तियों में राजनीतिक कार्यों में भी भाग लेने से कुछ शुद्धता आ जाती है। आत्म-केन्द्रित होने के कारण उनके विकास में बाधा नहीं पड़ती तथा वे सामाजिक व पारिवारिक उलझनों से मुक्त हो जाते हैं। ये परिणाम अति महत्त्वपूर्ण हैं। कम-से-कम फ्रांस में तो राजनीतिक कार्य, या सामाजिक व राजनीतिक उत्तरदायित्व तक पहुँच होने से ऐसे मार्ग खुल जाते हैं जिनके द्वारा उनके व्यक्तित्व का विकास होता है और वास्तविक प्रौढ़ हो जाते हैं। पूर्णता का आभास देने वाली किसी भी शिक्षा के विवरण में यह बात भली-भाँति प्रकाश में आनी चाहिए। फिर भी प्रौढ़ शिक्षा आन्दोलन के द्वारा सम्पन्न किये रोचक कार्यों का सही मूल्य न आँकना अन्याय होगा। यह आन्दोलन १८९० ड्रेफस केस के समय से आरम्भ हुआ। जैसा कि आप जानते हैं फ्रांस के सामाजिक विकास में ड्रेफस का मामला अत्यन्त महत्त्वपूर्ण रहा है। इसने नाटकीय ढंग से अधिकारियों, राजनीतिक शक्तियों तथा न्याय की अनेक समस्याओं का एक साथ अनावरण किया। परिणामस्वरूप, नवीन सामाजिक वर्गों की राजनीतिक उत्तर-दायित्व तक पहुँच हो गई। ड्रेफस के मामले की अवधि में, अनेक विज्ञ, अध्यापकों तथा वैज्ञानिकों को प्रथम बार इस आवश्यकता का ज्ञान हुआ कि वे अपना ज्ञान तथा शिक्षा जनता के समक्ष रख दें। मेरी यह कहने की इच्छा होती है कि उनके बौद्धिक ज्ञान ने उनको

चेतन कर दिया। यह कुछ तो अनुकम्पा थी और कुछ अपनी चेतना को सन्तुष्ट कर देना था, जिसके कारण उन्हें विश्वास हो गया था कि संस्कृति जनता के पास जानी ही चाहिए। उन्होंने जनता विश्वविद्यालय स्थापित किये, जोकि उन्नति के प्रारम्भिक काल के पश्चात्, राजनीतिक नैराश्य के कारण, अवनति के गर्त में गिर गए और क्योंकि कर्मचारियों की सांस्कृतिक इच्छाओं का प्रस्तुत संस्कृति के साथ कोई तारतम्य न था, फिर भी ये जनता विश्वविद्यालय प्रस्थान विन्दु थे, और तभी से प्रौढ़ शिक्षा आन्दोलन अनियमित रूप से उतार चढ़ाव करता हुआ प्रगति कर रहा है।

फ्रांसमें विशेष लक्षण यह है कि इसमें कभी नियमित विकास नहीं होता। प्रौढ़-शिक्षा संस्थाओं का उतार-चढ़ाव, सामाजिक आशावाद व सामाजिक निराशावाद के प्रतिनिधि के चित्र के लगभग समान ही होगा। जनता को प्रेरित करने वाला, राजनीतिक शक्ति अथवा सामाजिक उन्नति या सांस्कृतिक मूल्य तक पहुँचाने का आश्वासन प्रदान करने वाला महान आन्दोलन जैसे ही आरम्भ होता है, वैसे ही प्रौढ़-शिक्षा संस्थाओं का विकास भी साथ-साथ होता है। ये संस्थाएँ सामाजिक आशावाद को व्यक्त व जीवित रखते हैं। मैंने आपको ड्रेफस के मामले के समय के जनता विश्वविद्यालय के सम्बन्ध में बताया था। ड्रेफस मामले से आरम्भ, जब राजनीतिक समाजवाद और मूलवाद (Radicalism) सत्तारूढ़ हुए तब उस संकट से उत्पन्न यह आन्दोलन पांच या छः वर्ष तक रहा। और इतिहास के नियमित क्रम की भाँति जिन्होंने शक्ति प्राप्त की, वे स्वीकृत बौद्धिक शिष्ट जनतन्त्र बन गया। जनता की कामनाएँ लगभग भुला दी गई। कुछ वर्ष पश्चात् जनता विश्वविद्यालय शक्तिहीन हो गये। १९०६ और १९१४ के मध्य में फ्रांस की प्रौढ़ शिक्षा की स्थिति डाँवाडोल रही। युद्ध के पश्चात् कैथोलिक प्रवृत्ति लिए सामाजिक कार्यकर्ताओं के दल उत्पन्न हो गये। इन दलों के माध्यम से जिन बुद्धिमानों, अध्यापकों व दार्शनिकों ने युद्ध-क्षेत्र में कार्यकर्ता तथा कृषकों के साथ सम्पर्क स्थापित कर रखा था। उन्होंने भविष्य के हेतु यह सम्पर्क बनाये रखने का प्रयास किया क्योंकि वे इसका मूल्य समझते थे। वे मजदूरों और बौद्धिक कार्यकर्ता के मध्य सम्पर्क का महत्व समझने लगे थे। इस आन्दोलन से स्मरणीय व उत्कृष्ट परिणाम उत्पन्न हुए। आन्दोलन ने शुभ भावना का प्रमाण या परस्पर परिचय स्थापित किये। अनेक कार्यकर्ताओं, बुद्धिमानों व सांस्कृतिक विकास को सुविधा प्राप्त हुई। फिर भी, आन्दोलन देश के राष्ट्रीय जीवन को प्रभावित नहीं कर सका। १९३४ व १९३६ के मध्य सामाजिक आशावाद की दूसरी लहर ने संयुक्त मोर्चे की रचना की। इस मोर्चे में विभिन्न वामपक्षी दलों ने भाग लिया। सार्वजनिक मोर्चे के सम्बन्ध में विविध विचार हैं। परन्तु यह अस्वीकार नहीं किया जा सकता कि १९३६ के चुनावों के पश्चात् कार्यकर्ताओं ने अनेक आर्थिक व सामा-

जिक लाभ उठाये। उनमें से कुछ हैं, वेतन सहित छुट्टियाँ, संग्रहित संविदा और चालीस घण्टे के सप्ताह का सिद्धान्त। सामाजिक माँगों के आन्दोलन के समवर्ती अनेक प्रौढ़-शिक्षा संस्थाओं का निर्माण हुआ जिनमें मजदूर संघों की शिक्षा के लिये मजदूर कॉलिज, जनता की बौद्धिक संस्कृति व कलात्मक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए सांस्कृतिक संस्थाएँ वर्णनीय हैं। प्रथम बार अवकाश का उचित लाभ उठाने की समस्या महत्वशाली हुई और इस नवीन परिस्थिति के लिये एक विशेष मन्त्रालय का निर्माण हुआ। लेकिन हम अनेक सामाजिक निरुत्साह भी पाते हैं। सार्वजनिक मोर्चे का विग्रह, द्वितीय विश्वयुद्ध के पूर्व युद्ध सामग्री निर्माण की होड़ के कारण प्रतिक्रियात्मक विधि, प्रौढ़-शिक्षा आन्दोलन गतिहीन हो गया और १९३९ तक, महायुद्ध आरम्भ होने पर, १९३६ में निर्मित प्रौढ़-शिक्षा संस्थाएँ अपना जीवन खो बैठी थी।

युद्ध-काल में देश-भक्तों के, शत्रु के विरुद्ध अवरोध आन्दोलन, सामाजिक और राजनीतिक ढाँचे के पूर्ण तथा संशोधन की आशा ही फ्रांस में प्रौढ़-शिक्षा की पुनरावृत्ति का अवसर प्रदान करने वाले थे। युद्धकाल में, बौद्धिक कार्यकर्ताओं, प्राविधिज्ञों, प्राध्यापक गण, कार्यकर्ताओं तथा उत्तरदायी श्रम संघीयों ने परस्पर भेंट की। वे परस्पर आदर करने लगे। उन्हें सांस्कृतिक अभावों का ज्ञान हुआ। उन्होंने यह भी विचार किया कि औद्योगिक लोकतंत्र कहलाने वाले नवीन समाज का नेतृत्व करने के लिए जिन्हें आमन्त्रित किया जायगा उन्हें सामान्य तथा विशेष शिक्षा प्रदान करने की आवश्यकता है।

हमने साहसी एवं मौलिक संस्थाओं तथा प्रयोगों के पुनरुद्धार का अवलोकन किया है। सांस्कृतिक केन्द्र, व कार्यकर्ताओं के शिक्षा केन्द्र लगभग सारे फ्रांस में निर्मित किये गये और विभिन्न सार्वजनिक सांस्कृतिक आन्दोलन का आरम्भ हुआ। उस समय की राष्ट्रीय सरकार ने, जिसके अध्यक्ष जनरल डे गीले थे और जिसमें ईसाई समाजवादी व साम्यवादी भी सम्मिलित थे, सार्वजनिक प्रौढ़-शिक्षा सेवा का संचार किया। इस आन्दोलन के नेता प्रौढ़-शिक्षा के महान् प्राध्यापक, लेखक व सिद्धान्त रचयिता जीन गुहेनो थे। प्रौढ़-शिक्षा के इतिहास में यह एक निश्चित व महत्वपूर्ण चिह्न था। यह एक वर्ष की अवधि में क्षेत्र और विभाग के निरीक्षक की देख-रेख में जो प्रौढ़ शिक्षा क्षेत्र में कुशलता के लिए प्रसिद्ध थे, फ्रांस के उपर प्रौढ़-शिक्षा सेवा का एक जाल सा बिछ गया। दो वर्ष में पर्याप्त उन्नति प्राप्त की। फ्रांस के प्रकरण में, प्रौढ़-शिक्षा के सिद्धान्तों का निर्माण और स्पष्टता से वर्णन किया। नवीन तथा मौलिक विधियों का निरीक्षण किया गया। राजनीतिक व सामाजिक कारणों से अवनति व पतन की दूसरी पर्याय का आरम्भ हुआ। बचन निभाये नहीं गये। आशा निराशा में परिणत हो गई। प्रतिक्रियात्मक अंश जो कुछ काल तक निष्क्रिय रहे, अब

सक्रिय हो उठे। राष्ट्रीय एकता का शीघ्रता से विघटन हो रहा था। अनेक संस्थाओं के लिये जनता की सहायता उपलब्ध न थी। वित्त मन्त्रालय, जोकि परम्परा के उन्नति पर विजय प्राप्त करते ही उन्नति पर आघात करता है, सरकारी कार्यों पर प्रति आक्रमण करने लगा। एक बार वित्त कर्मचारी यह अनुभव कर ले कि उन्हें सार्वजनिक विरोध का सामना न करना पड़ेगा। वे व्यय में कटौती करने का नियमित कार्य आरम्भ कर देते हैं। कुछ वर्षों की निरन्तर कटौती के कारण, प्रौढ़-शिक्षा के १० निरीक्षकों में से कुछ ही बच रहे, जो बच गये, उन्हें अपने प्रौढ़-शिक्षा के कार्यकलापों को, खेल-कूद को व युवा आन्दोलन के कार्यकलापों को एक करना पड़ा। १७ राष्ट्रीय शिक्षा-केन्द्रों में से, जिन्हें प्रौढ़ शिक्षा संचालकों ने उत्तरदायी नेताओं की शिक्षा के लिए निर्माण किये थे, केवल ३ बच रहे, और उनका अस्तित्व निरन्तर संशय में पड़ा है। प्रत्येक इस निर्णय पर पहुँचने के लिये बाधित हो जाता है कि कुछ अपवादों के उपरान्त—ऐसी संस्थाएँ जिनका भाग्य कम और अधिक विचारों के परिणामवाद तथा राजनीतिक व सामाजिक स्थिति से सम्बन्धित हों, तुलना में भेद्य हैं, फिर भी कुछ परिवर्तन दृष्टिगोचर हो रहा है।

ऐसा प्रतीत होता है कि अवरोध से उत्पन्न आन्दोलन ने मार्मिक प्रभाव डाला है। अब जबकि ज्वार उतार पर है, अवनति के उपरान्त भी कुछ ठोस द्वीप बचे हुए दिखाई पड़ रहे हैं। प्रौढ़-शिक्षा का विचार क्रमशः दृढ़तापूर्वक बुद्धिमानों, अध्यापकों व कार्मिक-संघों में उन्नति प्राप्त कर रहा है। शनैः शनैः वे ऐसा वातावरण उत्पन्न कर रहे हैं, जिसमें प्रौढ़-शिक्षा वास्तव में ही जड़ पकड़ सकती है, जैसा कि सार्वजनिक पाठशाला पद्धति के सम्बन्ध में हुआ था। यह पद्धति भी अनेक प्रयास व प्रयोगों की शृङ्खला के पश्चात् ही जड़ पकड़ने में समर्थ हुई थी। जिन संस्थाओं ने विलक्षण शक्ति का प्रमाण दिया है, उनमें से सांस्कृतिक तथा युवकों की सांस्कृतिक संस्थाओं के नाम वर्णनीय हैं। ये राष्ट्रीय संघ से सम्बद्ध हैं। आप निःसंदेह इन संस्थाओं के कार्य से परिचित ही होंगे। अनेक विदेशी संस्थाएँ उनके अनुरूप हैं। भौतिक रूप से ये संस्थाएँ भवन होती हैं जोकि किसी युवा समाज के अधीन होता है। उसमें नाटक, सभा, खेल, व्यावहारिक कार्य, पुस्तकालय तथा ग्रामोफोन रेकार्ड के कक्ष होते हैं। उन केन्द्रों का उपयोग करने वालों की रुचि तथा साधनों के अनुसार उनके कार्यकलाप भी भिन्न होते हैं। इन संस्थाओं का दूसरा लक्षण यह है कि उनका प्रशासन अधिकतर उनको व्यवहार में लाने वाले युवकों के हाथ में ही रहता है। अन्त में इस बात पर भी ध्यान देना आवश्यक है कि ये केन्द्र किसी दल अथवा क्षेत्रीय पार्टी से सम्बन्धित नहीं हैं। परन्तु ये समस्त युवकों के लिए खुले हैं। चाहे वे किसी भी राजनीतिक या धार्मिक विचारों के हों। संगीत-शिक्षा-संघ द्वारा, संगीत शिक्षा में अत्यन्त प्रगति हुई है। मध्यम युग

में व १७वीं शताब्दी में भी, फ्रांस की जतता के जीवन में संगीत का एक महत्त्वपूर्ण स्थान था। तत्पश्चात् शिक्षा व सार्वजनिक रीतियों में इसके स्थान पर महत्त्व गिरता गया। इस संस्था के पुनरुत्थान का प्रयास वर्णनीय है। ये युवकों को संगीत सभा में भाग लेने के अवसर देते हैं। इन्हें सब प्रकार के प्राविधिक व सांस्कृतिक संगीत का ज्ञान देते हैं। परिणामस्वरूप अनेक समूह जिनका संगीत से सम्पर्क छूट गया था, अब फिर से इस विषय में सच्चे हृदय से रुचि लेने लगते हैं। हमें यहाँ पर चल-चित्र क्लब के कार्यकलाप के सम्बन्ध में भी अवश्य उल्लेख करना चाहिये। वे एक संघ में सम्बद्ध हैं, वे जनता के समक्ष उच्च स्तर के चल-चित्र प्रस्तुत करते हैं। वे फिल्म में जाने वालों की रुचि व निर्णय की शिक्षा प्रदान करने में व्यस्त रहते हैं। उचित दृष्टि से देखने से ज्ञात होता है कि प्रौढ़-शिक्षा हेतु चल-चित्र एक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण साधन है।

ग्रामीण जिलों में भी वे एक संघ में सम्बद्ध हैं। उनके दो प्रयोजन हैं, पहला शिक्षा तथा दूसरा मनोरंजन। उनकी चेष्टा यह रहती है कि देश के सांस्कृतिक जीवन का नीचा स्तर ऊपर उठे तथा दैनिक कार्य-क्रम की थकान दूर रहे जिसके कारण युवा कृषक शहरों में भाग जाते हैं। अब तक जो परिणाम प्राप्त हुआ है, वह अत्यन्त महत्वपूर्ण है। वे कुछ ग्रामीण समुदाय के जीवन में पर्याप्त परिवर्तन ले आए हैं। ऐसी अनेक स्थानीय सभाएँ हैं, जिनका वर्गीकरण करना कठिन है। वे किसी केन्द्रीय संगठन से सम्बद्ध नहीं हैं। नियमित गवेषणा से निस्सन्देह इन विभिन्न सभाओं के कार्य-कलापों के विस्तृत क्षेत्रों का पता चल जायगा। फिर भी दो संगठनों का नाम विशेषतः उल्लेखनीय है, क्योंकि स्वतन्त्रता के समय से उन्होंने महत्वपूर्ण कार्य किया है और कर रही हैं। (१) राष्ट्रीय स्तर पर जनता और संस्कृति नामक संस्था व (२) प्रादेशिक स्तर पर होटीशोवा की जनता और संस्कृति नामक संस्था। प्रथम संस्था १९४५ में स्थापित हुई थी। इसका ध्येय था ऐसे नेताओं को खोजना जो हमारे समय के उपयुक्त प्रौढ़ शिक्षा को प्रेरित तथा जीवित करने योग्य हों। इसने सूचनात्मक व शिक्षात्मक प्रचार के पाठ्य,क्रम की व्यवस्था की। यह अभिलेख, भाषण का संक्षिप्त विवरण जैसी शैक्षिक वस्तुएँ प्रदान करती है। इसने नवीन व मौलिक विधि को उभारा है। इसने अनेक संस्थाएँ स्थापित की हैं। उदाहरण स्वरूप, ग्रेनोबल में कार्मिकों के शिक्षा केन्द्र, सांस्कृतिक केन्द्र तथा खिलाड़ियों के समूह इत्यादि। अन्य संस्थाओं की भाँति ये संस्थाएँ भी सामान्य पतन का शिकार बनी हैं। परन्तु इन वर्षों में जो सैद्धान्तिक व क्रियात्मक कार्य हुए हैं, प्रौढ़-शिक्षा के विकास के लिए उनकी बहुत महत्ता है। 'जनता और संस्कृति' अब भी शिक्षा के पाठ्य-क्रम की व्यवस्था करता है। इसने प्रौढ़-शिक्षा के मानसिक और सामाजिक आधार सम्बन्धी अति महत्वपूर्ण अनुसन्धान कार्य किए हैं।

होटोशवा में 'जनता और संस्कृति' का कार्य इतना अधिक लालसा-पूर्ण नहीं था, परन्तु इसकी संस्थाओं के लक्षण अधिक स्थाई तथा दृढ़ हैं। इस जिले में, विशेषतः ऐनसी में, ये संस्थाओं का जाल बिछाने में सफल हुई हैं, जिसने ज़िले की सांस्कृतिक अवस्था में परिवर्तन कर दिए हैं।

अन्त में, कार्य-कलाप के अन्य विशाल क्षेत्र का वर्णन करना अनिवार्य है। इसको पूर्णतः प्रौढ़-शिक्षा कहना उचित न होगा, परन्तु यह सार्वजनिक संस्कृति के विशाल क्षेत्र के अन्तर्गत है। इसका कार्य-केन्द्र पाठशालाएँ व अध्यापकगण हैं। जैसे कि आप जानते हैं, फ्राँस में पाठशालाएँ व अध्यापकगण स्थानीय, सामुदायिक व ग्रामीण सामुदायिक जीवन में महत्वपूर्ण कार्य सम्पादन करते हैं। पाठशाला का अध्यापक, खेलों के क्लब, नाटक संघ, सब प्रकार के सांस्कृतिक कार्य का प्रबन्ध वे करते हैं। ये सब एक संघ में संयुक्त होते हैं। इसके अन्तर्गत संयुक्त संगठनों के २५,०००) समूह हैं जिनमें लगभग १९४८ में चौदह लाख सदस्य थे। विश्वविद्यालय से पृथक ये सब कार्य किस मात्रा तक प्रौढ़ों के योग्य होते हैं ? यह मैं ठीक से तो नहीं बता सकता, परन्तु यह स्पष्ट है कि कार्य बालकों व युवकों के लिए अत्यन्त हितकारी हैं। अनेक स्थानों में, सार्वजनिक संस्कृति को मूलतः, पाठशाला की शिक्षा का अनुबद्ध तथा विस्तृत रूप ही समझा जाता है। अनेकों का विचार है कि सार्वजनिक समस्याओं का हल पाठशाला जाने की अवधि को और अधिक दीर्घ बनाने में है (१७ या १८ वर्ष की आयु तक) तथा स्कूल के बाहर पाठ्य-क्रम लगाकर, कार्य की परिपूरक शिक्षा देकर हल हो सकता है। फ्रांस में, जिन पर शिक्षा का अधिकृत उत्तरदायित्व है, वे पाठशाला के योग्य अवस्था से अधिक आयु वालों की शिक्षा के सम्बन्ध में भी कभी नहीं विचारते। अतएव प्रौढ़-शिक्षा की इस सामान्य व्याख्या को पाठशाला से बहि-शिक्षा पर अधिक जोर देना चाहिए क्योंकि वे अत्यधिक महत्ता के हैं।

फ्रांस में, प्रौढ़-शिक्षा के भविष्य के सम्बन्ध में, मैं अवश्य कुछ कहना चाहूँगा। फ्रांस में जिस प्रकार परिवर्तन होते रहते हैं, उन्हें अवश्य स्मरण रखना चाहिए। आप जानते हैं कि ये परिवर्तन परिणामवाद की प्रक्रिया के कारण नहीं होते, अपितु विवेकगत प्रक्रिया के परिणामस्वरूप परिणत हो जाते हैं। कुछ महीनों में, या कुछ सप्ताह की अवधि में ही वर्तमान परिस्थिति एक नवीन परिस्थिति में परिणत हो सकती है। यह हमने अभी हाल में ही १९३६ तथा १९४४ में अनुभव किया। कुछ महीनों की अवधि में ही, जो देश हमारे देश से भिन्न हैं उनके दीर्घकालिक व प्रगतिशील परिणामवाद की सामाजिक उन्नति फ्रांस राष्ट्र के जीवन में पुनः स्थापित की गई। इस प्रकार यह पूर्णतः सम्भव है कि राजनीतिक परिस्थिति का परिवर्तन, प्रौढ़-शिक्षा संस्थाओं के पुनर्निर्माण के हेतु, उसके उपयुक्त

वातावरण उत्पन्न कर सके। यह सम्भव है कि सार्वजनिक मत के दबाव के कारण, सरकार विस्तृत प्रौढ़-शिक्षा कार्यक्रम का विचार फिर से अपना सके और प्रौढ़-शिक्षा की एक चिर-स्थाई पद्धति चालू कर सकें। जिस प्रकार उन्होंने १८८० और १८८३ के बीच दो-तीन वर्ष की अवधि में ही प्राथमिक शिक्षा पद्धति चलाई थी।

गत समय की अपेक्षा वर्तमान परिस्थितियाँ अधिक उपयुक्त हैं। आज फ्रांस में इतने अधिक प्रौढ़-शिक्षा के शिक्षक हैं जो यथार्थ प्रारम्भिक महत्ता के कार्य सम्पन्न करने के लिए उपयुक्त समय की प्रतीक्षा में हैं। नेताओं को प्रशिक्षण देने का यह कार्य सरकार व निजी संस्थाओं ने किया। किसी निजी संगठन की महत्ता कितनी भी अधिक क्यों न हो। यह निश्चयपूर्वक कहा जा सकता है कि फ्रांस जैसे देश में कोई भी ठोस कार्य सम्पन्न नहीं किया जा सकता जब तक विधान उसका सहायक नहीं है। विधान ही उसको यन्त्र, आवश्यक साधन उपकरण तथा उपयुक्त व्यक्ति प्रदान कर सकता है। यद्यपि सरकार का इस प्रकार बीच में पड़ना कितना भी वांछनीय क्यों न हो, इसमें स्थानीय या सैद्धान्ति विशेषतातों के लिए, उपयुक्त छूट देने के लिए, पश्चातीत होने की प्रारम्भिक व नाजुक समस्या का भय होता है। इस तथ्य में कोई सन्देह नहीं कि सरकार को, स्थित संगठनों को, कुछ विशेष परिस्थितियों में, उनके कार्यों के विकास के लिए सहायता देना लाभदायक है। प्रौढ़-शिक्षा के क्षेत्रीय व राष्ट्रीय केन्द्र जो अपने भवन, अपने सांस्कृतिक व प्रशासनिक सेवाओं को, आर्थिक लाभदायक परिस्थितियों में, प्रौढ़-शिक्षा संगठन की इच्छा पर छोड़ देते हैं, वे इसका अच्छा उदाहरण हैं कि सरकार प्रौढ़-शिक्षा के विकास को दृढ़ बनाने में कहाँ तक सहायता कर सकती है।

तीसरा अध्याय

इंगलैण्ड में प्रौढ़ शिक्षा

श्री एम० बरमीस्टर
राजनैतिक विज्ञान के शिक्षक, लन्दन विश्वविद्यालय

श्री० लैन्ग्रांड ने प्रौढ़-शिक्षा के उतार-चढ़ाव तथा निजी देश के राजनीतिक व सामाजिक जीवन के परस्पर सम्बन्ध के विषय में कहा मेरे विचार से इङ्गलैण्ड के सम्बन्ध में भी स्पष्टतया वही सत्य है। कारण बिल्कुल स्पष्ट है। जो मनुष्य संसार में परिवर्तन लाने के इच्छुक हैं, वे उनकी अपेक्षा इस संसार के विषय में अधिक जानना चाहते हैं जो इसको इसकी वर्तमान स्थिति में रखना चाहते हैं। अतः, जो परिवर्तन के इच्छुक हैं वे ही प्रौढ़-शिक्षा को अपनाते हैं। प्रौढ़-शिक्षा क्षेत्र में, ब्रिटेन की जो अलौकिक देन है, वह निजी व सार्वजनिक प्रयास में, संगठन व संस्थाओं में मेल है, जैसे श्रमजीवियों का शिक्षा-परिषद्, विश्वविद्यालय, स्थानीय शिक्षा अधिकारी और शिक्षा मंत्रालय। मंत्रालय अपना आशीर्वाद ही नहीं देता, अपितु आर्थिक सहायता भी प्रदान करता है, जिसके अभाव में विश्वविद्यालय या स्वैच्छिक संगठनों के लिए अपना कार्य चालू रखना असम्भव हो जाता।

बीसवीं शताब्दी के प्रथम ५० वर्षों की अवधि में जो विकास हुआ, वह निःसन्देह नवीन सामाजिक वर्ग द्वारा की गई सामाजिक, राजनीतिक व शैक्षिक माँगों के कारण उत्साहित किया गया था। ये मांगें उन सामाजिक व श्रमिक वर्गों की थीं जिनके हाथ में राजनीतिक शक्ति आ रही थी। हमारे निजी समय में, महत्त्वपूर्ण परिवर्तन का तथ्य यही है कि यह वर्ग अब सत्तारूढ़ है। इसके प्रतिनिधि आज देश की सरकार के अंग हैं, चाहे वे विरोधी पक्ष में हों चाहे अधिकारी वर्ग में। और इस परिणत स्थिति के कारण, शैक्षिक आवश्यकताओं में भी परिवर्तन आ गया है। ब्रिटेन में उन विषयों के सम्बन्ध में प्रश्न भी उठ रहे हैं जो हमारी कक्षाओं में विद्यार्थी चुनते हैं। हम ऐसे नवीन मार्गों की खोज कर रहे हैं जो अर्थ-शास्त्र, राजनीति व इतिहास के अध्ययन की माँगों को प्रेरित करें, क्योंकि गत कुछ वर्षों से, सामाजिक अध्ययन की इच्छा में इतनी वृद्धि नहीं हुई जितना अधिक साहित्य, कला व संगीत का मान किया गया है।

कक्षाओं की सामाजिक रचना का अन्य व सम्बन्धित प्रश्न इस तथ्य में है कि कर्मचारी वर्ग तो विद्यार्थियों में अल्पसंख्यक ही होते हैं। फिर मेरे विचार से, आवासिक प्रौढ़-शिक्षा की वृद्धि पर, चाहे वह लम्बी अवधि के लिए हो, चाहे थोड़ी के लिए, जो

ब्रिटेन की गत पंचवर्षीय देन है, यह नई माँग की अभिव्यंजना है। ब्रिटेन में इस परिवर्तित परिस्थिति की जाँच करने के लिए अनेक सुझाव रखे गए हैं। उदाहरणस्वरूप यह तर्क दिया जाता है कि सामाजिक व राजनीतिक उत्तरदायित्व के लिए प्रौढ़ों को तत्पर करने की आवश्यकता इस कारण से और भी अधिक विस्तृत हो गई है कि कार्मिक संघ प्रशासन यन्त्र का एक अंग बन गया है। उद्योग और आर्थिक व्यवस्था में हाथ बँटाने की कार्मिक संघ माँग कर रहा है। अतः जनता का वह वृत्त जिसे प्रौढ़-शिक्षा की आवश्यकता है, निरन्तर विस्तृत होता जा रहा है।

इसका निहित अर्थ यह है कि प्रौढ़-शिक्षा के विषय व पद्धति विद्यार्थियों द्वारा अनुभव की गई शिक्षा-सम्बन्धी आवश्यकताओं के साथ सम्बद्ध करनी चाहिए।

यह भी सुझाव है कि हमें प्रौढ़-शिक्षा को व्यावसायिक प्रशिक्षण के साथ अधिक सम्बद्ध करना चाहिए। क्योंकि यह एक ऐसी आवश्यकता है जिसे अधिकतम जन साधारण अनुभव करते हैं, जैसा कि सन्ध्याकालीन संस्थाओं व प्रशिक्षण विद्यालयों में प्रवेश करने के हेतु आवेदन करने वालों की बड़ी संख्या बताती है। अभी तो इस विषय पर अनेक वाद-विवाद हैं कि राजनीतिक व सामाजिक शिक्षा में व्यक्तिगत रुचि की वृद्धि करने के लिए, हम इस व्यावसायिक विकास की इच्छा का किस प्रकार प्रयोग कर सकते हैं। उद्योग में ही अन्य समस्याओं की उत्पत्ति हो जाती है। यह स्पष्ट हो गया है कि अनेक व्यक्ति जो उद्योग में नेतृत्व करते हैं, ये मानव-जाति से व्यवहार करने के लिए प्रस्तुत हों, ऐसा आवश्यक नहीं है। अतः प्रौढ़-शिक्षा को चाहिए कि वह प्रबन्धक व कर्मचारियों को परस्पर मिला सके ताकि उद्योग में, अधिक अच्छे सम्बन्धों की उत्पत्ति में वे सहायक हों। ब्रिटेन में इस प्रयोजन-हेतु निर्मित पाठ्य-क्रम में विलक्षण वृद्धि हुई है।

कर्मचारी को यह भी समझाने की आवश्यकता है कि दक्षता में सुधार की कितनी आवश्यकता है। उसके समक्ष उद्योग व आर्थिक व्यवस्था (जिसका वह उद्योग एक अंश है) का एक चित्र प्रस्तुत करने की आवश्यकता है।

ये सब औद्योगिक लोक-तन्त्र की माँग से सम्बन्धित हैं जिसके विषय में मैं पूर्व ही उल्लेख कर चुका हूँ। यदि औद्योगिक लोक-तन्त्र को एक वास्तविक रूप लेना है तो इसे ऐसे सहस्रों व्यक्तियों की वृद्धि की आवश्यकता है जिन्हें अर्थ-शास्त्र का प्रारम्भिक ज्ञान हो, जो आर्थिक व्यवस्था की आवश्यकता व मानव-जाति से व्यवहार करने की कला का ज्ञान रखता हो। प्रौढ़-शिक्षा में नवीन मौलिकता की इच्छा को इस अनुभव से भी प्रोत्साहन प्राप्त होता है कि बड़े लोक-तान्त्रिक संगठन जैसे कार्मिक-संघ, शिथिलता के लक्षण प्रगट करते हैं।

मुझे ज्ञात है कि ब्रिटेन के लिए यह समस्या नवीन नहीं है। वास्तव में, सम्भवतः ब्रिटेन में, अन्य देशों की अपेक्षा यह समस्या कम है।

यदि कार्मिक-संघ सदस्य पर्याप्त संख्या में उत्तरदायित्व स्वीकार करने के इच्छुक व उसे व्यवहार करने योग्य हों, तो उन्हें इस कार्य के लिए आवश्यक ज्ञान प्राप्त करना चाहिए। राष्ट्रीय उद्योगों में नियुक्त कर्मचारियों को संगठित करने की विशेष समस्या संघ के समक्ष आती है। अपनी परिणत परिस्थितियों पर दृष्टिपात करते हुए हमें ज्ञात होता है कि उनकी शैक्षिक विशेष आवश्यकताएँ हैं, विशेषतः जबकि सरकार में प्रधान कर्मी-संघ हैं। इस प्रकार, आपको हाल में ही विकसित, एक दिवसीय पाठशाला तथा शनिवार पाठशालाएँ मिलेंगी जिन्हें कभी पृथक उद्योग व कभी आवासिक पाठशालाएँ संगठित करती हैं। ये आवासिक प्रौढ़-शिक्षा केन्द्र या तो स्वाधीन होते हैं या, फिर कोई विश्वविद्यालय या कोई स्थानीय अधिकारी स्थापित करता है। उनके अनेक लघु पाठ्य-क्रम का निर्माण इस प्रकार किया गया है, ताकि कार्मिक संघ के सदस्य अधिकारी, किसी उद्योग के प्रबन्धक उस प्रकार का ज्ञान प्रदान कर सकें जिसके विषय में मैंने उल्लेख किया है।

मुझे यह प्रतीत होता है कि प्रौढ़-शिक्षा के दृष्टिकोण से इस प्रकार के कार्य का एक विशेष पक्ष निरन्तर किया जाना चाहिए, नहीं तो इससे यह भ्रम भी हो सकता है कि औद्योगिक लोक-तन्त्र की समस्याओं को आप किसी शनिवार व रविवार को तीन भाषणों में हल कर सकते हैं। ऐसे भ्रम को शनिवार पाठशाला में दूर कर देना चाहिए और इसके स्थान में विस्तृत व अधिक नियमित रूप से अध्ययन करने की इच्छा जागृत करनी चाहिए। अन्य शब्दों में, शनिवार पाठशाला व एकदिवसीय पाठशाला तो प्रारम्भ के लिए होनी चाहिए, जिससे विद्यार्थियों में आने वाले मुख्य भोजन के हेतु क्षुधा जागृत हो।

प्रौढ़-शिक्षा का अन्य कार्य है रुचि क्षेत्र का विस्तार करना। किसी उद्योग विशेष, किसी वस्तु विशेष से राष्ट्रीय अर्थनीति के प्रश्न पर पहुँचने का प्रयास होना चाहिए और अन्त में उन अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों पर जिसका यह राष्ट्रीय समाज केवल एक अंग है।

अब ब्रिटेन में किये गए इन सब प्रयोगों की तह में जो लक्ष्य है, वो प्रौढ़-शिक्षा के आकर्षण को विस्तृत करना, पूर्व अनुभव की हुई शैक्षिक आवश्यकताओं की ओर आकर्षित कर विद्यार्थियों के नवीन समूहों को प्रौढ़-शिक्षा क्षेत्र में लाना है। अर्थात् व्यक्तिगत और सामाजिक उन्नति की इच्छा, उनके निजी व्यक्तिगत अनुभवों से आरम्भ करके उनके निजी दैनिक जीवन की विशेष समस्याओं का अध्ययन से सम्बन्ध दर्शाना है।

इससे हम ऐसी बात पर पहुँचते हैं जिसे मैं विशेष महत्ता देता हूँ और मेरे विचार

से इस सम्मेलन में वह भी एक विचारणीय विषय होना चाहिए। मेरा आशय उस गुरु के गुणों से है जिसकी इस उद्देश्य के लिए आवश्यकता है। मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि सब कुछ उसके गुणों पर निर्भर है और यह मुझे ज्ञात है कि जर्मनी में इस उद्देश्य के लिए अध्यापकों का अभाव है। निसन्देह अध्यापक में आवश्यक गुण होने चाहिए। सबसे बड़ी बात यह है कि वह अपने शिष्यों से स्पष्ट व अपरोक्ष ढंग से वार्तालाप करके समस्याओं पर प्रकाश डाल सके। अपने उदाहरण से, वह उन्हें अध्ययन की विधि सिखा सके, ताकि जो कुछ वे कक्षा में सीखते हैं, उसके अतिरिक्त वे ऐसी विधि ग्रहण कर सकेंगे, जिससे वे अपना अध्ययन स्वयं चालू रख सकें। यदि उसे उनके कार्य के लिए प्रोत्साहित करना है तो उसे स्वयं भी प्रोत्साहित होना चाहिए। वह उन्हें प्राथमिकता से गूढ़ता तक, निजी अनुभव की विशेषता से उद्योग की सामान्य समस्या तक, उनकी राष्ट्रीय आर्थिक व्यवस्था व अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों तक ले जाने योग्य होना चाहिए। अध्यापक यह समझाने में समर्थ होना चाहिए कि कैसे सीमित समस्याओं में, आर्थिक, राजनीतिक, साहित्यिक व दार्शनिक सिद्धान्त निहित हैं।

दूसरे शब्दों में, प्रौढ़-शिक्षा में ऐसे अध्यापकों की आवश्यकता है जिनमें सामान्य विश्व-विद्यालय के अध्यापक की अपेक्षा कुछ विशेष गुण हैं। विश्व-विद्यालय के अध्ययन का स्पष्ट सीमित क्षेत्र होता है। जब कि प्रौढ़-शिक्षा में विद्यार्थी-गण निरन्तर विषय की सीमाओं का उल्लंघन कर ज्ञान के निकटवर्ती क्षेत्रों में जाने को बाधित करते हैं और उसके लिए उसे तत्पर होना चाहिए। उसे चाहिये कि उनके अनुभवों ने उन्हें ज्ञानार्जन के लिए प्रेरणा दे।

अब हम प्रौढ़-शिक्षा के अन्य पहलू पर दृष्टि-पात करेंगे। हम उस बाह्य वातावरण की उपेक्षा नहीं कर सकते जिसमें ये विद्यार्थी परस्पर भेंट करते हैं। गत कई वर्षों में ब्रिटेन की कक्षाओं के स्थान में कुछ सुधार हुआ है। विश्व-विद्यालय के आवासिक विद्यालय और ग्रीष्म ऋतु कालीन विद्यालय का वातावरण आनन्ददायक और सुन्दर है। व्यक्ति के शैक्षिक विकास में वातावरण की सुन्दरता का प्रभाव अवश्य पड़ता है। आध्यापक टौने जिन्होंने ब्रिटेन में प्रौढ़-शिक्षा के सम्बन्ध में बहुत कुछ किया, कहते थे कि—"समाज में इस मत का प्रचार करना चहिए कि संस्कृति केवल कुछ उच्च वर्ग का कार्य नहीं है परन्तु यह सबका है।" ऐसे मत का उसी समाज में संवर्द्धन हो सकता है, जहाँ विचारों व रुचि में अन्तर होने के कारण भेद की अपेक्षा सामुदायिक भावना अधिक दृढ़ हो। मैं यह कहूँगा कि जब तक समाज में दृढ़ एकता का भाव जागृत नहीं होता, यह वास्तविक प्रौढ़-शिक्षा आन्दोलन के विकास में सफल नहीं हो सकता। यह आन्दोलन तभी सफल होगा जब पुरुष व महिलाएं

एक-दूसरे के दृष्टिकोण को समझने की इच्छा रखती हों। नवीन निर्णय करने को तत्पर हों व पूर्व निर्मित मत के विरुद्ध सतर्क रहते हों। इस प्राथमिक एकता के अभाव में, आपको न ही स्वतन्त्रता प्राप्त हो सकती है, न ही संस्कृति। क्योंकि इसी एक आधार पर लोग अपने मतभेद शान्तिपूर्वक मिटाने को तत्पर हैं या विवेक पर आधारित विधि से।

अतः मैं यह कहूँगा कि समस्त प्रौढ़-शिक्षा ही लोकतन्त्र का प्रशिक्षण है। चाहे साहित्य, संगीत, अर्थ-शास्त्र या राजनीति या इतिहास में से किसी भी विषय पर अध्ययन क्यों न किया जाए। इसमें आपकी उन मानसिक व व्यावहारिक प्रवृत्तियों की आवश्यकता है जो लोकतान्त्रिक समाज में रहने के लिये आप भी आवश्यक समझते हैं। एक छोटे से समूह का सदस्य होना राजनीतिक शिक्षा का ही एक रूप है। इसके कार्य के क्षेत्र और विशेषता निश्चित करने में सामूहिक सदस्यों की सहयोग-प्राप्ति हमारा एक निरन्तर ध्येय होना चाहिए। प्राचीन सिद्धान्तों को फिर से दृढ़ बनाने के लिए सम्मेलन बहुत अच्छे अवसर प्रदान करते हैं। अब विद्यार्थी के सहभाग का सिद्धान्त केवल मौखिक रूप में ही रहता है, परन्तु जब हम अपनी कक्षाओं की व्यवस्था करते हैं तो इस सिद्धान्त के सम्बन्ध में प्रायः भूल जाते हैं। हम अन्य व्यक्तियों के लिए उसी की व्यवस्था करते हैं, जिसे हम उनके लिए अच्छा समझते हैं, जबकि हमें यह खोजने का प्रयत्न करना चाहिये कि वे अपने लिए क्या अच्छा समझते हैं और फिर जहाँ तक सम्भव हो सके उनके विचारों में परिवर्तन लाना चाहिये। या फिर वे हमारे विचारों को परिणत कर दें। दूसरे शब्दों में, हमें सामान्यतः स्वीकृत सिद्धान्त को व्यवहार में लाने का अभ्यास करना चाहिये कि प्रौढ़-शिक्षा एक साहसी सहकारी कार्य है, और इसके सम्बन्ध में केवल यह कहकर ही नहीं भूल जाना चाहिये कि देखो, यह हम देते है, यह ऐसा विषय है जो आपको अध्ययन करना चाहिये और कैसे ? यह हम आपको बतायेंगे।" जब विद्यार्थी आरम्भ से ही यह अनुभव करता है कि कार्य निश्चित करने में उसका भी कुछ हाथ है, तभी प्रौढ़-समूह वास्तविक निजी सरकार की एक ईंट बनता है।

निःसन्देह यह मैं जानता हूँ कि जब वे अध्ययन के कार्य-क्रम का निश्चय करने का प्रयास करते हैं तो विद्यार्थी, विशेषतः नवीन विद्यार्थीगण प्रायः अत्यधिक इच्छुक होते हैं। उसके मध्य प्रशिक्षित विद्यार्थी का, विशेषतः अध्यापक का यह कार्य है कि उन्हें समझाए कि किसी भी तरह उन्हें आरम्भ में अपनी इच्छाओं को सीमित करना होगा। तत्पश्चात् वे स्वयं ही यह पहचानना आरम्भ कर देंगे कि क्षेत्र का अध्ययन का परिमाण, जिसे वे बारह या चौबीस सप्ताहों में समाप्त कर सकते हैं, निःसन्देह, अत्यन्त सीमित है।

मेरे विचार से, आवासिक प्रौढ़-शिक्षा विद्यालयों में इन सब कार्यों के लिये अनेक

सुविधाएं प्राप्त हैं, जहाँ सप्ताह में दो बार भेंट करने वाले व्यक्तियों की अपेक्षा मित्रता में कहीं अधिक स्वाभाविक ढंग से वृद्धि होती है।

मैंने अध्यापक के गुणों के सम्बन्ध में भी कहा है। इनमें मैं उस योग्यता को सर्वप्रथम स्थान दूँगा जो विद्यार्थी के स्थान बौद्धिक मित्रता स्थापित कर सके, यथार्थ समानता, केवल एक औपचारिक नहीं। निसन्देह इसका अर्थ यह है कि उसे सप्ताह में दो घण्टे की अपेक्षा, विद्यार्थियों के साथ कहीं अधिक समय व्यतीत करना होगा, कि उसे अपने विद्यार्थियों को व्यक्तिविशेष की भाँति जानना होगा, और रजिस्टर के ऊपर लिखे गए नाम नहीं। यह भी आवश्यक है कि उसकी नौकरी की ऐसी शर्तें रक्खी जायँ जो उसके कार्य का उचित मूल्यांकन कर सकें। मेरे विचार से यह एक ऐसी माँग है, जिसके सम्बन्ध में, जर्मनी में उचित सुनवाई नहीं हुई। मेरा विश्वास है कि यही एक ऐसा कारण है जिससे वहाँ प्रौढ़-शिक्षा का ध्येय समझने वाले व्यक्तियों को खोजना कठिन सिद्ध हुआ है। मेरे विचार से, ऐसे पूर्णकालीन अध्यापकों का एक केन्द्रबिन्दु अवश्य होना चाहिये जो प्रौढ़-शिक्षा के लिए आवश्यक विशेष-कौशल प्राप्त हैं। परन्तु मैं फिर कहता हूँ कि आप उन्हें तभी प्राप्त कर सकेंगे यदि आप उन्हें नौकरी की उचित सुविधाएँ प्रदान करें। मैं फिर से यही कहूँगा कि जहाँ सम्भव हो, ऐच्छिक संस्थाओं को ही प्रौढ़-शिक्षा में कार्य करना चाहिए। ब्रिटेन में श्रमजीवी शैक्षिक परिषद् (W. E. A.) जो बौद्धिक विकास हेतु प्रौढ़ शिक्षा के प्रवर्तक रहे हैं और जिसके सम्बन्ध में मैं कह रहा हूँ, भूत में अत्यधिक कार्य करते रहे हैं, न कि भविष्य में भी महत्वपूर्ण कार्य करेंगे। मेरे विचार से यह उचित नहीं है कि प्रौढ़-शिक्षा केवल संस्थाओं व अधिकारियों के चारों ओर ही केन्द्रित रहे। प्रत्येक प्रौढ़ कक्षा का यह सर्वाधिक नवीन प्रयास होना चाहिये कि विद्यार्थी व अध्यापक के मध्य सहयोग की सर्वोत्तम विधियाँ कौन सी हैं, ये कक्षाएँ केवल सफलता के आंकड़े में वृद्धि का प्रयास बनकर ही न रह जायें।

इङ्गलैंड में सामाजिक व राजनीतिक परिवर्तन, जिसके सम्बन्ध में मैंने उल्लेख किया है, का प्रभाव शैक्षिक परिवर्तन पर भी पड़ा है, जिनमें से १९४४ का शिक्षा अधिनियम सर्वाधिक उल्लेखनीय व नवीन है। ऐसे समाज में, जहाँ शैक्षिक अवसरों में स्पष्ट असमानता हो वहाँ क्या लोकतन्त्र, क्या प्रौढ़-शिक्षा, कुछ भी उन्नत नहीं हो सकता। जो राजनीतिक व सामाजिक उत्तरदायित्व की भावना को दृढ़ व स्थिर बनाना चाहते हैं, उनका ध्यान अधिकतम ऐसी असमानता को दूर करने में, व शैक्षिक प्रश्नों में सक्रिय रुचि उत्पन्न करने में होना चाहिये।

यदि मैंने सामाजिक व राजनीतिक अध्ययन पर अधिक महत्व दिया है तो उसका कारण स्पष्ट है कि हमारे सम्मेलन के विषय से उसका प्रत्यक्ष सम्बन्ध है। सामाजिक

परिवर्तन की विधियों को समझ बूझ बढ़ाकर, विद्यार्थी उन्हें प्रभावित करने की योग्यता बढ़ाता है और प्रत्येक कार्य में, भाग लेने की भावना में वृद्धि करता है जो प्रत्येक स्वतन्त्र समाज के लिए आवश्यक है। परन्तु कोई भी यह देखना पसन्द नहीं करेगा कि प्रौढ़ शिक्षा का कार्य केवल व्यक्ति को इस योग्य निर्माण करना है कि वह नागरिक के कर्तव्यों को अधिक संशोधित रूप से करे। साहित्य, दर्शन व कला का अध्ययन करने से वह इस योग्य हो जायगा कि वह अपने व्यक्तित्व को अधिक समृद्ध व विकसित कर सके, तथा राजनीति के अध्ययन से पृथक् सन्तोष प्राप्त कर सके। सम्भवतया उसे वह आनन्द भी प्राप्त हो सके जो राजनीतिक संस्थाओं का प्रायः उच्चतम और विस्तृत उद्देश्य है। अन्त में, स्वतन्त्रता ऐसे समाज में अत्यन्त सुरक्षित रहेगी जिसके सदस्य में मिथ्या और अनुचित चीजों को अस्वीकार कर देने की दूरदर्शिता व सूझ-बूझ हो, चाहे वह किसी भी क्षेत्र में क्यों न हों। एक अन्तिम बात। जर्मनी में और बाहर भी इस बात पर अनेक वाद-विवाद छिड़ा हुआ है कि लोकतन्त्र के निर्माण के लिए कितने लोकतान्त्रिक की आवश्यकता है। यह स्पष्ट है कि परम्परागत लोकतान्त्रिक देशों में भी, क्रियाशील लोकतान्त्रिक अल्पसंख्या में हैं। परन्तु विचारधारा उनकी ही इच्छानुसार चलती है। कभी ये अल्पसंख्यक थोड़े होते हैं और कभी अधिक, परन्तु जहाँ कहीं भी लोकतन्त्र कार्य करता है, यह अल्पसंख्यक ही हैं जिसके चारों ओर विचार एकत्र हो जाते हैं। इन अल्पसंख्यकों को दृढ़ बनाकर, और जो विवेक व ईमानदारी से अन्तर्राष्ट्रीय उत्तरदायित्व का निर्वहन करना चाहते हैं, उनके कार्य में सहायता देकर प्रौढ़-शिक्षा देश के मध्य लोकतन्त्र व स्वतन्त्रता में और एक-दूसरे की समझ बूझ में वृद्धि कर एक अत्यन्त महत्वपूर्ण कार्य कर सकती है।

चौथा अध्याय

जर्मनी में प्रौढ़ शिक्षा के कुछ नव-विकास

डा० फ्रिज बोरिन्सकी
गोहरदे लोक विश्व विद्यालय के अध्यक्ष

१. धारावाहिक परम्परा का अभाव

कुछ काल व्यतीत हुए, जब मैंने स्वीडन का प्रौढ़-शिक्षा विद्यालय देखा तो वहाँ के संचालक की इस बात से मैं बहुत प्रभावित हुआ कि उसके पितामह ऐसी संस्था के अध्यक्ष थे। यह लम्बी परिपाटी और परिणामस्वरूप स्वीडन के जीवन में प्रौढ़-शिक्षा मान्य स्थान जर्मनी की परिस्थितियों के विपरीत हैं। फ्रांस की भाँति यहाँ भी अच्छे आरम्भ, अवनति तथा नवीन प्रयासों की एक शृंखला रही है। इस सम्बन्ध में, मैं जर्मनी के १०० वर्ष पूर्व के श्रमजीवी शिक्षा संगठन के गम्भीर सामाजिक और शिक्षा प्रयास, १८७१ में स्थापित मध्यम-वर्ग की सांस्कृतिक विरासत का प्रचार करने के आशावादी प्रयास और जर्मनी विश्व-विद्यालय विस्तार आन्दोलन का स्मरण कराता हूँ। प्रथम विश्वयुद्ध के अन्त में इन आन्दोलनों ने जो संकुचित, खोखला व निम्न रूप धारण कर लिया था, उसकी प्रतिक्रिया के फलस्वरूप सार्वजनिक उच्च शिक्षा आन्दोलन आरम्भ हुआ जो लोकतन्त्र से इतना सम्बद्ध था कि वैयार गणतन्त्र के साथ इसका भी क्षय हो गया। तत्पश्चात् पूर्ण शून्यता रही Kraft Dwch treub आन्दोलन को वास्तविक शिक्षात्मक कार्य नहीं समझा जा सकता परन्तु जब १९४५ में नाज़ीवाद का ध्वंस हुआ तो ऐसी प्रौढ़-शिक्षा के तत्काल आरम्भ करने का प्रयास हुआ जो परिवर्तित परिस्थितियों व समयानुसार आवश्यकताओं के अनुकूल हो।

२. नवीन आरम्भ

चारों अधिकृत सत्ताएँ राष्ट्रीय पुनर्शिक्षा के राजनीतिक कार्यक्रम को लेकर जर्मनी आई थीं। इस कार्यक्रम में प्रौढ़-शिक्षा का एक महत्वपूर्ण स्थान था। इनके अतिरिक्त ऐसे अनेक जर्मनी के व्यक्ति व स्थानीय समितियाँ भी थीं, जो आर्थिक तथा मनोवैज्ञानिक कठिनाइयों के उपरान्त भी प्रौढ़-शिक्षा के पुनरुत्थान के लिए प्रयास करने को तैयार थीं। इन चीजों के लिए जनता ने यथेष्ट उत्साह दिखाया। युद्ध-काल में विस्थापित होने के कारण जो शिक्षा में बाधा आ पड़ी थी, अनेक इसको पूरा करना चाहते थे, बहुत से अच्छी नौकरी

के लिए प्रशिक्षित होना चाहते थे। अतः अधिकतम प्रौढ़-शिक्षा संस्थाओं ने प्राथमिक व व्यावसायिक विषयों पर पाठ्यक्रम की व्यवस्था की जो कि प्रायः उनके कार्यक्रम का सबसे बड़ा अंश था। साथ-साथ कलात्मक, साहित्यिक, दार्शनिक व मनोवैज्ञानिक विषयों में गहन रुचि हो गई जिसके कारण अनेक व्यक्ति, कम-से-कम कुछ घण्टों के लिए हों, हाल में ही व्यतीत भूत और वर्तमान के अत्यन्त दीनतापूर्ण समय को विस्मृत कर सकें। परन्तु वे युवक जो पूर्व से भागकर आए थे, अथवा युद्ध के अभियुक्त-शिविर से लौटकर प्रौढ़-शिक्षा में आए थे, वास्तव में यथार्थ मूल्य, सामुदायिक जीवन के सम्भव उद्देश्य और रूप को जानना चाहते थे।

युद्ध के पश्चात्, विद्यार्थी अधिकतम नगरों की मध्यम श्रेणी से तथा पूर्वी शरणार्थियों में से आए थे जो देश में बस गए थे। उनके हेतु प्रौढ़-शिक्षा पाठ्यक्रम सदा उच्च कोटि के स्तर का न था। यह भय था कि कार्यक्रम केवल कार्यक्रम के उद्देश्य से ही किया जा रहा है। यद्यपि प्राथमिक व व्यावसायिक पाठ्यक्रम के पीछे विचारने और रहने के लिए सहायता वास्तव में अनिवार्य थी। महान् लेखक व कलाकारों के ऊपर व्याख्यान के समय उपस्थितों की संख्या विशाल होती थी, तथापि यह अस्वीकार नहीं किया जा सकता कि जो समस्याएँ उठाई जाती थीं उनके उत्तर वास्तव में उनसे बहुत कम सम्बन्ध रखते थे। अनेक मामलों में केवल व्यावहारिक प्रशिक्षण दिया गया। विद्यार्थी के व्यक्तित्व समाज और उसकी स्थिति में उचित सम्बन्ध स्थापित करने में असमर्थ होने के कारण प्रशिक्षण का वास्तविक शैक्षिक मूल्य नहीं के समान था। अनेक बार, केवल सनसनीपूर्ण व्याख्यान दिए जाते थे जिनका स्तर आधुनिक पत्रिकाओं के समान होता था।

शक्तिहीन होने के पश्चात्, प्रारम्भिक वर्षों में, प्रौढ़-शिक्षा संस्थाओं को समालोचना के लिए पर्याप्त स्थान था, और उनकी समयानुकूल विधि १९४८ की मुद्रा-सुधार के पश्चात् समाप्त हो गई।

३. नवीन कार्य

फिर भी, अनेक आर्थिक कठिनाइयों के उपरान्त, अनेक संस्थाएँ निजी कार्य व विस्तार करने में सफल हुई हैं, ताकि पश्चिमी जर्मनी में, १९५३ के वसन्त में, हमारे पास १९०० प्रौढ़-शिक्षा संस्थाएँ थीं जो सन्ध्या-कालीन कक्षा के पाठ्यक्रम चलाती थीं जब कि १९३२ में अखिल जर्मनी में २०० थीं।

ये संस्थाएँ निरन्तर "Mithirger Bildung" को अधिकाधिक ध्यान दे रही हैं। यह स्केन्डीनेवियन नाम हमने १९४५ से रखा है। यह नाम जर्मनी के माध्यम युग के

साहित्य में था, परन्तु अब स्वीडन से इसके नये अनुमान व अर्थ लगाकर इसे पुनः पुर-स्थापन किया है Mitrirgelichr का अर्थ है 'समुदाय में सामाजिक व राजनीतिक उत्तरदा-यित्व की शिक्षा। १९४५ से, जर्मनी के अधिकाधिक शिक्षकों ने यह अनुभव किया है कि, यदि नवीन लोकतन्त्र निर्माण करना है तो राजनीतिक शिक्षा का सम्बन्ध केवल नागरिक, पुण्यात्मा व बुद्धिमान मतदाता व करदाता से ही न होना चाहिए अपितु, ऐसे व्यक्ति से भी हो जो एक स्वतन्त्र व उत्तरदायित्वपूर्ण दैनिक जीवन व्यतीत कर रहा हो। इसमें समाज व राज्य दोनों की ओर उत्तरदायी होता है।

जर्मनी में प्रौढ़-शिक्षा का ध्येय 'समुदाय में सामाजिक व राजनीतिक उत्तरदायित्व के अभ्यास में शिक्षा' बन गया है। यह वर्तमान लोकतन्त्र की विशेषता के साथ पूर्ण न्याय करता है, जो कि औपचारिक संविधान के अतिरिक्त समाज में जीवन व्यतीत करने के ढंग से सम्बन्ध रखता है। अतः समुदाय में सामाजिक व राजनीतिक उत्तरदायित्व के अभ्यास की शिक्षा केवल औपचारिक राजनीतिक शिक्षा नहीं है, परन्तु साथ ही यह व्यक्ति और समाज के व्यक्तित्व के लिए प्रशिक्षण है।

यह विशेषतः जर्मनी में महत्वपूर्ण है जहाँ तानाशाही ने मध्य में आकर मानव व समाज के सर्व-प्राथमिक सम्बन्धों में उलझन उत्पन्न कर दी हो। मनुष्य के मूल्य और महत्व में और अपने साथियों की आवश्यक मर्यादा में विश्वास की पुनःस्थापना के लिए मनुष्यों की सहायता करनी चाहिए। प्रौढ़-शिक्षा के प्राकृतिक व मार्मिक सामाजिक समूहों को दृढ़ बनाने में सहायता करनी चाहिए जैसे परिवार, पड़ौसियों का समूह और ऐच्छिक संगठन जिनके कारण मनुष्य स्वतन्त्रतापूर्वक कार्य करते हैं। और जिन्हें आधुनिक जन-संगठनों से दब जाने का भय है। और उन्हें राज्य से भी डर है जो हाँ में-हाँ मिलाने की मनोवृत्ति को प्रोत्साहन देती हैं।

फिर भी, केवल मानवीय व सामाजिक अंशों पर ही ध्यान देना पर्याप्त नहीं है। लोकतन्त्र के क्रियाशील नागरिक को विचारने व राजनीतिक क्षेत्र में कार्य-निर्णय करने की क्षमता होनी चाहिए। यहाँ उन अराजनीतिक भावनाओं को मिटाना है जो जर्मनी निवासियों के हृदय में बस गई हैं, जिसका उद्भव तटस्थता से नहीं होता, परन्तु होता है राजनीतिक परिणाम के भय से जैसे एक जले हुए बालक की प्रतिक्रिया होती है, भाग्य में लिखे और अधिक राजनीतिक दुःखों का बेबसी से सामना करने के भय से। प्रौढ़-शिक्षा के द्वारा ही जनता को साहस व आत्मविश्वास की प्रेरणा मिलनी चाहिए जो कि राजनीतिक निर्णय और कार्य के लिए आवश्यक है। उन्हें राजनैतिक विचार व आकांक्षाएँ धारण करने के लिए प्रोत्साहन देना चाहिए। परन्तु आज जर्मनी में, राजनैतिक विचार में शिक्षा का अर्थ

है मानसिक उलझनों को, मस्तिष्क की शून्यता को, प्रायः नैतिक शून्यता को प्रकाशित करना जो नाज़ीवाद छोड़ गया है।

जर्मनी में लोक तन्त्रीय परम्पराएँ और जीवन व्यतीत करने की विधि अब भी प्रथम सीढ़ी पर ही हैं, जबकि नाज़ीवाद सिद्धान्त अपने चिन्ह छोड़ गए हैं, और तानाशाही के सार्वजनिक प्रचार की शंका अब भी देश को धमकी देती हैं। संवेगात्मक नारों और अनुत्तरदायी व तुच्छ निष्क्रमण की ओर इस प्रचार की प्रवृत्ति हो रही है। ऐसे देश में और ऐसे समय में जहाँ लोक तन्त्रीय तत्व का अत्यन्त अभाव है और जहाँ धर्मोन्माद हठ, दलीय पृथकता, निरंकुश राज्य में विश्वास करने वालों की सार्वजनिक संगठन की माँग वास्तविक लोक-तन्त्रीय इच्छा निर्माण में विशाल विघ्न डालती हो, ऐसे स्थान में यह आवश्यक है कि ऐसी प्रौढ़-शिक्षा हो जो इन दलों से पृथक हो और विद्यार्थियों को कार्य-विषमता में शिक्षित करे ताकि वे लोक-तन्त्रीय उत्तरदायित्व के योग्य बन सकें।

४. सामाजिक जीवन के लिए प्रौढ़-शिक्षा का व्यावहारिक आरम्भ

जर्मनी की प्रौढ़-शिक्षा संस्थाएँ निरन्तर इस बात से सचेत होती जा रही हैं कि उनके विद्यार्थियों के लिए विस्तृत सामाजिक व राजनीतिक प्रशिक्षण की महान् आवश्यकता है। जब कि युद्ध के पश्चात् प्रथम कुछ वर्षों में संस्थाओं का झुकाव सामाजिक व राजनीतिक समस्याओं को स्थान देना नहीं था, परन्तु प्रत्यक्ष व्यावसायिक प्रशिक्षण अथवा ज्ञानोन्नति के प्रत्यक्ष अनुपद्रवी तटस्थ क्षेत्र की ओर संलग्न होना था। गत तीन-चार वर्षों से उनका झुकाव राजनीतिक शिक्षा को विस्तृत करना रहा है। इसके अन्तर्गत सामाजिक और व्यक्तिगत पहलू भी हैं और इस प्रकार विस्तृत होकर समस्त कार्य का केन्द्रीय आधार बन गया। निःसन्देह इस प्रवृत्ति ने सर्वत्र समान तीव्रता अथवा समान सफलता नहीं पाई तथापि यह पश्चिमी जर्मनी के समस्त Lander में पाई जाती है। समुदाय में सामाजिक व राजनीतिक उत्तरदायित्व के अभ्यास की शिक्षा की ओर इस परिवर्तन की कैसे अभिव्यक्ति की जाती है ? किसी कार्य के अभिप्राय पूर्ण सामाजिक आधार में, चुने हुए विषयों और पद्धति में, नवीन प्रकार के सामूहिक कार्य में तथा विद्यालयों के कार्यक्रमों में हमें यह मिलता है। पुरातन पाठन-पद्धति, विभिन्न विषयों में संलग्न होने की विधि का त्याग कर दिया गया है। कुछ विशेष मध्यम वर्ग के समूहों के लिए कृत्रिम मनोरंजन से अधिक इसने कुछ नहीं किया और व्यक्ति विशेष की ओर ध्यान दिया जा रहा है जो अन्य व्यक्तियों के साथ सामाजिक भाग्य का भोगी है और अपनी स्पष्ट रुचियों के साथ, विशेष सामाजिक समूह के सदस्य की भाँति रहता है।

एक समस्या यह थी कि श्रम-जीवी-वर्ग—जिनमें श्वेत वस्त्रधारी श्रमजीवी भी हैं—इस प्रौढ़ शिक्षा में कैसे रुचि लें। इसका परिणाम शिक्षा योजना Arbeit and Laben का निर्माण हुआ। इसका प्रशासन कार्मिक संघ और प्रौढ़-शिक्षा संस्थाओं के संयुक्त हाथों में है। नवीन पद्धति का प्रयोग किया गया है। जहाँ तक सम्भव हो सका सामाजिक और राजनैतिक प्रशिक्षण के साथ व्यावसायिक पाठ्य-क्रम को भी मिला लिया गया है। अन्य कई विभिन्न विषयों के प्राथमिक और उच्चतर पाठ्य-क्रम का भी प्रबन्ध हुआ है। Arbeit और Laben ने अपना कार्य (Lower saxony) १९४८ की शरद् ऋतु में आरम्भ किया, और शीघ्र ही अधिकतम पश्चिमी जर्मनी के Lander में विस्तृत हो गया, और १९५१ के शरद् काल में एक Arbeit और Laben संघ, जो समस्त पश्चिमी जर्मनी में फैल गया था, बनाया गया। इसी प्रकार ग्रामीण जनता, खोए हुए प्रदेश के शरणार्थी, असैनिक सेवा (विशेषतः पुलिस तथा सीमा पुलिस), स्त्रियों व युवकों जैसे अन्य दलों की विशेष आवश्यकताओं व हितों की देख-भाल प्रौढ़-शिक्षा संस्थाएँ करती रही हैं। इसका यह अर्थ नहीं है कि प्रौढ़-शिक्षा के कार्य को व्यक्तिगत तथा पृथक शैक्षिक कार्य में विभाजित किया जाए। भिन्न-भिन्न वर्गों तथा मतों के व्यक्तियों का परस्पर सम्पर्क कराके सामाजिक एकता की उन्नति ही इसका ध्येय होना चाहिए। चुनी हुई पद्धति में उसकी एकता के उद्देश्य का प्रतिरूप दृष्टिगोचर होता है।

जर्मनी के प्रौढ़-शिक्षक 'सक्रिय दल' के सम्बन्ध में बोलना पसन्द करते हैं। 'सक्रिय-दल' से उनका तात्पर्य है एक प्रकार की समाचारप्रद वार्ता जिसमें विविध सामाजिक, राजनैतिक तथा धार्मिक दलों के सदस्य भाग लेते हैं। इसमें सर्वज्ञाता शिक्षक व अज्ञान शिष्य के मध्य का प्राचीन भेद मिटा दिया गया है। पहले के श्रान्त श्रोतागण अब समान अधिकार प्राप्त सक्रिय सह-कार्य-कर्ता बन गए हैं।

सक्रिय दल की यह भावना प्रौढ़-शिक्षा विद्यालयों की शिक्षा पद्धति में प्रधान होनी चाहिए। जहाँ कहीं भी संभाषण विषय के लिए उचित न हों, वहाँ व्याख्यान के पश्चात् विवाद का ध्येय विचार-विमर्श होना चाहिए ताकि उपस्थित व्यक्ति यथार्थ सह-भागी बन सकें। इसी प्रकार लोकतंत्रीय नागरिकों के हेतु प्रौढ़-शिक्षा संस्थाएँ प्रशिक्षण भूमि दे सकती हैं।

पाठ्य-क्रम में Mithirgerlicha Eaziehung नवीन विषय नहीं है, अपितु एक नवीन शिक्षात्मक रूप। इस सिद्धान्त की भावना इस क्षेत्र के समस्त कार्य में व्याप्त है। प्राथमिक भाषा के पाठ के अन्तर्गत हैं। व्यावसायिक प्रशिक्षण के उपयोगी साधन, कलात्मक और साहित्यिक पाठ, दार्शनिक तथा प्राकृतिक विज्ञान के प्रत्येक पाठ्य-क्रम व वाद-विवाद इसी सामान्य उद्देश्य पर आधारित होने चाहिए।

यह समस्त अध्यापकों व विद्यार्थियों से बहुत अधिक आशा करना है कि वे संस्थाएँ जिनका उद्देश्य केवल शिक्षा व मनोरंजन हो, तथा जो औपचारिक नियमों व दक्ष प्रशासन के अनुसार चलते हों, उन संस्थाओं से प्रौढ़-शिक्षा संस्थाओं को उच्च तर होना चाहिए। केवल तभी वे अपनी उद्देश्य पूर्ति कर सकती हैं। प्रौढ़-शिक्षण एक लोकतंत्रीय आन्दोलन बन जाना चाहिए जो इसके लिए कार्य करें, वह इसे चलाएँ और सहारा दें।

ऐसे अनेक चिन्ह हैं जिनसे ज्ञात होता है कि समुदाय में सामाजिक व राजनीतिक उत्तरदायित्व के अभ्यास की शिक्षा का सिद्धान्त शिक्षा पद्धति के अतिरिक्त विशिष्ट प्रकार के नवीन प्रौढ़-शिक्षा विद्यालयों के लिए भी पथप्रदर्शक होता जा रहा है। मेरा अर्थ उन संस्थाओं की स्थापना से है जिन्होंने विभिन्न स्थानों में अपने विशेष भवन निर्माण किए हैं तथा अध्यापकों के नियमित सम्मेलन, छात्रों के नेताओं की सभाएँ, देश के सुन्दर स्थानों में स्थित छात्रावासों में जाकर प्रौढ़-शिक्षा समूहों का शनिवार व्यतीत करना, विशेषतया सक्रिय विद्यार्थियों तथा अध्यापकों का स्वतन्त्र शैक्षिक समुदाय में संघटित होना।

अब विषय के चुनाव का प्रश्न रहा। राजनीतिक, आर्थिक तथा सामाजिक विषयों का चुनाव एवं व्यवस्था संकुचित तथा अधिकतर शैक्षणिक अर्थ से प्रायः जहाँ तक सम्भव हो सके, स्थानीय रुचि के अनुसार होता है। (उदाहरणार्थ, "पूर्व और पश्चिम के मध्य जर्मनी," "महान् शक्तियाँ," "शूमन योजना और ई. डी. सी., 'संयुक्त यूरोप की ओर नीति' 'लोक-तन्त्र' तथा 'तानाशाही राज्य', 'वैमार गणराज्य को हिटलर ने नष्ट कर दिया ?" "प्रबन्ध में श्रमिकों का भाग"; "स्वतन्त्र उद्योग अथवा नियोजित बचत ?" "स्थानीय सरकार के ध्येय तथा रूप," "गिरिजा और राजनीति।"

कदाचित् विषयों का अन्य समूह विशेषतः महत्वपूर्ण हैं। विषय, जोकि सामुदायिक जीवन से सम्बन्ध रखते हों "मनुष्य तथा प्राविधिक उन्नति"; "व्यक्ति और जनता"; 'क्या शक्ति सत्य से अधिक बलशाली है ?" 'स्वतन्त्रता और अनुग्रह', 'स्त्रियों की समानता'; 'आधुनिक समाज में युवा का स्थान'; 'समकालीन साहित्य व दर्शन में मनुष्य का स्वप्न'; 'अपने साथियों की ओर मेरा व्यवहार कैसा होना चाहिए,' 'युवकों के लिए उचित चाल-ढाल' पर पाठ्य-क्रम की बढ़ती हुई माँग।)

इस प्रकार हमारे पास कोई पूर्ण परिणाम नहीं है। उचित विषयों तथा पद्धतियों का कोई एक परिचित मार्ग नहीं है। लेकिन हम सब नवीन कार्य की भाँति समस्यामय तथा उत्तेजित प्रयोग के मध्य में खड़े हैं। वार्षिक सम्मेलनों में, और अपने शिक्षकों के प्रशिक्षण के पाठ्य-क्रम में पौढ़-शिक्षा अधिकारी परामर्श देने का प्रयत्न करते हैं। जो अनुभव वे ग्रहण करते हैं उनका वर्गीकरण करने और उनका लाभ उठाने का प्रयत्न करते हैं।

Lander के प्रौढ़-शिक्षा संघ की संघीय कार्यकारिणी द्वारा जो विचार-गोष्ठी हुई थी, उसमें गत तीन वर्षों से समाज-शिक्षा कार्यक्रम के विषय में वाद-विवाद सर्व प्रथम था।

५. प्रौढ़-शिक्षा संस्थाओं का संघटन

पश्चिमी जर्मनी में प्रौढ़-शिक्षा सम्बन्धी कार्य-कलापों का सबसे बड़ा उत्तरदायित्व प्रौढ़-शिक्षा संघ के ऊपर है।

हमें सन्ध्याकालीन संस्थाओं तथा आवासिक विद्यालयों का अन्तर जानना चाहिए। आवासिक विद्यालयों की व्यवस्था स्वाधीन है। उनकी रचना कुछ तो उस स्थान के अनुसार है जहाँ वह स्थित है, और कुछ उत्तरदायी संगठन के गुण और उद्देश्यों के अनुसार। सन्ध्या-कालीन संस्थाएँ या तो स्वेच्छिक संगठन हैं और या जनता सहायता करती है। प्रायः प्रत्येक विशाल नगर और सामान्य नगर में निजी सन्ध्याकालीन संस्था है; अनेक निकटवर्ती नगरों तथा ग्रामीण क्षेत्रों ने अपनी सन्ध्या-कालीन ग्रामीण प्रौढ़-शिक्षा संस्थाएँ, किंवा नगर की सन्ध्या कालीन प्रौढ़-शिक्षा संस्था की शाखा चालू कर ली हैं। ये संस्थाएँ कृषकों के प्रतिनिधियों, ग्राम के शिक्षकों तथा पादरियों के साथ-साथ काम करके विशेषतया ग्रामीण शिक्षा कार्य करने का प्रयास करती हैं। आवासिक विद्यालयों की, जिसका उद्योग में व्यस्त युवकों से सम्पर्क रहता है, Arbeit and Leben योजना में सक्रियात्मक रूप से रुचि है।

एक Land से अधिक में सन्ध्याकालीन संस्था और आवासिक विद्यालय एक प्रति-निधि और परामर्शदाता प्रौढ़-शिक्षा संघ बनाने के लिए परस्पर संयुक्त हो गये हैं। यह संघ प्रौढ़-शिक्षा, मुख्याध्यापकों, शिक्षकों तथा प्रशासकों के लिए नियमित सम्मेलन और पाठ्य-क्रमों की व्यवस्था करते हैं। १९४९ में, Land Unions (Virvande) की एक संस्था स्थापित की गई थी और अब तक सब Land Unions सदस्य बन गये हैं। इस संस्था का कार्य है कि वह सरकार एवं विदेशों में प्रौढ़-शिक्षा का प्रतिनिधित्व करे। इसके अतिरिक्त विचार-विनमय तथा कार्य का समन्वय भी इसका ध्येय है। यह अनियन्त्रित संघ की भाँति आरम्भ हुई परन्तु दो वर्ष में ही इसका नियमित ढाँचा बन गया। अब इसकी सभा, कार्यकारिणी समिति अध्यक्ष तथा कार्यालय हैं।

६. प्रौढ़-शिक्षा संस्थाएँ तथा सार्वजनिक कोष से सहायता

जब तक जर्मनी की प्रौढ़-शिक्षा ने अपने को व्यावसायिक प्रशिक्षण तथा मनोरंजन तक सीमित रखा, इसे विलासता माना जा सकता था। तब तक Lander संसद तथा अन्य अधिकारियों की इच्छा पर निर्भर था कि वे इसे वित्तीय सहायता दें या न दें। अब

जर्मन प्रौढ़-शिक्षा ने एक सामाजिक ध्येय निश्चित कर लिया है। समुदाय में सामाजिक व राजनीतिक उत्तरदायित्व के अभ्यास की शिक्षा के उद्देश्यों को स्वीकार करके लोकतन्त्र की उत्पत्ति तथा उसे बनाये रखने में प्रौढ़-शिक्षा ने आवश्यक सहायता दी है। अतः सार्वजनिक मान्यता तथा अधिकृत सहायता प्राप्ति का अधिकार उचित ही है।

केन्द्रीय तथा स्थानीय सरकारी अधिकारी, राजनीतिक दल, सामाजिक संस्थाएँ, गिरिजा, विश्वविद्यालय, प्रसार कार्यालय अब प्रौढ़-शिक्षा की ओर अधिकाधिक ध्यान देने लगे हैं।

संघीय गणतन्त्र के सभी Lander ने अपने शिक्षा मन्त्रालय में प्रौढ़-शिक्षा के विशेष विभाग स्थापित कर लिए हैं। सन्ध्याकालीन संस्थाओं तथा आवासिक विद्यालयों को नियमित उपादान दिया जाता है। शिक्षकों के प्रशिक्षण तथा प्रत्यास्मरण पाठ्यक्रम के लिए भी वे आर्थिक सहायता देते हैं।

अनेक नगर इन संस्थाओं को वार्षिक अनुदान भी देते हैं। कुछ की राशि बहुत बड़ी होती है। स्थानीय सरकार का उच्चतम अंश, नगर समितियों का संघ, प्रौढ़ शिक्षा के सामाजिक ढंग की वकालत सहानुभूति के साथ करते हैं।

कई Lander में संस्थाएँ वैध नियमित मान्यता का प्रयास कर रही हैं ताकि अधिकारीगण उन्हें वित्तीय सहायता देने के लिए वैध रूप से बाध्य हो जायें। २४ फरवरी, १९५३ को, नॉर्थ राइन वैस्टफलिया की संसद ने सर्व-सम्मति से एक प्रौढ़-शिक्षा विधेयक पारित कर दिया। इस विधेयक के अनुसार प्रौढ़-शिक्षा संस्थाओं के सामाजिक कार्य को पूर्ण मान्यता दी गई। इस धारा के अनुसार प्रौढ़-शिक्षा लोक-तन्त्रीय विचार तथा कार्यक्रम को सामाजिक रूप से जागृत करे। इस विधेयक में यह भी कहा गया कि राज्य को उनका स्वशासन तथा पाठ्य-क्रम निश्चित करने की आवश्यकता है। Land अधिकारी विशेष अनुदान के रूप में जो राशि आवश्यक समझें, उस राशि का कम-से-कम २५ प्रतिशत भाग पृथक् संस्थाओं को दें।

निःसंदेह, इससे ऐसी समस्याएँ उठ खड़ी होती हैं जो संस्थाओं की स्वतन्त्रता के लिए प्रारम्भिक महत्त्व की हैं—

(१) यह कौन निर्णय करेगा कि अमुक प्रौढ़-शिक्षा संस्था मान्यता व सहायता के योग्य है और किस आधार पर।

(२) एक संस्था जिसे सरकार से अनुदान प्राप्त होता हो, तो वह संस्था उस राज्य पर किस सीमा तक निर्भर हो जाती है ?

उदाहरणार्थ, क्या यह मानना होगा कि जो अनुदान देते हैं उन्हें संस्था के वित्तीय

मामलों के अतिरिक्त उसके काम-काज पर भी शासन करना चाहिए। उनके कर्मचारी साधारण नीति के मामलों में भी विघ्न डालकर क्या वे अधिकारी स्वशासन के लिए खतरा बन जायेंगे ?

(३) क्या राजनीतिक दल और ऐसे ही अन्य संघ यह मानने को तैयार हैं कि संस्थाओं के लोकतन्त्रीय संगठन का कार्य केवल स्वतन्त्रता में तथा राजनीतिक दलों के अभाव तथा विभिन्न राज्यों के साम्प्रदायिक मतों के अभाव में ही पूर्ण किया जा सकता है ? क्या वे आर्थिक व राजनीतिक बल से संस्थाओं को एक विशिष्ट प्रकार के राजनीतिक उद्देश्यों की पूर्ति के लिए साधन बनायेंगे ? इस प्रकार क्या वे भूमि को ही नष्ट कर देंगे जो लोकतन्त्रीय जीवन प्रणाली की उत्पत्ति का कारण है ?

यह पश्चिमी जर्मनी की आज की समस्याओं तक पहुँचती है।

७. जर्मनी के समुदाय में राजनीनिक व सामाजिक उत्तरदायित्व के अभ्यास के लिए प्रौढ़-शिक्षा की कुछ समस्याएँ

उपयुक्त उद्देश्यों की पूर्ति विशेषतया तीन बातों पर निर्भर है। वर्तमान जर्मनी में इनकी पूर्ति की व्यवस्था नहीं है। वे हैं—

(१) प्रौढ़-शिक्षा संस्थाओं की स्वतन्त्रता तथा स्वाधीनता में विघ्न डाले बिना पर्याप्त सार्वजनिक अनुदान देना चाहिए।

(२) लोकतन्त्र की सैद्धान्तिक तथा व्यावहारिक शिक्षा ऐसी होनी चाहिए कि वह विद्यार्थी को रुचिकर हो और वे उसे ग्रहण कर ले।

(३) कुछ सार्वकालिक और कुछ अंशकालिक के उपयुक्त अध्यापक रखने चाहिए जो पर्याप्त संख्या में हों।

इन बातों पर मैं निम्नलिखित टीका प्रस्तुत करता हूँ—

प्रथम तो सार्वजनिक आर्थिक सहायता के साथ संस्था की स्वतन्त्रता की संधि, लोकतन्त्रीय विश्वासों को तथा उससे सम्बन्ध रखने वालों के व्यवहार को चुनौती है। यदि हमारे पास ऐसे केन्द्रीय तथा स्थानीय सरकारी राजनीतिज्ञ, बड़ी-बड़ी संस्थाओं के अधिकारी असैनिक कर्मचारी पर्याप्त संख्या में होते जो लोकतन्त्रीय जीवन में शिक्षा की महत्ता समझते हों और यदि शिक्षा लोकतन्त्र, स्वतन्त्रता व स्वशासन में उनकी इतनी गहरी आस्था हो कि वे ऐसी संस्थाओं के साथ व्यवहार करते समय कभी अपनी शक्ति का दुरुपयोग नहीं करेंगे। अन्त में, यद्यपि यह बात कम महत्त्वपूर्ण नहीं है, यदि हमें ऐसी संस्थाएँ पर्याप्त संख्या में प्राप्त हो जाएँ, जो अपने शैक्षिक लाभ द्वारा तथा समाज के लिए मूल्यवान व्यक्तित्व द्वारा

जनता का विश्वास प्राप्त कर सके, तब हमारी समस्या का समाधान ऐसे नगर में सफल नहीं हो सकता जहाँ अधिकारी पदवियों के सामने नागरिक अभिमान अब भी फीका पड़ जाता है तथा जहाँ से तानाशाही के चिह्न अभी तक लुप्त नहीं हुए।

दूसरी बात का सम्बन्ध जहाँ तक है, जर्मनी में सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि वे लोकतन्त्र पर केवल विश्वास ही नहीं करते, या केवल उसे उच्च आदर्श समझकर छोड़ नहीं देते, बल्कि दैनिक जीवन के सहस्रों मामलों में उसका अनुभव भी करते हैं। लोकतन्त्रीय स्वतन्त्रता केवल वहीं टिक सकती है जहाँ मानव तथा समाज का मूल्य माननीय होता है तथा व्यवहार में लाया जाता है। समुदाय में सामाजिक तथा राजनीतिक उत्तरदायित्व के अभ्यास की शिक्षा के लिए चाहिए कि वो लोकतन्त्रीय मूल्यों के गुणों को भली भाँति समझा सकें। उन पर विश्वास उत्पन्न करा सके तथा व्यावहारिक जीवन का एक अंग बन सके। यदि राजनैतिक तथा सामाजिक परिस्थितियों के दैनिक अनुभव इसके विपरीत हों तो लोकतान्त्रिक शिक्षा अवश्यमेव असफल रहेगी। इस प्रकार तो समस्या का हल शिक्षक नहीं राजनीतिज्ञ ही कर सकते हैं।

यद्यपि राजतान्त्रिक पद्धति केवल शिक्षा का परिणाम नहीं हो सकता, तथापि लोकतन्त्रीय समाज के निर्माण में यह एक आवश्यक अंग है। इससे प्रौढ़-शिक्षा अपना स्वतन्त्र सामाजिक कार्य तथा उत्तरदायित्व ग्रहण करती है। प्रौढ़-शिक्षा को इस योग्य बना देना चाहिए कि वे पक्षपात के तूफ़ान का भी सामना कर सकें। विद्यार्थियों को अपने व्यक्तिगत उत्तरदायित्व का स्मरण कराना चाहिए। उनमें राजनैतिक साहस तथा असहमति प्रकट कर सकने की भावना उत्पन्न कर सके। विद्यार्थियों को इस बात के लिए प्रशिक्षित करना चाहिए कि वे अवकाश का किस प्रकार सक्रिय उपयोग कर सकते हैं, सामूहिक जीवन को स्वतन्त्र रूप में कैसे व्यतीत किया जाए। उत्तरदायी आत्म सरकार तथा उत्तरदायित्वों का किस प्रकार साझा किया जाता है। यदि संस्थाओं में वास्तविक मानवीय व्यवहार तथा लोकतन्त्र का वातावरण उत्पन्न हो जाए तो यह लोकतन्त्रीय मूल्य की शिक्षा में चरण होगा। विशेष रूप से ऐसे वातावरण में जहाँ अभी कुछ ही अंशों में लोकतन्त्र है। सफलता तो अधिकतर प्रौढ़-शिक्षकों के गुणों पर ही निर्भर है।

जहाँ तक (३) इसका सम्बन्ध है शिक्षकों से सामाजिक सजगता पूर्ण प्रौढ़-शिक्षा की अधिक आशा की जाती है, वे ऐसे व्यक्ति होने चाहिए जिन्हें, जिस समाज में वे रहते और कार्य करते हों, उसके जीवन का उन्हें अनुभव हो जो उसके उद्देश्यों को जानते हों। वे अपने अध्ययन के विशिष्ट क्षेत्रों के विशेषज्ञ हों। अपनी समकालीन समस्याओं को वे समझते हों और उनके प्रति जागरूक हों और विचार तथा जीवन के लोकतंत्रात्मक ढंग की स्थापना

के लिए सतत उद्योगशील हों। व्यवहार में ऐसे व्यक्ति हमें ऐसे शिक्षकों में मिल सकते हैं जो व्यावसायिक रूप से शिक्षक हों और सामान्य व्यक्ति में भी। हमारे शिक्षक आज अधिकांश प्रौढ़-शिक्षा के कार्य को गौण रूप से करते हैं। इससे जो जीवन के विविध क्षेत्रों का अनुभव और सम्पर्क स्थापित हो सकता है, वह निस्सन्देह अत्यन्त मूल्यवान होता है परन्तु उसका पूर्ण लाभ तभी प्राप्त किया जा सकता है और उसे तभी समूचे कार्य का अंग बनाया जा सकता है जब कि प्रौढ़-शिक्षण कार्यकर्ताओं की एक सार्वकालिक श्रेणी बनाई जाए।

यहाँ हम जर्मनी की संस्थाओं में नियुक्तियों की समस्या के सम्बन्ध में विचार करते हैं। ऐसे व्यक्तियों का अभाव है जो अपने वचनों या आचरण से एक वांछनीय प्रवृत्ति उत्पन्न कर सकें। क्योंकि जैसा पहले स्पष्ट किया जा चुका है, जर्मनी में आज उपर्युक्त व्यक्तियों का अभाव है और ऐसे कुछ व्यक्ति जो जन्मतः राजनीतिक शिक्षक प्रतीत होते हैं, वे सब सार्वजनिक सेवाओं में कार्य कर रहे हैं। इसके अतिरिक्त पूर्ण-कालीन शिक्षकों की श्रेणी अभी कमजोर है। सायंकालीन और आवासिक विद्यालय, जिनकी कुल संख्या लगभग १६०० है, उनमें ऐसे अध्यापक और संगठनकर्ता कठिनाई से सौ होंगे जिनका मुख्य व्यवसाय अधिकतर यही हो। पूर्णकालीन, व्यावसायिक और वित्तीय स्थिति सुरक्षित और सन्तोषजनक नहीं होती। यह सत्य है कि आगे बढ़कर काम वही व्यक्ति कर सकते हैं जो इसे निजी वास्तविक व्यवसाय के रूप में ग्रहण करें और अपने आराम और स्थायित्व के सम्बन्ध में चिन्ता न करें। किन्तु यदि उनकी इस मार्गदर्शक भावना पर अधिक भार पड़ेगा तो वे असमय में ही थक जायेंगे और नए उत्साही कार्यकर्ता निरुत्साहित हो जाएँगे। जर्मन प्रौढ़-शिक्षा के कर्मचारियों की समस्या सार्वजनिक धन-संग्रह और उदारतापूर्ण प्रशिक्षण पद्धति के द्वारा हल की जा सकती है। पूर्ण सामयिक ऐसे पर्याप्त स्थान निकाले जाने चाहिए जिनके प्रति इस कार्य को व्यावसायिक रूप से ग्रहण करने वाले व्यक्ति सामाजिक प्रतिष्ठा और वित्तीय लाभ की दृष्टि से आकृष्ट हो सकें। अंश-कालीन शिक्षकों का पारिश्रमिक स्तर भी अन्य देशों में इसी प्रकार के कर्मचारियों के पारिश्रमिक स्तर की समता में लाया जाना चाहिए। शिक्षण के पाठ्य-क्रम में भी सुधार होना आवश्यक है। समूचे कार्य की प्रगति की दृष्टि से इस बात का सर्वाधिक महत्व है। अंशकालीन शिक्षकों के लिए, ऊँचे पाठ्यक्रम नियमित रूप से रखे जाते हैं। पूर्णकालीन शिक्षकों को प्रशिक्षण देने के सम्बन्ध में गोरडे लोक उच्च विद्यालय और कील तथा फ्रैंक-फर्ट विश्वविद्यालयों में की गई विचार-गोष्ठियों से प्राप्त अनुभव से ज्ञात होता है कि इस प्रकार के प्रशिक्षण के लिए बहुत अधिक समय, धन और शक्ति के व्यय की आवश्यकता है। प्रशिक्षण की अवधि इतनी दीर्घ होनी

चाहिए कि उसमें पूर्णरूपेण सैद्धान्तिक तथा व्यावहारिक प्रशिक्षण दिया जा सके और यह प्रशिक्षण-कार्य जिनके हाथ में हो, वे अपने कार्य के मानवीय और सामाजिक अर्थों के प्रति सजग हों। शिक्षण के सम्बन्ध में बड़े-बड़े ऊँचे सिद्धान्तों का कोई लाभ नहीं होगा जब तक उन्हें कार्यान्वित करने वाले शिक्षक नहीं होंगे। आगामी वर्षों में जर्मनी में प्रौढ़ शिक्षण की प्रगति के लिए मुख्यतः इस बात की आवश्यकता है कि जिन व्यक्तियों पर इस कार्य का उत्तरदायित्व हो वे इस कार्य के मानवीय पक्ष को पूर्णरूपेण समझें और उसे हृदयंगम करें।

८. अन्तर्राष्ट्रीय समझौते की भावना—समुदाय में राजनीतिक व सामाजिक उत्तरदायित्व के अभ्यास में प्रौढ़-शिक्षा को चुनौती

१९१९ में, विश्व-प्रौढ़-शिक्षा परिषद् की स्थापना के कुछ समय पश्चात् ही जर्मनी के प्रौढ़-शिक्षकों ने उसमें प्रवेश कर लिया और हिटलर के शक्तिशाली होने तक उसके कार्य में सक्रिय रूप से भाग लिया। जब जर्मन प्रौढ़शिक्षा आन्दोलन फिर से आरम्भ हुआ तो अन्य देशों के स्वतन्त्र प्रौढ़-शिक्षण से इसे नए सम्पर्क स्थापित करने पड़े। राष्ट्रीय सामाजिक सिद्धान्त द्वारा, जर्मनी के पृथक् हो जाने के पश्चात् और विजयी शक्तियों द्वारा किये गए राजनीतिक-शैक्षिक प्रयोग के कारण यह सब सरल न था। युद्धकालीन बन्दीगण तथा निष्क्रान्त लोग जर्मनी लौटते समय जनतन्त्रीय देशों से प्रौढ़-शिक्षण के सम्पर्क भी ले आए। विदेशी शिक्षकगण भी जर्मनी आए और पुनर्निर्माण कार्य में मूल्यवान सहायता दी। स्कैण्डीनेविया के देशों में इंगलैंड, फ्रांस, संयुक्त राष्ट्र, हॉलैण्ड तथा स्वीट्ज़रलैण्ड, इन सभी देशों में ग्रीष्मकालीन विद्यालयों व प्रौढ़-शिक्षण के दीर्घकालीन पाठ्यक्रम के लिए जर्मनी के शिक्षकों को आमन्त्रित किया गया। हमारे सैकड़ों शिक्षकों ने इन नियन्त्रणों को सहर्ष स्वीकार कर लिया। राष्ट्रीय बौद्धिक भेदभाव की सीमाओं को उन्होंने भंग कर दिया और उन्होंने स्वयं यह देखा कि जनतन्त्रीय संघटन के प्रक्रम में उचित ढंग की प्रौढ़-शिक्षा को सहायता करनी है। इन अध्ययन यात्राओं से अनेकों ने क्रियाशील सामाजिक जनतन्त्र की सराहना की। अनेकों को देश के सच्चे कार्यकर्ता बनने के लिए अन्तर्राष्ट्रीय सहकार में गहन रुचि उत्पन्न हो गई।

अन्त में यह मान लिया गया कि अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों के अन्त से ही आधुनिक संसार में, जर्मनी की राजनीतिक स्थिति का वास्तविक ज्ञान होगा। यह समझ लिया कि जर्मनी का राष्ट्रीय भविष्य, जर्मनी की स्वतन्त्रता का प्रश्न तथा जर्मनी का पुनरैक्य यूरोप के भविष्य से सम्बन्धित हैं। अतएव यूरोप की नागरिकता का शिक्षण ही समुदाय में सामा-

जिक व राजनीतिक उत्तरदायित्व के अभ्यास की शिक्षा का सच्चा ध्येय माना जाता है।

पाठ्यक्रम में तथा प्रौढ़-शिक्षण संस्थाओं में एक सामान्य यूरोप-निवासी के दृष्टि-कोण से ही राजनीतिक, सामाजिक आर्थिक तथा बौद्धिक सम्बन्धों पर विचार-विमर्श होता है। उद्देश्य वास्तविक है जो न तो राष्ट्रीय परिस्थितियों तथा संघर्षों (उदाहरणार्थ सीमा समस्याएँ) की उपेक्षा करता है और न ही इस तथ्य को भूलता है कि सामाजिक, राजनीतिक तथा बौद्धिक क्षेत्रों में, उद्देश्य, लक्ष्य व हित के ऐक्य के आधार पर ही यूरोप संगठित हो सकता है। यूरोप में ऐसी सार्वलौकिक चैतन्य के जागरण के लिए विद्यार्थी को, ऐतिहासिक तिथियाँ, आर्थिक आँकड़े तथा विधान व न्याय के नियम समझाने के अतिरिक्त और बहुत कुछ समझाने की आवश्यकता है। उसका व्यक्तित्व तथा इच्छा-शक्ति इससे प्रभावित व जागृत होनी चाहिए। विद्यार्थी की बुद्धि पक्षपात व घृणा से दूर, राष्ट्रीय युग के मिथ्या सामान्य वक्तव्यों व राजनीतिक कथा-कहानियों से प्रभावित नहीं होनी चाहिए। उसके मस्तिष्क को सदा आधुनिक वास्तविकता, यूरोप के तथ्यों तथा वर्तमान सार्वलौकिक समस्याओं के मध्य की कड़ी जानने को सदैव तत्पर रहना चाहिए।

विविध देशों के सदस्यों में वैयक्तिक सम्पर्क स्थापित करने के लिए भलीभाँति आयोजित अन्य देशों की अध्ययन यात्रा, प्रौढ़-शिक्षकों का अन्तर्राष्ट्रीय विनिमय और ग्रीष्मकालीन विद्यालयों तथा सम्मेलनों का बहुत बड़ा मूल्य है। जर्मनी की प्रौढ़-शिक्षा संस्थाओं के अनेक संघों ने योरुप के सिद्धान्त के अनुसार अपना कार्य किया है। प्रौढ़शिक्षण कार्यक्रम में जो कुछ सामाजिक व लोकतन्त्रीय अंश को महत्ता बतलाई गई है, वह यूरोप तथा राष्ट्रीय दोनों ही क्षेत्रों में घटित होती है। यूरोप की भावना लेकर ही व्यावसायिक प्रशिक्षण पाठ्यक्रम, भाषा पाठ्यक्रम, कला समूह तथा साहित्य व दर्शन पर विचारार्थ समूह प्रेरित हो सकते हैं और होना चाहिए भी। गोरडे लोक उच्च विद्यालय की भाँति विद्यालय, १९४७ से, पृथक्-पृथक् भी, बौद्धिक तथा सामाजिक दोनों ही क्षेत्रों में सोच विचार कर इस मार्ग पर अग्रसर हुए हैं। विविध प्रकार के पाठ्यक्रम निर्मित किये गए हैं। यूरोप के पाठ्यक्रम ऐसे आधारभूत हैं जो सामान्य ऐतिहासिक, भौगोलिक, सामाजिक, बौद्धिक समस्याओं तथा यूरोप की एकता की वास्तविकता पर बनाये गए हैं। 'यूरोप के निर्माण,' पाठ्यक्रम में यूरोप के राजनीतिक संगठन के आधुनिक प्रयास, इसके उद्देश्य तथा बाधाओं का बारीकी से अध्ययन किया गया है। अन्त में यूरोप के ग्रीष्मकालीन विद्यालय हैं। विविध देशों के राजनीतिक क्षेत्रों में क्रियाशील नवयुवक उसके सदस्य हैं। वे सीखने का प्रयास करते हैं, परस्पर वादविवाद करते हैं और इस प्रकार साथ रहकर एक-दूसरे के निकट आते हैं। विभिन्न राष्ट्रों के तत्वावधान में जनतन्त्रीय शिक्षा आन्दोलन कहकर १९वीं

सदी में बौद्धिक विकास हेतु प्रौढ़शिक्षा का प्रारम्भ हुआ। १९१९ से जर्मन प्रौढ़शिक्षा भी ऐसी ही राष्ट्रीय तथा जनतन्त्रीय शैक्षिक आन्दोलन है। वर्तमान सामाजिक विषयों पर महत्व देते समय उसकी जनता के लोकतन्त्रीय संगठन तक ही सीमित नहीं रहना चाहिए। युग की माँग की परिपूर्ति के लिए इसे राष्ट्रीय सीमा का अतिक्रमण करना चाहिए तथा उस अन्तर्योरोपियन व अन्तर्राष्ट्रीय शैक्षिक आन्दोलन का अंश बन जाना चाहिए जो समस्त स्वाधीन जनता से सम्बन्ध रखती हो और यूरोप समाज का स्वाधीन संघटन ही जिसका लक्ष्य हो।

पाचवाँ अध्याय

सामूहिक प्रतिवेदनों के संकलन

सम्पादक

सामाजिक व राजनीतिक उत्तरदायित्व के लक्षण

सामाजिक व राजनीतिक उत्तरदायित्व के लक्षण व विशेषता का विचार करते हुए ही संकलन आरम्भ होना चाहिए। मनुष्य को इच्छानुसार कार्य करने की स्वतन्त्रता प्राप्त है, वह अपनी परिस्थितियों का अनैच्छिक दास नहीं है। भविष्य निर्माण में, दायित्व के साथ अपना कार्य करना उसका कर्तव्य है। हमारे समय में, अनेक व्यक्तियों, प्रौढ़ों व अल्पवयस्कों का भविष्य के साथ कोई सफल सम्बन्ध नहीं होता। वैज्ञानिक विधियों ने मनुष्य को कारण खोजने का और परिणाम स्वरूप भूत की ओर देखने का आदी बना दिया है। इसके साथ-साथ, वर्तमान काल का बोझ और इसका चिंतामय प्रभाव भविष्य का भय उत्पन्न कर देता है जो मनुष्य को भविष्य के सम्बन्ध में रचनात्मक दृष्टि से सोचने में बाधा डालता है। भविष्य की ओर दृढ़ तथा रचनात्मक प्रवृत्ति के लिए व्यक्तिगत प्रयास आवश्यक है। परन्तु जब तक मनुष्य जनता में लुप्त होकर ही सन्तुष्ट हो जाता है, तब तक यह सम्भव नहीं है। कल्पना, विश्वास तथा विनम्रता, व्यक्ति विशेष होने का साहस, समकालीन तथा सन्तति का विचार ये सब गुण उस मनुष्य में होने आवश्यक हैं, जिसे भविष्य निर्माण में कुछ सहायता करनी है।

आधुनिक संसार में यह आवश्यक है कि मनुष्य भविष्य की ओर उत्तरदायी रुख रखे। उसे अनेक नाना प्रकरणों में सामाजिक व राजनीतिक उत्तरदायित्व स्वीकार करना चाहिए। स्थानीय समुदाय, पड़ौसियों के लघु समूह या सह-कार्यकर्ता, कार्मिक संघ जैसे विशाल समूह (विशेषतः अब जबकि कार्मिक संघ स्वयं ही नये-नये उत्तरदायित्व ग्रहण करने लगे हैं, जैसे उद्योग के प्रबन्ध में हाथ बँटाना), राज्य जो राष्ट्रीय समुदाय हैं और विशाल राष्ट्रीय समुदाय जिसके अन्तर्गत सम्पूर्ण मानवजाति सम्मिलत है, इन सबके स्तर पर ही उसे अपना कर्तव्य निर्धारित करना चाहिए। प्रत्येक मनुष्य एक ही समय में अनेक विभिन्न समुदायों से सम्बन्ध रखता है। अतः यदा कदा, वह अपने को ऐसी स्थिति में पाता है जब उन नाना सम्प्रदायों की ओर उसके कर्तव्य में संघर्ष चल रहा हो। राज्य के सदस्य होने के

नाते हमारी भावना है कि शासन रहे। परन्तु एक क्रमिक तथा प्रगतिशील समाज के सदस्य होते के कारण, वर्तमान शासन कायम रहने की अपेक्षा अनुकरण तथा परिवर्तन अधिक महत्वपूर्ण है। प्रायः देश की ओर कर्तव्य का मानवता की ओर कर्तव्य से संघर्ष करता है। समस्त संसार में मनुष्य की पारस्परिक निर्भरता संघर्ष के क्षेत्र को और भी विस्तृत कर देती है। उन संघर्षों को आवरण करना अथवा उनका हल करना, प्रौढ़-शिक्षा का कर्तव्य नहीं है। परन्तु, वे अपने उत्तरदायित्वों के अनुकूल कार्य करने के लिए, उन विषयों का स्पष्टीकरण करके अपने मस्तिष्क को तैयार और सजग करें। इस कार्य में, अपने समकालीन व आगामी सन्तति की ओर अपने कर्तव्यों को पहचानने में प्रौढ़-शिक्षा उनकी सहायक सिद्ध होगी।

मनुष्य उत्तरदायित्व से कार्य क्यों नहीं करते ? कुछ अंशों में उसका एक कारण यह होता है कि उन्हें तथ्यों की जानकारी नहीं होती और उसके अभाव में वे अपने कार्य को ठीक तरह से समझ नहीं पाते। और कुछ अंशों में उसका कारण उनका अपना आलस्य और आत्म-विश्वास का कारण होता है। आत्म-विश्वास की उत्पत्ति सफलता से होती है। जिस व्यक्ति को निजी बुद्धि का पूर्ण उपयोग करने और अपनी नाना रुचियों के कार्य करने (जबकि वे रुचियाँ प्रत्यक्षतः अवांछनीय प्रकार की न हों) का अवसर मिला हो, वह उस व्यक्ति की अपेक्षा जिसकी रुचियाँ ठुकराई गई हों, अधिक आत्मविश्वासी हो सकता है उसे उचित ही अधिक पूर्णरूपेण शिक्षित कहा जा सकता है और उससे अपने उत्तरदायित्वों के प्रति वास्तव में अधिक उत्तरदायित्वपूर्ण रूप से कार्य करने की अपेक्षा की जा सकती है। आत्म-विकास के लिए अवसर के न मिलने और रुचियों के ठुकराये जाने से जीवन में विक्षोभ उत्पन्न होता है। विक्षुब्ध मनुष्य न केवल समाज के लिए ही निरर्थक होता है, अपितु वह समाज के लिए दुश्चिन्ता व खतरे का कारण भी बन सकता है। इस प्रकार, क्योंकि जीवन पूर्णता प्राप्त करने में प्राकृतिक विज्ञानों की कुछ जानकारी और सौंदर्यानुभूति के अवसरों का महत्व होता है, प्रौढ़-शिक्षा इस प्रकार के अवसर और ज्ञान प्रदान करने के द्वारा परोक्ष रूप से सामाजिक और राजनीतिक उत्तरदायित्व में अपना योग देती है। वस्तुतः, प्रौढ़-शिक्षा का यह उत्तरदायित्व है कि वह यह देखे कि हर स्त्री, पुरुष को अपने पृथक्-पृथक् विकास का अवसर मिलता है। यह उत्तरदायित्व आज की औद्योगिक सभ्यता क युग में एक महान् उत्तरदायित्व है, क्योंकि इस युग में, जिसमें एक सामूहिक मस्तिष्क की कल्पना की जाती है और व्यक्ति से हटकर सोचा जाता है। किसी विशिष्ट विधि-विधान के अनुसार व्यक्ति का विकास होगा, यह नहीं बताया जा सकता है। उदाहरण के रूप में एक कविता की तीव्र क्रांतिमय अनुभूति, संगीत के कुछ स्वर, या कोई चित्र अथवा प्लास्टिक कला का

कोई खण्ड मनुष्य को उसके वर्तमान भय और खोखलेपन से विमुक्त कर सकते हैं और उसके सामने भावी दृष्टि के नये द्वार खोल सकते हैं। अनेक बार किसी वस्तु या किसी व्यक्ति के सम्बन्ध में एक सीमित और विशिष्ट उत्तरदायित्व स्वीकार करने से वर्तमान चिन्ता से निवृत्ति मिलेगी और भविष्य के प्रति एक अधिक आशाजनक और निश्चयात्मक प्रवृत्ति पैदा होगी। प्रौढ़-शिक्षा में कोई एक ही उपाय, जिसे सर्वश्रेष्ठ कहा जा सके, नहीं है।

मुख्यतः अत्यधिक भावुक व्यक्ति जो राजनीतिक उत्तरदायित्व से कतराते हैं उसका एक कारण यह होता है कि शासन सत्ता पर आधारित होता है, भले ही उसका प्रयोग किया जाय या उसे सुरक्षित रखा जाय। वस्तुतः, शक्ति का एक नियन्त्रित प्रकार से और एक विशिष्ट उद्देश्य के लिए, अर्थात् शांतिपूर्ण ढंग से सह जीवन व्यतीत करने के लिए, सत्ता का प्रयोग करना ही शासन है। हाल के इतिहास में, ऐसे अनेक उदाहरण हैं जिनसे पता चलता है कि उस शक्ति का दुरुपयोग होता है और यही कारण है कि विशेष रूप से युवक वर्ग में ऐसी भावना पाई जाती है कि वे इस सत्ता को स्वतः एक अनुचित काम समझते हैं। और राजनीति को एक ऐसा काम समझने हैं जिससे बचने की आवश्यकता हो। सत्ता तो स्वयं तटस्थ होती है। न अंधी होती है न बुरी होती है, और न उसमें स्वतः अच्छे या बुरे काम में लगने की क्षमता होती है। समाज में राजनीतिक सत्ता का समुचित प्रयोग (वास्तव में न केवल राजनीतिक सत्ता का ही) प्रबुद्ध नेतृत्व पर निर्भर करता है। सत्ता की भाँति नेतृत्व भी तटस्थ समझना चाहिए और हमें नेतृत्व की निन्दा करने की अपेक्षा यह प्रयत्न करना चाहिए कि हमारी शिक्षण पद्धतियाँ ऐसा नेतृत्व पैदा करें जिसका उपयोग सही व्यक्ति सही प्रकार से कर सके।

जनता में या तो राजनैतिक उत्तरदायित्व से दूर रहने का प्रयास है और या फिर इसके विरुद्ध, भावुकता की अतिशय के कारण, उत्तेजना से अँधे हो, विभिन्न राजनीतिक दलों के संघर्ष में भाग लेते हैं, जिसका अर्थ है कि सामाजिक तथा राजनैतिक उरदायित्व में संकुचित अज्ञानता के कारण असफल कार्य। दोनों ही अतिशय से दूर रहने की आज आवश्यकता हैं—एक ओर राजनैतिक क्रिया-शीलन की पूर्ण उपेक्षा तथा दूसरी ओर गुण, दोष की विवेचना व विचार न करके असंतुलित भाग लेना। हमें यह जान लेना चाहिए कि सामाजिक व राजनीतिक उत्तरदायित्व न तो पूर्णतः राजनैतिक दलों के बाहर रहकर ही निभाया जा सकता है, न ही भीतर रह कर।

प्रौढ़-शिक्षकों की दुविधा

प्रौढ़-शिक्षकों को राजनीतिक तथा सामाजिक उत्तरदायित्व को प्रोत्साहित करने के उत्तरदायित्व का ध्यान आज पहले से अधिक है। अपने विद्यार्थियों को कतिपय निश्चय मतों में विश्वास दिलाना या कुछ विचार धाराओं को स्वीकार कराना प्रौढ-शिक्षकों का कार्य नहीं है। अब प्रौढ़-शिक्षकों के सामने दुविधा यह है कि एक ओर तो उन्हें अपने मत पर अड़े रहने की प्रवृत्ति त्याग देनी चाहिए और दूसरी ओर उनके कुछ ऐसे मत तथा मूल्य होने चाहिए जिनके अनुसार व आधार पर वे कार्य करें। जैसा कि सम्मेलन के उद्घाटन के समय प्रो. क्रोह ने कहा था, "समस्त व्यावहारिक निर्णयों में विमोह आवश्यक है परन्तु समस्त मानवीय मामलों में लग्न अनिवार्य है। किसी भी संस्था में हो, सामाजिक तथा राजनीतिक उत्तरदायित्व की शिक्षा के अन्तर्गत, मतान्तर के उपरान्त भी, समाज की एकता में विश्वास रखना ही होगा। व्यक्ति को साधन की भाँति प्रयोग न करके व्यक्ति की भाँति प्रयोग किये जाने का मनुष्य का पूर्ण अधिकार है, यह भी मानना होगा।

कभी-कभी प्रौढ़-शिक्षकों की इस आधार पर समालोचना की गई है कि निर्णय करना कठिन है इसलिए वे निर्णय से दूर रह कर सन्तुष्ट हैं और सम्बन्ध के सिद्धान्त की शरण लेते हैं। इस पर अधिक महत्व नहीं दिया जा सकता कि निर्णय न करना ही उत्तर-दायित्व से गिरना है और हममें इतना साहस होना चाहिए कि हम निर्णय करें, किसी निश्चय पर पहुँचें और फिर उस निर्णय को क्रियारूप दें। प्रौढ़-शिक्षा के शिक्षार्थी व शिक्षक दोनों में इतनी योग्यता आ जानी चाहिए कि वे मूल्यवान व निरर्थक में, यथार्थ व कृत्रिम में, सतत महत्वपूर्ण तथा क्षण-भंगुर में भेद-भाव कर सकें। परन्तु इस योग्यता को केवल प्राप्त कर लेना ही निरर्थक है जब तक उसका उपयोग न किया जाय।

यद्यपि कुछ महत्वपूर्ण विचारों में प्रौढ़-शिक्षा पाठशाला की शिक्षा से भिन्न है। (विशेषतः, उपस्थिति ऐच्छिक है, शिक्षार्थी की निजी अनुभूतियाँ ही प्रौढ़-शिक्षा को स्कूल की शिक्षा से भिन्न बनाती हैं), दूसरी पद्धतियों में शिक्षा को एक धारावाहिक प्रक्रम समझना चाहिए अतएव एक शृंखला—प्रौढ़-शिक्षा से यह आशा करना अत्यधिक है कि वह नित नए सिद्धान्तों द्वारा सत्य की खोज के लिए प्रेरित हो जब कि उस भावना का पाठशालाओं में अभाव है। केवल स्कूल तथा प्रौढ़-शिक्षा में ही नहीं, अपितु प्रौढ़-शिक्षा तथा नवयुवक संस्थाओं व व्यावसायिक प्रशिक्षण संस्थाओं में भी अनुरूपता वांछित है। शिक्षकों को निरन्तर उस खतरे का आभास होता जा रहा है जो भौतिक विचारों तक सीमित रहने वाले व्यावसायिक प्रशिक्षण से उत्पन्न होता है। राजनीतिक शिक्षा व व्यावसायिक प्रशिक्षण दोनों के ही हित में उनके मध्य की खाई पाट देनी चाहिए।

प्रौढ़-शिक्षा के साधन

प्रौढ़-शिक्षा की प्रणालियाँ अनेक हैं और विभिन्न प्रकार की हैं। वैसे तो उनकी सूची बनाना एक वृथा कार्य है, परन्तु प्रौढ़-शिक्षा के इतने रूप हैं कि उन्हें सूची-बद्ध करने के प्रयास के बिना, राजनीतिक तथा सामाजिक उत्तरदायित्व के प्रशिक्षण के दृढ़ करने के साधन के ऊपर किए गए वाद-विवाद अस्पष्ट तथा निरर्थक ही होंगे। यही कारण है कि अनेक व विविध रूप दर्शाने का नीचे प्रयास किया जाता है।

सामान्यतः उत्तरदायित्व के प्रशिक्षण के लिए जो प्रौढ़-शिक्षा दो मुख्य कार्य कर सकती हैं उस मौखिक व व्यावहारिक शिक्षा में अन्तर करना उपयोगी होगा।

मौखिक शिक्षा में व्याख्यान, वाद-विवाद, पुस्तकें, रेडियो तथा मुद्रणालय जैसे साधनों का प्रयोग किया जाता है। रेडियो व मुद्रणालय के प्रभाव का अनुमान नहीं लगाया जा सकता, परन्तु सामान्यतः बहुत विशाल होता है। प्रौढ़-शिक्षा के साधन के रूप में, रेडियो तथा मुद्रणालय दोनों का उल्लेख किया जाता है। हमने इस विषय पर अधिक सूक्ष्मता से विचार नहीं किया, इस लिए नहीं कि हमने उसकी महत्ता ही नहीं समझी अपितु समयाभाव के कारण नहीं कर पाए। जहाँ तक पुस्तकों का प्रश्न है, ऐसी उपयुक्त पुस्तकों के अभाव के कारण, जो अन्य देशों की स्थिति के सम्बन्ध में अब तक के निष्पक्ष समाचार देती हों, अन्तर्राष्ट्रीय समझ में रुकावट पड़ती है। जहाँ कोई उपयुक्त पुस्तकें उपलब्ध न हों वहाँ पुस्तकों का लिखवाना और अपनाना, तथा यूनेस्को द्वारा उपयुक्त पुस्तकों की सूची मुद्रित करना लाभदायक होगा।

व्यावहारिक क्षेत्र में, सामाजिक तथा राजनीतिक उत्तरदायित्व के यथार्थ निर्वाह द्वारा ही प्रौढ़-शिक्षण इसके प्रशिक्षण के अवसर प्रदान करती है। निःसन्देह प्रौढ़-शिक्षा का यह प्रथम कार्य है कि जहाँ तक सम्भव हो सके, ऐच्छिक संगठन व समितियों तथा उनकी स्वायत्त सरकार द्वारा सहकार व पारस्परिक उत्तरदायित्व की विधियाँ सीखने व अनुभूति प्राप्त करने का अवसर प्रदान करें। एक उत्तम प्रौढ़-शिक्षा श्रेणी में विद्यार्थी क्रिया-शील रहता है, अतः यह स्वयं उत्तरदायित्व का अभ्यास है। लोक उच्च विद्यालय के जैसे नहीं रहने से व्यावहारिक उत्तरदायित्व के विविध मार्गों के अच्छे अवसर प्राप्त होते हैं जैसे, विद्यार्थियों द्वारा भवन सजाना, संस्था की बाह्य-क्रिया-शीलता की योजना तथा समय-पत्रक (time table) की योजना में सहायता करना। उदाहरणार्थ, दैनिक जीवन में भी अन्य व्यक्तियों की सहायता करना, अनाथों के लिए धन व सामग्री एकत्रित करना, अन्धों को पढ़ कर सुनाना, मार्ग में चलने में सहायता करना, इनकी व्यक्तिगत सहानुभूति के विचार से ही मूल्य के अतिरिक्त सामाजिक उत्तरदायित्व में सराहनीय प्रशिक्षण है, जिसका आधार अपने अतिरिक्त अन्य मनुष्यों का कल्याण ही है।

प्रो० क्रोह ने सुझाव दिया है कि "अब तक हमने सैद्धान्तिक शिक्षा तो खूब दे दी है, परन्तु व्यावहारिक अनुभव के अवसर बिल्कुल नहीं दिए।" यह विश्वास किया जाता है कि पाठशालाओं का मुख्य कार्य व्याख्यान द्वारा अथवा मुद्रित शब्दों द्वारा ज्ञान प्रदान करना है। इस प्रकार की शिक्षा से जो निष्क्रियता व ज्ञान ग्रहण करने की प्रवृत्ति को प्रोत्साहन मिलता है। वह बाद में रेडियो, चल-चित्र, दूर-दर्शन-कारी यन्त्र, मुद्रणालय तथा प्रचार प्रसार द्वारा और भी दृढ़ हो जाती हैं। इससे समालोचनात्मक प्रवृत्ति को कोई प्रोत्साहन नहीं मिलता। निरन्तर ऐसी स्थितियों में रहते रहते मनुष्य मानसिक समस्याओं को सुलझाने में असमर्थ हो जाता है, परन्तु प्रत्येक वस्तु के सम्बन्ध में कुछ-न-कुछ जानने की अतृप्त इच्छा जागृत हो जाती है। साधारण विषयों के सम्बन्ध में भी वे कुछ-न-कुछ विचारते रहते हैं, और अपना मान बनाए रखने के लिए ठोस ज्ञान के अभाव को छिपाए रखते हैं। जहाँ तक प्रौढ़-शिक्षा अपने शिक्षार्थियों के लिए, भाँति-भाँति के क्षेत्रों से आकर्षक मनोरंजनात्मक साधन प्रस्तुत करती है, यह श्रुत बातों को स्वीकार कर लेने की प्रवृत्ति को दृढ़ करती है। परोक्ष ज्ञान प्रदान करना शैक्षिक प्रक्रिया का एक अंग है, परन्तु समीक्षात्मक गुण के विकास तथा सामाजिक उत्तरदायित्व के व्यावहारिक शिक्षण से ही इसे सन्तुलित किया जा सकता है।

सामाजिक उत्तरदायित्व की व्यावहारिक अनुभूति के उत्तमतम अवसर केवल समुदाय में ही प्राप्त होते हैं। जैसे प्रो० क्रोह ने कहा है, 'किसी मनुष्य को मानव रहने के लिए तथा मानवता के योग्य बनने के लिए, सम्प्रदाय से सम्बन्ध रखने आवश्यक हैं। दूसरे शब्दों में 'जनता को शिक्षित करने के लिए' हमें ऐसे समुदाय प्रदान करने चाहिए जो उन्हें अपना मान सकें, जहाँ परस्पर विश्वास व उत्तरदायित्व हो। साथियों की परस्पर सहायता करने की इच्छा हो। समुदाय में अकथनीय रूप से पारस्परिक समझ-बूझ रहती है।

प्रौढ़-शिक्षण संस्थाएँ

ऐसे आन्दोलनों, संगठनों तथा संस्थाओं की संख्या विशाल है जो सामाजिक तथा राजनैतिक उत्तरदायित्व की प्रवृत्ति को प्रभावित करती हैं, कोई विशेष इसी उद्देश्य से, कोई अपरोक्ष रूप से। ये समस्त सभाएँ नाना प्रकार की हैं। इन सभी को प्रौढ़-शिक्षा का साधन माना जा सकता है और तीन श्रेणियों में विभक्त किया जा सकता है। इन श्रेणियों की विभिन्नता से ही प्रगट होता है कि वयस्क स्त्री-पुरुषों के हित के लिए की गई शैक्षिक प्रणाली में कितना अन्तर है।

प्रथम ऐसी संस्थाओं का संघ है जहाँ विचारपूर्वक सामाजिक तथा राजनीतिक शिक्षा दी जाती है, अथवा जहाँ यह उद्देश्य ही मुख्य है। इसके अन्तर्गत निम्नलिखित हैं—

(क) स्कैन्डीनेविया के लोक उच्च विद्यालय, जर्मनी के लोक उच्च विद्यालय, जर्मनी के आर्बाइट और लेबिन, विश्व-विद्यालय विस्तार कार्य, कार्यकर्ताओं की शैक्षिक परिषद् तथा अन्य कक्षाएँ, शैक्षिक केन्द्र तथा बस्तियाँ, सार्वजनिक पुस्तकालय।

(ख) सामुदायिक केन्द्र, फ्रान्स की सांस्कृतिक संस्थाएँ।

(ग) स्वाधीन नागरिक परिषद्, स्त्रियों की संस्थाएँ।

(घ) राजनीतिक दल और शैक्षिक पहलुओं को दृष्टि में रखते हुए दलीय संचार विभाग।

(ङ) सेना तथा अर्ध सैनिक संस्थाएँ।

द्वितीय श्रेणी में वे संस्थाएँ सम्मिलित हैं जिनका दूसरा उद्देश्य सामाजिक व राजनैतिक शिक्षण है अथवा वे संस्थाएँ जिन्हें अपने लक्ष्य के लिए सामाजिक व राजनैतिक शिक्षण की आवश्यकता है। ये हैं कार्मिक-संघ, व्यावसायिक परिषद्, ज्ञानी समाज, शरणार्थी परिषद्, धर्मार्थ संगठन।

तृतीय श्रेणी में वे संस्थाएँ हैं जो किसी और उद्देश्य से किये गए कार्यकलापों द्वारा अपरोक्ष रूप से सामाजिक व राजनैतिक शिक्षा को प्रोत्साहन देती हैं, उदाहरणार्थ, खेल-कूद, संगीत, कला, यात्रा नाटक, चल-चित्र, रेडियो, दूरदर्शक तथा मुद्रणालय।

स्पष्टतः गिरिजाघर इनमें से किसी श्रेणी से नहीं आते। वे प्रौढ़-शिक्षा की संस्थाएँ नहीं हैं। परन्तु भ्रातृत्व की माँग द्वारा सामाजिक तथा राजनीतिक उत्तरदायित्व के लिए प्रौढ़ शिक्षण पर ऐसा मार्मिक प्रभाव पड़ सकता है जिसका अनुमान नहीं लगाया जा सकता।

द्वितीय व तृतीय श्रेणियों के अन्तर्गत, संस्थाएँ साधारण रूप से प्रौढ़-शिक्षण परिधि में समझी तो नहीं जातीं, परन्तु उनका झुकाव सामाजिक व राजनीतिक उत्तरदायित्व के प्रशिक्षण की ओर होता है। उनके कार्य-कलाप दोनों ही प्रकार से आंशिक होते हैं। उन संस्थाओं के सम्बन्ध में, जिनका उद्देश्य ही शैक्षिक है, यह ध्यान रखना चाहिए कि जिनका उद्देश्य वर्गीय अथवा दलीय शिक्षा का विकास है, उनके मध्य का अन्तर समझ लेना आवश्यक है। द्वितीय उद्देश्य के प्रौढ़-शिक्षण का विशिष्ट लक्ष्य तथा उत्तरदायित्व है। क्योंकि यह किसी बाह्य आदेशों से स्वतन्त्र है। पाठशालाओं की अनिवार्य सीमाओं से मुक्त है। वयस्क समाज की वास्तविक अनुभूतियों को अपनी अन्तर्वस्तु बनाने की इसमें योग्यता है। प्रौढ़-शिक्षण के मूल उद्देश्य अर्थात् सत्य की अबाधित खोज में इसकी निष्ठा है।

सामाजिक तथा राजनीतिक उत्तरदायित्व के विकास में प्रभावशाली होने के लिए प्रौढ़-शिक्षा संस्थाओं को कुछ शर्तें पूरी करनी पड़ेंगी।

(१) 'खुला द्वार' सिद्धान्त का विशेष महत्व है। अर्थात् संस्था में प्रत्येक मनुष्य की पहुँच बिना किसी रोक-टोक के होनी चाहिए। उसके कार्य-कलाप तथा उपस्थिति ऐच्छिक होनी आवश्यक है। न किसी को बाध्य करना चाहिए और न ही किसी को पृथक।

(२) विचार अभिव्यक्ति की, तथा शिक्षक व शिक्षार्थी के मध्य वाद-विवाद की पूर्ण स्वतन्त्रता अनिवार्य है। प्रौढ़-शिक्षा में, समान मनुष्यों में परस्पर व्यवहार निर्बाधित होना चाहिए।

(३) सहन शक्ति तथा धर्म पर अड़े रहने की शक्ति अपेक्षित है। अपनी धारणाओं पर दृढ़ रह कर उन्हें आरक्षित करने की योग्यता का विकास करना चाहिए और यदि आवश्यकता पड़े तो उन्हें परिणत करने की क्षमता होनी चाहिए।

(४) हर सिद्धान्त व वस्तु का उसके समकालीन अर्थानुसार ही व्यवहार करना चाहिए। अनुभूतियों, विशेषकर विद्यार्थी की अनुभूतियों को महत्ता देनी चाहिए। प्रौढ़-शिक्षा में सामान्य शैक्षणिक पद्धति का कोई स्थान नहीं है। श्री० बरमीस्टर के उद्घाटन भाषण में कुछ अभ्युक्तियों का अर्थ था कि शिक्षक में जबकि सभी आवश्यक गुण होने अनिवार्य हैं तो उसमें यह योग्यता भी होनी चाहिए कि वह शिक्षार्थियों की समस्याओं पर स्पष्ट तथा अपरोक्ष रूप से प्रकाश डालने में समर्थ हो। यहाँ ये दोनों बातें संगत हैं।

प्रौढ़-शिक्षा की ओर राज्य का उत्तरदायित्व

प्रौढ़-शिक्षा की ओर, विशेषतः ऐसी प्रौढ़-शिक्षा की ओर जिसका लक्ष्य सामाजिक व राजनैतिक उत्तरदायित्व में प्रशिक्षण देना हो, राज्य के उत्तरदायित्व का रूप अनेक उलझन भरी समस्याओं को खड़ा करता है। श्री० बरमीस्टर ने कहा कि ब्रिटेन ने प्रौढ़-शिक्षा क्षेत्र में जो विशिष्ट कार्य किया है, वह निजी तथा सार्वजनिक प्रयास में, कार्य-कर्ताओं की शिक्षा परिषद् जैसी संस्थाओं, विश्व-विद्यालयों, स्थानीय शिक्षा अधिकारियों तथा शिक्षा मंत्रालयों में मेल-जोल की स्थापना करना है। ऐसे समाज में, जो लोकतन्त्र बनना चाहता है, प्रौढ़-शिक्षा की इतनी राजनीतिक महत्ता है कि इसकी दक्षता तथा इसके कल्याण को ऐच्छिक संगठनों की अनियमित क्रियाशीलता पर नहीं छोड़ा जा सकता। अन्य शिक्षाओं की भाँति, प्रौढ़-शिक्षा के विकास की ओर भी ध्यान देना राज्य का एक मुख्य कर्तव्य है। परन्तु प्रौढ़-शिक्षण के लिए स्वतन्त्र वातावरण अनिवार्य है। अतः यदि सरकार को अपने विचारों का प्रचार तथा प्रसार करने के लिए राज्य यन्त्र का उपयोग करना पड़ा तो यह प्रौढ़-शिक्षा के

लिए घातक सिद्ध होगा। अतः राज्य को यह देखना चाहिए कि उसे निर्बाधित उन्नति व विकास की कामना है। प्रौढ़-शिक्षा को आर्थिक सहायता देने वाली सरकार को रोक-टोक के अधिकार से वंचित करने की माँग अनुचित सी प्रतीत होती है। परन्तु यह ऐसी माँग है जिसे करनी चाहिए और जिसकी पूर्ति सब प्रकार से की जानी चाहिए।

कुछ देशों में, जिनमें बेलजियम भी है, दलों के शैक्षिक कार्य की लागत के लिए सरकार वित्तीय सहायता देती है। इससे दो लाभ होते हैं, प्रथम तो शैक्षिक कार्य का विस्तार होता है, द्वितीय, दलीय शैक्षिक कार्य किसी विशेष दल का समर्थन न होकर शुद्ध शैक्षिक रह जाता है।

व्यावसायिक प्रौढ़-शिक्षकों को अन्य अभिकर्ताओं की शैक्षिक क्रिया-शीलता (जिसका प्राथमिक उद्देश्य शैक्षिक नहीं है) की ओर श्रेष्ठता का भाव नहीं अपनाना चाहिए अपितु उन्हें अपनी सामर्थ्यानुसार उस क्रिया-शीलता को, जहाँ तक सम्भव हो सके, उत्तम बनाने का प्रयत्न करना चाहिए। इसी तरह, राजनीति में क्रियाशील सहभाग की ओर श्रेष्ठता का भाव अपनाना निष्फल बुद्धिमत्ता है। कुछ मनुष्यों की आत्मा दलीय राजनीति में सक्रिय भाग लेने की आज्ञा नहीं देती, परन्तु उन मनुष्यों को यह ज्ञात हो जाना चाहिए कि आधुनिक समाज में उनका स्थान, जैसा कि संयुक्त राज्य तथा पश्चिमी योरोप में है, अव्यवस्थित है, नियम विरुद्ध है। उसको विशेष कारण की आवश्यकता है। दलीय दोषों का सुधार राजनीति से दूर रह कर नहीं होता।

एक समालोचनात्मक प्रवृत्ति, परन्तु अविश्वसनीय नहीं

सामाजिक तथा राजनीतिक उत्तरदायित्वों को प्रभाव युक्त ढंग से निभाने के लिए किसी भी नागरिक के लिए पर्याप्त ज्ञान प्राप्त करने की आवश्यकता है। जैसे आर्थिक प्रश्न तथा राजनीतिक संस्थाओं के सम्बन्ध में प्रौढ़-शिक्षण का कार्य है कि उनको सुगमता से यह प्राप्त हो सके। जैसा पहले भी कहा जा चुका है कि केवल समाचार प्राप्ति शैक्षिक प्रक्रिया है। वैज्ञानिक की शान्त, पक्षपातहीन समालोचनात्मक प्रवृत्ति के बिना विद्यार्थी दृढ़ निश्चय पर नहीं पहुँच पाता। अतः किसी भी बात का भली भाँति परीक्षण करने और निर्भयता से उनका आवश्यक निर्णय करने के लिए उसे प्रोत्साहित करना चाहिए (यह मानते हुए कि अनेक, केवल सामयिक हो सकती हैं)। उसे यह सीख लेना चाहिए कि किन परिस्थितियों में विशेषज्ञ का परामर्श मान लेना चाहिए (आजकल कभी-कभी राजनीतिज्ञ की भी विशेषज्ञों में गणना हो जाती है) और किन परिस्थितियों में अस्वीकार कर देना चाहिए। किसी को बिना विचारे प्रामाणिक नहीं मान लेना चाहिए। यह खतरा है।

लेकिन यह खतरा उस परिस्थिति से कम है जिसमें धारणाओं को बिना ध्यान दिए मान लिया जाता है और नारों और मुहावरों में निहित ऐसे निर्णयों को (जो सिद्ध नहीं हो सके) विचार का महत्व दिया जाता है। यदि उस नारे की उत्पत्ति किसी अच्छे कारण से हुई हो तो यदाकदा प्रौढ़-शिक्षक गण भी इस अभ्यास के शिकार बन जाते हैं, उदाहरणार्थ, सामूहिक सुरक्षा, सांसारिक एकता, या मनुष्य का भ्रातृत्व।

परन्तु किसी साक्ष्य की ओर समालोचनात्मक भाव अपनाने का यह अर्थ नहीं कि अन्य मनुष्यों को अविश्वास की दृष्टि से देखा जाय। निःसन्देह विश्वास ही एक ऐसी वस्तु है जिसके आधार पर मनुष्य हिलमिल कर रह सकते हैं। शिक्षक तथा शिक्षार्थी में, एक दूसरे समूहों में, प्रौढ़-शिक्षा-संस्थाओं तथा राज्य में, एक-दूसरे देशों में परस्पर विश्वास होना चाहिए। भरोसा वहीं किया जा सकता है जहाँ विश्वास हो, और विश्वास वहीं जमता है जहाँ कर्तव्य निभाए जाने की आशा है। पारस्परिक उत्तरदायित्व के आधार पर बने समुदाय में, किसी शिक्षा के लिए सर्वाधिक प्रभावशाली वातावरण होता है। फिर दूसरों पर विश्वास होने से निजी सुरक्षा की भावना परिवर्द्धित होती है। कतिपय वैयक्तिक समूहों, सामाजिक व आर्थिक वर्गों, धार्मिक समूहों, जातियों तथा देशों के प्रतिकूल जो भाव जागृत होते हैं वे मूलतः विश्वास के अभाव के कारण ही। प्रौढ़-शिक्षा के कर्तव्य का एक अंश यह भी है कि मनुष्यों में मानव चरित्र के विषय में उद्देश्यात्मक निर्णय करने का गुण उत्पन्न किया जाय। मनुष्य के नाना आचरणों में अन्तर समझने की विवेक शक्ति केवल वर्णन से नहीं आती। भक्ति, विनम्रता, गर्व, उद्दण्डता, साहस व भय का जीवन पर प्रभाव, जीवन गाथाओं, उपन्यासों, नाटकों तथा रूप कलाओं के अध्ययन से अधिक सुगमता से जाना जाता है। मनुष्यों में केवल अच्छे गुण ही हैं, ऐसे संवेगात्मक दृष्टिकोण का यहाँ कोई स्थान नहीं है। मनुष्यों में स्थित उचित व अनुचित दोनों ही गुणों को पहचानना होगा, और निःसन्देह निर्णय करना, मानवीय स्वतन्त्रता की एक स्थिति है, अतः राजनीतिक व सामाजिक उत्तरदायित्व के अभ्यास के लिए यह अनिवार्य है।

प्रौढ़-शिक्षा किसको दी जाती है ?

एक प्रश्न, जिसका प्रौढ़-शिक्षकों को सामना करना होगा, यह है कि ये समस्त कार्य कलाप किसके लिए किये जाते हैं ? जैसे कि एम० लैन्ग्रेन्ड ने कहा कि केवल फ्रान्स में ही प्रौढ़-शिक्षा संस्थाओं द्वारा प्रभावित स्त्री-पुरुषों की तुलनात्मक संख्या कम नहीं है। श्री बरमीस्टर ने कहा है कि परम्परागत लोकतन्त्रीय देशों में भी क्रिया-शील लोकतन्त्रों की संख्या कुल संख्या की तुलना में बहुत न्यून है। परन्तु जैसा कि उन्होंने बाद में कहा, 'इस अल्प-

संख्या के अनुसार ही विचारधारा परिवर्तित होती रहती है। कभी ये अल्प-संख्यक कम होते हैं और कभी अधिक। जहाँ कहीं भी लोकतन्त्र के अनुसार कार्य होता है, अल्प-संख्यक के चारों ओर ही विचार एकत्र हो जाते हैं। अतः प्रौढ़-शिक्षा का एक विशेष कर्तव्य इन अल्प-संख्यकों को सहायता देना है क्योंकि वे ही विचारों के प्रवर्तक होते हैं।

अधिकतम व्यक्ति राजनीतिक निर्णय, चेतन बौद्धिक प्रक्रिया द्वारा नहीं, अपितु आन्तरिक प्रक्रिया द्वारा करते हैं। सीमित विषयों पर उनका आन्तरिक निर्णय सही हो सकता है यदि उनके पारिवारिक विद्यालय के प्रारम्भिक वातावरण के कारण उन्होंने अपने साथी स्त्री-पुरुषों की ओर इतना सही रुख अपनाया हो। संधि करने की व यदाकदा पराजय मान लेने की आवश्यकता का पाठ हम सबको पढ़ना होगा और उसको बार-बार दुहराना होगा। इस प्रकार क्रीडा की भाँति, ऊपर से असम्बद्ध वह राजनीतिक तथा सामाजिक उत्तरदायित्व के लिए मूल-भूत झुकावों को दृढ़ करने में समर्थ हो सकता है। पाठशालाएँ इस बात की ओर से पहले से अधिक चेतन होती जा रही हैं कि आवेगों, भावनाओं तथा मस्तिष्क को प्रशिक्षित करना आवश्यक है। क्योंकि यह केवल बाल्यावस्था में ही सत्य नहीं, प्रौढ़-शिक्षण को भी चुनौती है। कुछ ऐसे हैं जो यह विश्वास करते हैं कि प्रौढ़-शिक्षा, जिसका उद्देश्य भ्रातृत्व है, उसे नैतिक प्रशिक्षण का कार्य भी सौंपा जाए। अधिकतम देशों में पुरातन समय से इस प्रशिक्षण को धर्म के साथ सम्मिलित किया गया है। परन्तु वहाँ जहाँ (कम-से-कम पश्चिमी यूरोप में) गिरिजा १९वीं शताब्दी की अपेक्षा आज कम प्रभावशाली है।

विषयों की उपयोगिता

पूर्व प्रस्ताव के अनुसार यदि विषयों को व्यावहारिक या साकार रूप दिया जाए तो अनेक प्रकार के विषय राजनीतिक तथा सामाजिक उत्तरदायित्व की भावना को दृढ़ करने के अवसर देते हैं। चाहे कोई भी विषय चुना जाए, वह शिक्षक व शिक्षार्थी दोनों की यथार्थ माँग का उत्तर होना चाहिए। नीचे ऐसे विषयों का वर्गीकरण किया जाता है जो विशेषतः उपयुक्त हो सकते हैं—

(१) सामाजिक क्षेत्र तथा दैनिक जीवन से लिये हुए विषय—

(क) विद्यार्थियों का उनके कार्य, कार्य के स्थान तथा व्यावसायिक संघ के साथ सम्बन्ध।

(ख) नाना जिलों, देशों तथा द्वीपों में, मनुष्यों में उपभोक्ता तथा उत्पादक के आर्थिक सम्बन्ध, विविध राष्ट्रीय अर्थनीति तथा विश्व की सम्पूर्ण स्वतन्त्रता में सम्बन्ध।

एक सीमित क्षेत्र की अनुभूतियों से इस सम्बन्ध का दृष्टान्त दिया जा सकता है।

(ग) विभिन्न प्रकार की प्राविधिक उन्नत वस्तुओं द्वारा सार्वजनिक अनुभव तथा सार्वलौकिक प्रभाव, जैसे चलचित्र, रेडियो, दूर-दर्शककारी यन्त्र, मुद्रणालय व खेल-कूद सभाएँ।

(घ) ग्राम, नगर और स्थानीय सरकार का साम्प्रदायिक जीवन।

(ङ) विवाह और परिवार, निकटवर्ती पड़ौसियों से सम्बन्ध, परस्पर सहायता, सामाजिक क्लब, खेल-कूद।

(च) पाठशाला, माता-पिता-परिषद्, गिरिजा, विद्वान व सांस्कृतिक सभा।

(छ) बौद्धिक व आध्यात्मिक आन्दोलन, जहाँ तक कि वे सामाजिक व राजनीतिक प्रभाव डालते हैं।

(२) सरकारी क्षेत्र व सार्वजनिक प्रशासन से लिए हुए विषय—विधान और प्रशासन राज्य के स्पष्ट अंग हैं। विधान तानाशाही में क्षय हो सकता है, प्रशासन अनियन्त्रित शासन या नौकरशाही में समाप्त हो सकता है। इस विषय-सूची में से प्रौढ़-शिक्षा कार्यकलापों के हेतु निम्नलिखित विषयों का विकास किया जा सकता है—

(क) व्यक्ति का अधिकारी के साथ सम्बन्ध। प्रशासक अधिकारियों का ढंग तथा प्रशासन के नियमों की अन्तर्वस्तु महत्व रखते हैं।

(ख) राजनीतिक दलों की महत्ता और कार्य तथा व्यक्ति-विशेष के साथ उनके सम्बन्ध।

(ग) संविधान।

(घ) कानून।

(ङ) राज्य की शासक से माँग; सेना का उपयोग—आरक्षि तथा सेना, अनिवार्य सैनिक सेवा।

(च) राज्य से बड़ी संस्थाएँ।

गिरिजा व राज्य के सम्बन्धों का प्रसंग पूर्व आ चुका है। यद्यपि इस शीर्षक के अन्तर्गत उनकी उचित सूची नहीं बनाई जा सकती, प्रौढ़शिक्षा कक्षाओं में ये विषय विवेचना योग्य हैं।

पद्धतियों तथा प्रविधियों की उपयोगिता

राजनीतिक तथा सामाजिक जीवन के उत्तरदायित्व को दृढ़ करने के साधन प्रौढ़-शिक्षा के विकास की प्रविधियों पर अवशेष अनुच्छेद प्रकाश डालेंगे।

इस भाग की सामान्य भूमिका के रूप में इस बात पर फिर से महत्ता देनी चाहिए कि ज्ञान पद्धति तभी यथार्थ प्रौढ़-शिक्षा बन पाएगी यदि पद्धति और प्रणाली का विद्यार्थियों की वास्तविक सामाजिक व मानसिक परिस्थितियों से सम्बन्ध हो। यह प्रणाली पहले ही शिक्षक व शिक्षार्थी के मध्य एक निकट सम्बन्ध मानती है और यह कि शिक्षक विद्यार्थी की परिस्थितियों को समझता हो और उनके साथ सहानुभूति रखता हो। ऐसे सम्बन्ध व जानकारी शिक्षक व विद्यार्थी की उत्साहहीन यदाकदा की भेंट से नहीं होती। अतः आवासिक व दीर्घकालीन पाठशालाओं तथा कॉलेजों के प्रबल कार्यक्रम में व्याख्यान के विस्तृत कार्य की अपेक्षा इस प्रणाली के लिए अधिक क्षेत्र है।

विद्यालय व कॉलेजों के अनुशासन मानव जीवन की पूर्णता को, अनुभूतियों व ज्ञान को छोटे-छोटे अंशों में विभक्त कर देते हैं। अतः, वे प्रौढ़-शिक्षा की आवश्यकताओं के लिए उपयुक्त नहीं हैं। प्रौढ़-शिक्षा के लिए यह अनिवार्य है कि वह मानव जीवन और उसकी अनुभूतियों को एक माने। इस प्रकार प्रौढ़-शिक्षा में प्राकृतिक विज्ञान का मूल्य तभी होता है जब शिक्षक उस ज्ञान की केवल उद्देश्यात्मक पद्धति को ही स्पष्ट करने में सफल नहीं होता अपितु उससे मानव का सम्बन्ध और मानव परिस्थिति पर समयानुसार उसका दबाव डालता है। प्रौढ़-शिक्षा में प्राकृतिक विज्ञान की भूमिका बाँधने के लिए प्रायः पाठशालाओं में विज्ञान सिखाते समय प्रयुक्त 'शुद्ध-विज्ञान' पद्धति की अपेक्षा महान् वैज्ञानिकों की जीवन-गाथा, पृथक् विज्ञान विषय का ऐतिहासिक ढंग अधिक उपयुक्त है।

प्रौढ़-शिक्षा क्षेत्र में प्राकृतिक विज्ञान महत्ता नहीं रखते। प्रौढ़-शिक्षा के लिए तो मानव और मानव-समाज से ही सम्बन्धित ज्ञान, विचार और सिद्धान्त उपयोगी हैं। वे अपने को दो श्रेणियों में विभक्त करते हैं। प्रथम श्रेणी में मनुष्य को एक लक्ष्य, समूह का एक सदस्य माना गया है। इसलिए उसके अन्तर्गत अर्थशास्त्र, समाज विज्ञान तथा इतिहास के कुछ पहलू हैं। द्वितीय श्रेणी में मनुष्य को कर्ता की दृष्टि से देखा गया है जो रचना करता है। उसमें आत्म-अभिव्यक्ति की, सत्यं शिवं सुन्दरं की व आत्मा की झलक पाने की चाह है। इस श्रेणी से निकले शैक्षणिक अनुशासन, धर्म, दर्शनशास्त्र, साहित्य तथा मानवीय कलाएँ विज्ञानेतर विषय हैं।

अब हम क्रम से पहले प्रथम श्रेणी, विशेषतः प्रौढ़-शिक्षा में समाज-विज्ञान को और तदुपरान्त द्वितीय श्रेणी विज्ञानेतर विषय को लेंगे।

प्रौढ़-शिक्षा में किसी भी प्रकार के समाज विज्ञान के शिक्षक का प्रथम कर्तव्य है कि विद्यार्थियों की वास्तविक, सामाजिक, मानसिक और नैतिक परिस्थितियों को सदैव दृष्टि में रखना और उस पेचीली परिस्थिति के प्रकरण के अनुसार ही अपना कार्य करना। उसे

मित्रता तथा प्रजातन्त्र की स्थापना हेतु शिक्षार्थियों के साथ कार्य करना चाहिए। इस विचार से व्याख्यानों के अव्यवस्थित कार्यक्रमों की तुलना में पूर्व कथना नुसार स्केन्डीनेविया तथा जर्मनी ढंग के लोक उच्च विद्यालय, जिनमें दीर्घकालीन अध्ययन सामूदायिक रहन-सहन और औद्योगिक नगरों में शैक्षिक केन्द्र निहित हैं, का अधिक मूल्य है। समुदाय में विशेष समूहों की विशेष आवश्यकताएँ हो सकती हैं, विशेष पद्धति की माँग हो सकती है तथा विशेष अवसर प्रस्तुत हो सकते हैं, उदाहरणार्थ शारीरिक श्रमिकगण, ग्रामीण जनता या अप्रवीण वयस्क। परन्तु हमें इसका विशेष ध्यान रखना चाहिए कि अपनी परिस्थिति के प्रकरण का क्षेत्र अत्यन्त संकुचित न बन जाए। यद्यपि ऐसे मामलों में प्रौढ़-शिक्षा कायिक श्रमिक, कृषक अथवा अप्रवीण युवा से आरम्भ होती है।

रुचि और क्लब जहाँ लोकतन्त्र के अवसर मिलते हैं, शैक्षिक प्रयास जहाँ व्यावसायिक हितों का ध्यान रहता है, मित्रता व साथी की इच्छा, इन सबका अशिक्षित तथा अव्यवस्थित वयस्क की रुचि जागृत करने के लिए (जैसे कोपेनहागम के समाचार-वाहक बालकों के मामले से ज्ञात होता है) क्या मूल्य है, यह अनुभव द्वारा ज्ञात हुआ है। यह सब है शैक्षिक क्रम को श्रंखलित करने के लिए, सम्पूर्णता का भाव जागृत करने के लिए, समाज के बाहर नहीं परन्तु भीतर रहने के लिए। यह स्मरण रखना अनिवार्य है कि अप्रौढ़ता की इस यौवनावस्था का उम्र के साथ अन्त हो जाय यह आवश्यक नहीं है। अनेक स्त्री-पुरुषों की अध्ययन सामग्री से ज्ञात होता है कि प्रौढ़-जीवन में भी उनकी रुचि कितनी अपरिपक्व रुचि के साथ संवेगात्मक अनुभूतियों का भी अभाव होता है। अतः उनमें संवेगात्मक मूल्य की जाँच भी नहीं होती। साहित्य अनेक वस्तुएँ प्रस्तुत करता है। उनमें से एक संवेगात्मक मूल्यों की जाँच को जागृत करने की सम्भावना भी है।

अब भी प्रौढ़ की परिस्थिति को प्रकरण बनाते हुए, सामाजिक इतिहास या सामाजिक विचारों का इतिहास सामाजिक व राजनीतिक उत्तरदायित्व के प्रशिक्षण के लिए विशाल क्षेत्र प्रस्तुत करता है, लेकिन तभी जब अध्ययन गहन हो। यदि रूपनिदर्शन के लिए उपयोग किया जाय तो इतिहास के लघु अंश में भी सामाजिक जीवन के मुख्य अंश दर्शाए जा सकते हैं और उसमें सामाजिक मूल्यों के ऐसे भी प्रश्न उठते हैं जो बड़े पक्ष के लक्षण हैं। हम फिर कहते हैं कि अध्ययन की गहनता बहुत अधिक महत्वपूर्ण है; किसी विषय का ऊपरी प्रचलन करने से राजनीतिक खतरे की आशंका है, क्योंकि राजनीतिक और सामाजिक समस्याओं के लघु-ज्ञान से लघु-जान वाला ही प्रलुब्ध होता है।

प्रौढ़-शिक्षा में इतिहास के अध्ययन के लिए विद्यार्थी को परिपक्व होना चाहिए। जीवन की अनुभूतियाँ होनी चाहिएँ। शिक्षक के लिए दो कर्तव्य अनिवार्य हैं, प्रथम आधुनिक

युग और उसकी उलझनों की ओर, द्वितीय, इतिहास के वैज्ञानिक स्तर की ओर; उसे वास्तविक इतिहास पढ़ाना है और फिर भी वर्तमान अवस्था को भुलाना नहीं चाहिए।

उपर्युक्त प्रस्तावित सामाजिक अध्ययन की पद्धति पहले से ही मानती है कि अब भी सामाजिक मूल्य और स्तर जीवन का सामान्य आधार समझा जाता है। जहाँ ये स्थितियाँ होती ही नहीं, तो प्रौढ़-शिक्षा का कार्य यदि चलता भी है तो इसलिए कि समुदाय का कुछ अंश शिक्षक की निष्कपटता, चरित्र, लगन और मानवता में विश्वास करता है। यहाँ प्रौढ़-शिक्षा पूर्णतः परस्पर सम्बन्ध का मामला बन जाता है, विषय का चुनाव अपेक्षाकृत निरर्थक हो जाता है।

सामाजिक अध्ययन मनुष्य को समाज में एक उद्देश्य मानता है, अतः उनका कार्य आंशिक होता है। मानवता का भली भाँति अन्वेषण किए बिना मानवीय परिस्थितियों का यथार्थ और विस्तृत सत्य ज्ञात नहीं होता। सामाजिक अध्ययन प्रायः आपेक्षिक होते हैं, जिनका ध्यान बाह्य परिस्थितियों पर केन्द्रित रहता है और कभी-कभी प्रणाली की प्रविधियों में अत्यधिक व्यस्त होता है। मनुष्य को व्यक्ति विशेष समझे बिना और उसके व्यक्तित्व के परिणामस्वरूप मूल्यों तथा अधिकारों की जानकारी रखे बिना सामाजिक उत्तरदायित्व का प्रशिक्षण अपूर्ण रह जाता है। सामाजिक अध्ययन का लक्ष्य मुख्यतः समूह, सामूहिक हित और सामूहिक सम्बन्ध हैं, अतः यह खतरा है कि अन्त में उनके जीवन का दृष्टिकोण ऐसी सामूहिक सत्ता न हो जाय, जिसमें व्यक्तित्व के विकास की सम्भावना न रहे और व्यक्ति पूर्णतः राज्य द्वारा शासित रहे। विज्ञानेतर विषयों के अध्ययन से इस प्रकार की प्रवृत्तियों पर रोक थाम हो जाती है, क्योंकि वे अभिव्यक्ति व मत की स्वतन्त्रता को, स्वेच्छानुरूप व रहस्यमयी उत्पत्ति को लोकतन्त्र निर्माण के अनिवार्य अंश मनुष्य के अविच्छेद्य अधिकार को महत्व देते हैं।

यहाँ फिर प्रणाली और पद्धति में सर्व विषयों (जिनमें विज्ञानेतर विषय भी सम्मिलित हैं) की अखंडता पर महत्व दिया जाना चाहिए; यद्यपि साहित्य, दर्शन, धर्म कलाएँ इन सबकी अभिव्यक्ति के माध्यम भिन्न-भिन्न हैं तथापि उनकी उत्पत्ति उसी सृजनात्मक प्रवृत्ति से हुई। यहाँ सृजनात्मक व्यक्ति के आन्तरिक जीवन और फिर उसकी ऐतिहासिक पृष्ठभूमि का विश्लेषण उसकी सामूहिक सदस्यता की अपेक्षा के बिना करना चाहिए। यह एक तथ्य है कि विज्ञानेत्तेर विषयों के क्षेत्र में शास्त्रीय कार्य, जो सृजनात्मक बुद्धि की विशुद्ध रचना हैं, कार्य, समय और परिस्थिति के प्रकरण के बिना सदैव अमर रहेंगे।

उप-संहार

सामाजिक व राजनीतिक उत्तरदायित्व में, प्रौढ़-शिक्षण के विकास को आवश्यक स्तर पर लाने के लिए प्रत्येक देश के साधनों का उदारता से उपयोग होना चाहिए। यह स्पष्ट है और कदाचित पुनरुक्ति भी नहीं है कि शिक्षा देश के आर्थिक तथ्यों पर आधारित रहती है। कुछ देशों में यह पाया गया है कि बड़े पैमाने पर बेरोज़गारी के परिणाम-स्वरूप प्रौढ़-शिक्षा की माँग में वृद्धि हुई है। दूसरी ओर इससे नैराश्य का भाव उत्पन्न होता है जो किसी भी प्रारम्भिक क्रिया के प्रतिकूल है, अथवा प्रौढ़-शिक्षा एक ऐश्वर्य की वस्तु समझी जा सकती है जिसके लिए व्यय करने में देश असमर्थ है, यद्यपि और किसी समय प्रौढ़-शिक्षण की वास्तविक आवश्यकता इतनी अधिक नहीं होगी।

परन्तु आर्थिक अंश ही प्रौढ़ शिक्षण के कारण नहीं हैं। जब तक मनुष्य उच्च उद्देश्य द्वारा प्रेरित नहीं होते, तब तक वे राजनीतिक व सामाजिक क्षत्र में उच्च शिखर पर नहीं पहुँच सकते। उन उद्देश्यों तक पहुँचने में सहायता देना प्रौढ़-शिक्षा के कर्तव्य का एक अंग है। प्रौढ़-शिक्षा का यह भी कर्तव्य है कि जिन उद्देश्यों की पूर्ति की आशा भविष्य में सम्भव हो उनकी सीमा पहचानें। प्रौढ़-शिक्षकों के उद्देश्य बहुत उच्च हैं, अतः कभी-कभी उनकी प्रवृत्ति उन उद्देश्यों को व्यवहार में लाने की कठिनाइयों को न्यूनतम बनाने की रहती है। इस प्रकार की प्रवृत्ति भ्रमात्मक तथा विक्षोभमय होती है। निःसन्देह यह बेईमानी का एक रूप है। विचारने में ईमानदारी की आवश्यकता एक मुख्य पाठ है जो प्रौढ़-शिक्षा को सिखाना है, विशेषतः ऐसे समय में, जब यह मान लिया गया है कि अनुपयुक्त तथ्य विचारों तथा बहु-संख्यक निर्णयों द्वारा मिटाए जा सकते हैं।

छठा अध्याय

सम्मेलन के सदस्यों द्वारा टिप्पणियाँ समाज और गृह

डा० यूगेन रोज़ेन स्टोक हूसी नोरविय
वरमाउन्ट यू० एस० ए० से

प्रौढ़-शिक्षा पर यूनेस्को संस्था के सम्मेलन पर अभ्युक्तियाँ

सम्मेलन के प्रतिवेदन को पदानुपद कदाचित ही कोई पढ़ता हो। अतः, यूनेस्को के हेम्बर्ग सम्मेलन के दो प्रारम्भिक विचारों ने जैसा मुझे प्रभावित किया वैसा ही मैंने उनका अनुवाद किया है। जैसे-जैसे वे मेरे अन्दर विकसित हुए, वैसे ही मैं उनका वर्णन करूँगा। सम्भव है कि जिस प्रकार मैं इनसे अनुप्रेरित हुआ, उसी प्रकार दूसरे भी होंगे।

(१) राज्य अथवा समाज ?

हैम्बर्ग में, हमारे प्रथम दिवस पर, नारा 'नागरिक शिक्षा' आकर्षक प्रतीत हुआ। वयस्क को एक नागरिक बनाओ और प्रौढ़-शिक्षा सफल हो जाएगी। नागरिक का अर्थ है सम्पूर्ण व्यक्ति, मानवीय, राजनीतिक व सामाजिक।

यूरोप-निवासियों के मध्य, अमरीकावासी होने के कारण, मैं नागरिकता या नागरिक शिक्षा ही को सर्व रोगों की औषधि नहीं मानता। किसी राष्ट्र की नागरिकता अच्छाई की ओर एकतरफा मार्ग नहीं है। अन्यथा, युद्धों की व्याख्या, नहीं की जा सकती। १९५३ में, इस नारे से निरुत्साहित लाचारी का आभास होता था। यह मान लेना अधिक अच्छा होगा कि नागरिकता दोनों प्रकार के कार्य करती है, शान्ति स्थापित करने के लिए और उसके विपरीत तथा दूसरों के साथ सम्बन्ध स्थापित करने के लिए।

हमारे हेम्बर्ग वाद-विवाद में हमारे कार्य ठप्प हो जाते यदि एक उक्ति स्वीकार न कर ली जाती—इस पृथ्वी पर किसी वयस्क को केवल नागरिक या साथी कह कर पृथक् नहीं किया जा सकता। हम सब में अनेक शक्तियाँ हमारा रूपान्तर करते हुए प्रवाहित हो रही हैं। नाना समय पर हम नाना व्यक्ति बन जाते हैं। हम राष्ट्र, धर्म-संघ, जनसाधारण, समाज या प्रकृति का उत्पादन हैं। शिक्षा को यह समृद्धि स्वीकार करनी ही चाहिए, जहाँ एक ही प्रणाली, एक ही पद्धति में सबका अस्तित्व लुप्त हो जाता है। मनुष्य के अनेक बन्धन हैं यह प्रौढ़-शिक्षण पहले से ही मानती है।

प्रौढ़-शिक्षण को यह अनुमति नहीं है कि वह किसी शिक्षक अथवा विद्यार्थी को किसी विशेष प्रकार का बताए। मनुष्य को परिवर्तनशील मानना पड़ेगा। इस विचार का दो प्रकार से उपयोग होता है। एक प्रौढ़-शिक्षा श्रेणी के सदस्य के दो सम्बन्धों को विचारा जाता है, कक्षा से बाहर के और कक्षा से भीतर के। बाहर, संसार उसे स्थिर या गतिमान होने के लिए चुनौती देता है। परन्तु अन्दर विद्यार्थी के कर्तव्य को चुनौती दी जाती है। क्योंकि प्रौढ़-शिक्षण में हम सब शिक्षक हैं और विद्यार्थी भी।

विद्यार्थी सामर्थ्यशाली शिक्षक भी है और यही तथ्य बाल-शिक्षा को प्रौढ़-शिक्षा से विभाजित करता है। बालक आकस्मिक, परिवर्तनशील और स्थायी का भेदभाव नहीं कर सकते। परन्तु प्रौढ़-शिक्षा में, शिक्षक व शिक्षार्थी के कर्तव्यों के परिवर्तन की अनुभूति होना आधारभूत है। अन्तर्निर्भरता व पारस्परिकता प्रौढ़-शिक्षा के आधार हैं। तदनुसार, जातियों प्रजातियों, धर्मों तथा राज्यों को बिल्कुल विभाजित करने वाली मानवता प्रौढ़-शिक्षा के सिद्धान्त के विरुद्ध है। इन विभाजक दीवारों के अस्तित्व को अस्वीकार नहीं किया जा सकता, परन्तु वे सामाजिक स्वभाव के अनुकूल हैं और सामाजिक बातें क्षणिक व अस्थिर स्वभाव की होती हैं।

इस विचार से, प्रौढ़-शिक्षण का अस्तित्व मूल्यों की परम्परा पर निर्भर है। राज्य एवं समाज के संघर्ष की धारणा के बिना कोई प्रौढ़-शिक्षा टिक नहीं सकती। क्योंकि, समूची सामाजिक प्रक्रियाओं में यह सामान्य है कि कर्तव्य-परिणति में स्वतन्त्रता होती है। समाज उन सब प्रक्रियाओं का योग है जिनसे मनुष्य व समाज के जीवन में कर्तव्यों का परिणमन होता रहता है। या तो एक मनुष्य अपने जीवनकाल में नाना कर्तव्यों को निभाता है (जैसे बालक, योद्धा तथा वयोवृद्ध) से अथवा समान कर्तव्य अनेक मनुष्यों को क्रमानुसार करना पड़ता है। इस लक्षण के अभाव में कोई सामाजिक अन्तर्दृष्टि सम्भव नहीं है। यह समझौता सफल सिद्ध हुआ। विशेषतः जर्मनी में, राज्य और समाज के पारस्परिक कर्तव्यों में गलत-फहमी एक सामान्य-सी बात है। वैधता, नियम कानून, स्थिरता जर्मनी का आदर्शवाद, नौकरशाही व राजनीतिक विचारधारा के निर्देशक प्रारम्भिक विषय हैं। सामाजिक नीति सरकार की नीति है। सामाजिक कार्यकर्तागण को राज्य अधिकारी समझा जाता है। अब इस दृष्टिकोण के गुणों को कोई अस्वीकार नहीं करेगा। सरकार से नियम और स्थिरता स्थापित करने को कहा जाता है। राज्य द्वारा सम्पत्ति, राष्ट्रों और कर्तव्यों की सीमाएँ कार्य के लिए सहर्ष स्वीकार कर ली जाती हैं। परन्तु सरकार की नीति उस दिशा में पक्की हो जाती है। एक बार की प्रजा सदा ही प्रजा हो जाती है, यह बात हम सब के सम्बन्ध में लागू होती है। सरकार की दृष्टि में हमें कुछ-न-कुछ होना चाहिए,

एक अंगरेज, अथवा विदेशी, करदाता अथवा याचक। सरकार के उद्देश्य के लिए यह सत्य हो सकता है, परन्तु यह स्वयं सत्य नहीं है। यदि एक नौकरशाही यह मान सकता है कि मनुष्य कोई-न-कोई वस्तु है तो हमें उसके आंकड़ों से अधिक ज्ञात होना चाहिए। धर्म-परिवर्तन, जीवन-वृत्ति, पुत्रवत अंगीकार करना, विवाह, मित्रता, साझा, सदस्यता, इनमें से प्रत्येक कार्य अंक-शास्त्री के वर्गीकरण में बाधा है। वह इस अजीब मिश्रण पर दुःख प्रकट कर सकता है। उसका ध्येय तो समानता और एकरूपता है।

परन्तु जब हम 'महान् समाज' कह कर विचारते हैं, हमें अधिकारी की विचारधारा के विपरीत कार्य करना पड़ता है। एक सामाजिक विचारक को चाहिए कि वह परिवर्तन को केन्द्र में रखे। देश में बसने वाला और देश को छोड़कर दूसरे स्थान पर जाकर बसने वाला, धर्म-परिवर्तन करने वाले व पापी उनके लिए अपवाद नहीं हैं, परन्तु निष्क्रमण व रूपान्तर स्वाभाविक हैं। जो मनुष्य स्थिर रहते हैं उनको वह कायर व जीर्ण समझता है; सेन्ट पॉल तथा पिलिग्रम्स फादर जैसे परिवर्तनशील व्यक्तियों को ही वह मनुष्य जाति का यथार्थ आदर्श रूप विचारता है।

प्रौढ़-शिक्षण इसे पहले ही मानता है। राज्य और समाज दो विरोधी तत्व हैं। सरकार स्थायित्व पर आशा बाँधती है। जो एक बार भला मनुष्य है वह सदा भला रहेगा। परन्तु समाज प्रत्येक को इस आशा से छोड़ देता है कि उसमें एक दिन परिवर्तन भी आ सकता है।

वर्तमान संयुक्त राज्य एक उदाहरण है। अन्य किसी देश में धनिक व निर्धन का अन्तर इतना अधिक नहीं है। बोल्शेविक विचार से संयुक्त राज्य का अन्त निकट है। परन्तु संयुक्त राज्य के निवासी इस दृष्टिकोण के विपरीत हैं। अति धनाढ्य मनुष्य भिखारी को अपना ही शक्तिशाली भविष्य मानता है। यदि कभी संयुक्त राज्य की जनता ने यूरोप निवासियों के साथ सामाजिक अन्तर्दृष्टि की अपेक्षा राजनीति को अधिक मान दिया तो उनके समाज का अधोपतन हो जायगा। समाज अर्थात् अनित्य पक्ष को मान देने के कारण वे मानव बने रहते हैं। जैसे एक गुरु जब तक निजी प्रशिक्षणार्थी को भविष्य का गुरु नहीं मानता वह उसका अनुचित उपयोग करेगा। कोई मानवीय परिस्थिति सामाजिक बना दी जाती है जब उसमें यह भावना गुप्त रहती है कि हमारे कर्तव्यों का विनिमय हो सकता है। इंगलैंड में दीर्घ काल तक समाज केवल उच्च सामाजिक स्तर का था, परन्तु उस संकुचित और हठधर्मी समाज का माप वही है जिसकी हमने सूची बनाई है। इस समाज में, सब को समान और विनिमय योग्य माना गया है।

इस प्रकार प्रौढ़-शिक्षा, नागरिकता के नाते हमारे स्थायी कर्तव्यों तथा समाज के नाते हमारे अस्थायी कर्तव्यों से सम्बन्ध रखती है। वार्तालाप इसका आदर्श व इसका साधन

है। अतः प्रौढ़-शिक्षक के लिए मनुष्य, विरोधी प्रवृत्तियों का मिश्रण है जो स्थायी पर निर्भर रहता है और परिवर्तन को ध्येय मानता है। यौवन तथा वृद्धावस्था, वार्ता व मित्रता, शिक्षा व भेंट हमारे परिवर्तनशील आचरण को दर्शाते हैं जब कि कानून, सम्पत्ति, धारा, नागरिकता तथा मत हमारे जीवन के स्थायी पक्ष की ओर संकेत करते हैं।

इस अन्तर्दृष्टि द्वारा प्रौढ़ों के उचित पाठ्य-क्रम की प्रथम सीढ़ी के विषय में ज्ञात होता है। स्पष्टतः प्रौढ़-शिक्षण के कार्यक्रम में, प्रौढ़ के सम्पूर्ण जीवन के ऊपर विचरना अपेक्षित है। यदि हम उन्हें अर्थ-शास्त्र, मनोविज्ञान, आशुलिपि व भाषा के सामान्य ज्ञान तक सीमित रखते हैं तो प्रौढ़-शिक्षा शक्तिहीन तथा आंशिक हो जाती है। दूसरी ओर हम सभी जानते हैं कि धार्मिक व राजनीतिक विषय विवाद के लिए प्रायः अति तार्किक विषय हैं। फिर इसे विस्तृत कैसे बनाया जाय ? इस विरोध को किस प्रकार रचनात्मक बनाया जाय ? हैम्बर्ग के सम्मेलन ने इस समस्या के हल का मार्ग प्रदर्शन कर दिया है : राजनीति व धर्म झगड़े का विषय रहेगा जब तक उनमें वाद-विवाद सामान्य व निरपेक्ष रूप से रहेगा। ईश्वर, धर्म, नीतिशास्त्र, राजनीति, इन पर वयस्कों का विवाद यही होगा जब तक उनको केवल भोजनोपरान्त के वाद-विवाद की सामग्री समझी जायगी। परन्तु वयस्कों को अपनी बात पर अड़े रहना चाहिए। वही एक वयस्क है जो एक ही समय, परिवर्तन तथा स्थिरता में विश्वास रखता हो। बालक चंचल हो सकते हैं। जर्जरता परिवर्तन के विरुद्ध हो सकती है। वयस्क दोनों के सत्य को पहचानता है। उसके निजी जीवन के सामाजिक परिवर्तन और कानून के अन्तर्गत उसके अधिकारों की स्थिरता। इस द्वैत के माध्यम द्वारा, वह तृतीय राज्य की अनुभूति के लिए बाधित होता है, जो इस समय समाज और राज्य दोनों से परे है। समानता और असमानता में, अस्थिरता और स्थिरता में, अविवाहित और विवाहित में, कानून और परिवर्तन के मध्य किये गए उनके निर्णयों द्वारा इस तृतीय राज्य का निर्माण होता है। वह ही निरन्तर यह निर्णय करता है। दिन-प्रतिदिन, पल-प्रतिपल, यह विश्वास स्पष्ट होता जाता है। मनुष्यों का विश्वास सर्व-व्यापी धर्म पर आधारित नहीं होता। प्रत्येक मनुष्य, जो समाज और राज्य के संघर्ष को पहचानने योग्य होता है, इसकी अनुभूति करता है। जब उसका अपना विश्वास दृढ़ हो जाता है तभी धर्म, गिरजा, अध्यात्म-विद्या, नीतिशास्त्र इत्यादि उसके लिए गम्भीर विषय होंगे। उसके विवाद में लड़कपन न होगा। उनका अर्थ ठोस होगा। और कोई मनुष्य, जिसे यह विदित हो कि वह किस विषय पर बोल रहा है, तो यह अति सुगमता से बोलेगा। उसकी वार्ता लाभप्रद होगी।

प्रौढ़-शिक्षण में उपयुक्त विषयों की वृद्धि होती है। पादरियों के समय के प्राचीन भावुक ढांचे, जिनमें धर्म को प्रथम, राजनीति को द्वितीय तथा सामाजिक को तृतीय स्थान

दिया गया है, अपरिपक्व रहेंगे। प्रौढ़ समूह में किसी अध्ययन का उपयुक्त क्रम है, परिवर्तन पर—I सामाजिक जिसके अन्तर्गत प्रौढ़-शिक्षा है, स्थिरता पर—II राजनीतिक, जिसके अन्तर्गत राष्ट्रीय नियम और संविधान, दोनों के मध्य के मार्ग III आध्यात्मिक।

II और III को नहीं त्यागा जा सकता अन्यथा प्रौढ़-शिक्षा का महत्व न्यून हो जाता है तथा वह अपरिपक्व व शक्तिहीन हो जाती है। II और III को ग्रहण नहीं किया जा सकता जब तक कि सामूहिक सदस्य प्रौढ़ न हों। प्रौढ़ता कोई अवस्था व कार्य का शारीरिक तथ्य नहीं है, यह कोई बाह्य रूप नहीं है। प्रौढ़ वह है जो प्रतिदिन दो समान मानवीय दिशाओं में, निजी समूह को समानता और समाज के परिवर्तन में खिचने की समस्या को मानता हो। इन दोनों में दैनिक निर्णय करने की स्वतन्त्रता पर ही शिक्षा आधारित है।

प्रौढ़-शिक्षा के निजी उद्देश्य पर इसकी प्रतिक्रिया होती है। मानवीय समस्या गतिशील और गतिहीन के मध्य ताल स्थापित कर देती है। प्रौढ़-शिक्षा का ध्येय है—सम्मान के साथ परिणत होने की शिक्षा देना, न अधिक उदासीनता से और न अधिक अनिच्छा से। विद्रोही और रूढ़ि-वादी दोनों ही अस्वस्थ सामाजिक प्रथा के चिह्न हैं। प्रेरित ऐच्छिक कार्य-कर्ता अपने परिवर्तन के समय-पत्रक को बना देते हैं। इससे उनका कार्य महत्वपूर्ण हो जाता है। अपने उचित सामयिक प्रबन्ध के कारण वे समाज और राष्ट्र को भयानक विनाश से बचाते हैं। महान् ब्रिटेन में श्रमजीवी शैक्षिक परिषद् की प्रथम शिक्षा कक्षाओं की यही भव्यता है। उनके सभी सदस्य बाद में, ब्रिटेन की राजनीति में, महत्वपूर्ण व्यक्ति बन जाते हैं। अल्बर्ट मैन्सविज के हम आभारी हैं कि ये कक्षाएँ उचित समय पर लगाई गई थीं। और उचित समय ही उनकी प्रतिभा की देन है। जिसने कभी मित्रता की भावना का अनुभव नहीं किया, उसके लिए ससम्मान परिवर्तन करना असम्भव है। प्रौढ़-शिक्षा इसी जीवन का एक आदर्श अर्पित करती है।

संसार और होमलैण्ड :

इस प्रकार प्रौढ़-शिक्षा का कार्य परिणत हो गया है। गुन्नविग की लोक उच्च पाठ-शाला प्राचीन पद्धति 'जनता के लिए शिक्षा' का अभ्यास कर रही थी और उसने अपने ऊपर यह उत्तरदायित्व है कि वह अशैक्षिक जनता का बाहर के व्यक्तियों से सम्बन्ध स्थापित करे।

ज्ञान के युग से, प्रत्येक होमलैण्ड को भय होने लगा। औद्योगीकरण, विशाल नगर, अधिक यातायात हानिकारक शक्तियाँ हैं। प्रौढ़-शिक्षा का कर्तव्य इन हानिकारक शक्तियों द्वारा उन्मूलितों को सहायता देना था। इस प्रकार कृषकगण, श्रमिकगण, गृह-स्वामिनियों,

शिल्पकार गण सब सहायता के लिए प्रौढ़-शिक्षा का आश्रय खोज रहे थे, कारण कि उनके होमलैण्ड को भय था। केम्ब्रिज (इंगलैण्ड) में १९२९ में सकल विश्व के प्रौढ़-शिक्षा-शास्त्रियों के सम्मेलन से प्रौढ़-शिक्षा के इस युग का अन्त हो गया। इस विश्व सम्मेलन में यही तथ्य है जो इसको स्मरणीय बनाता है। होमलैण्ड के ४०० प्रतिनिधिगण प्रविधि व अर्थ-व्यवस्था के विशाल संसार के विरुद्ध आत्म-रक्षा हेतु एक हो गए।

इसका अर्थ क्या है ? सकल हरी-भरी घाटियाँ तथा पर्वत श्रेणियों में विश्व के यातायात का संचार हो गया था। अत: विश्व-ज्ञान की चुनौती के उत्तर में संसार के विरुद्ध होमलैण्ड ने संगठित नीति अपनाई। १९२९ की विश्व-काँग्रेस एक आत्म-रक्षा की क्रिया थी और प्रौढ़-शिक्षकों के राष्ट्रीय समूहों का विश्व अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन केवल आत्म-रक्षा की दृष्टि से ही समझा जा सकता था।

१९५२ में, हैम्बर्ग में, मैंने परिस्थिति को पूर्णत: विपरीत पाया। दो विश्व-युद्धों ने और मध्य के कष्टों ने 'एक संसार' की धारणा को वास्तविकता का रूप दे दिया, वस्तुत: एक अत्यन्त निर्मम वास्तविकता फैक्टरी ने, समुचय गृह-कार्यकर्ता का उन्मूलन कर दिया। कृषक ट्रेक्टर चलाता है, घाटी के ऊपर वायुयान है, उसके समक्ष दूर-दर्शनकारी यन्त्र हैं, और यूरेनियम के अनुसन्धानकर्ता उसमें खोज करते हैं। टोकियो, बर्लिन, बूनोस ऐरस तथा मोस्को, मनुष्य के प्राविधिक अस्तित्व में लगभग सभी एक समान हैं।

यूनेस्को हमारी विश्व-अन्तर्निर्भरता की मान्यता का चिह्न है। हम नक्षत्र के जीव हो गए हैं। हम अपने दैनिक श्रवण, कथन तथा विचारों के आभारी हैं। श्रमिक, कृषक तथा गृह-पत्नी किसी प्राविधिज्ञ अथवा कोषाध्यक्ष की भाँति ही विशाल विश्व के प्राणी हैं। केवल कुछ मेधावी कार्य अभी तक मातृभाषा की राष्ट्रीय भूमि में जड़ पकड़े हैं, प्राध्यापक, कवि, पत्रकार तथा पादरी होमलैण्ड के अन्तिम प्रतिनिधि हैं।

इस सम्पूर्ण नक्षत्र के आर्थिक मनुष्य में भयंकर कँपकँपी छूटती है। संसार प्रौढ़ को कोई अस्तित्व, कोई धर्म नहीं देता। यह उसको अनन्त अनिश्चितता, अनन्त परिवर्तन देता है। परन्तु प्रत्येक मनुष्य इस असीम संसार में बन्धन की खोज करता है। हैम्बर्ग में हमने जाना कि अब संसार ने होमलैण्ड की ओर आना आरम्भ किया है। विश्व-संगठन होने के कारण यूनेस्को को राज्य के अंगों को नहीं अपितु गृह-अंगों को जगाने के लिये देश-देश में घूमना चाहिए। अन्यथा स्वयं संसार और यूनेस्को कार्य नहीं कर सकते। विपरीत संतुलन की भाँति संसार को होमलैंड की आवश्यकता है। ये होमलैंड अनेक स्थानों में राज्य से लघुतर होंगे। संसार और ब्रिटेनी, संसार और बवारिया, संसार और लोम्बर्डी, ये आगामी प्रौढ़-शिक्षण के योग्य साथी हैं।

पूर्णता से देखने पर, प्रौढ़-शिक्षण का इतिहास एक युग की समाप्ति पर है। जैसे १९२४-१९२९ का वरदान प्रथम विश्वयुद्ध के समय के लिए सहायक था, प्रौढ़-शिक्षा की १९२९ की विश्व कांग्रेस एक ऐसी घटना थी जिसकी १९१४ में एल्बर्ट मैंसब्रिज आशा लगाए था; अर्थात्, कांग्रेस १९वीं सदी की है, वह देर से आई; क्योंकि इसकी प्रवृत्तियाँ राज्य से दूर समाज की ओर अग्रसर हो रही थीं।

परन्तु हमें द्वितीय विश्व-युद्ध के ७ वर्ष पश्चात् कार्य के प्रत्येक घंटे में क्रान्ति की लहर अनुभव होती है। शिक्षा इस सत्य से होमलैंड की ओर अग्रसर होगी। उन्मूलित मनुष्यता को स्थिर रहने के लिए प्रोत्साहित करना चाहिए। और इस प्रकार समाज, जो परिवर्तन पर ही आधारित है, यथार्थ प्रौढ़ों को आमन्त्रित करता है, जो समस्त कर्तव्यों के उपरान्त भी निजी अन्तर में निजी होमलैंड लिए फिरते हैं।

सातवाँ अध्याय

नागरिक के लिये राजनैतिक उत्तरदायित्व

श्री सोहन सिंह
शिक्षा मन्त्रालय, नई देहली, (भारत)

इस लघु वक्तव्य में मैं केवल दो ही प्रश्नों के सम्बन्ध में कहूँगा :

(१) आधुनिक जीवन को दृष्टि में रखते हुए एक नागरिक का राजनीतिक उत्तरदायित्व क्या है ?

(२) इस उत्तरदायित्व की पूर्ति के लिए सामर्थ्य उत्पन्न करने में प्रौढ़-शिक्षण क्या कर सकता है ?

हर व्यक्ति का राजनैतिक उत्तरदायित्व विभिन्न होता है। यह इस बात पर निर्भर है कि समाज में व्यक्ति का क्या स्थान है। एक अराजनीतिज्ञ की अपेक्षा एक राजनीतिज्ञ के लिए इसमें कहीं अधिक अन्त-र्वस्तु होगी। हमारे वर्तमान कार्य के लिए हमें न्यूनतम व्यापक राजनैतिक उत्तरदायित्व लेना पड़ेगा, अर्थात् इसकी आशा एक ऐसे सामान्य नागरिक से की जा सकती है जिसका मुख्य व्यवसाय राजनीति नहीं है। हमें अपना अनुसंधान क्षेत्र एक स्वायत्त सरकार तथा लोकतन्त्रीय देश के नागरिकों तक ही सीमित रखना चाहिए।

मैं एक दृढ़ वक्तव्य से प्रारम्भ करूँगा। एक सामान्य नागरिक का उत्तरदायित्व उसके मताधिकार तक ही परिमित है—न अधिक न कम। किसी प्रौढ़ के राजनैतिक उत्तरदायित्व का केन्द्रीय तथ्य मतदान है।

ऐसे भी कुछ हैं जो राजनीति में अधिक अपरोक्ष रुचि लेने के लिए प्रौढ़ की आवश्यकता समझते हैं। तथ्य के अनुसार यह असम्भव है तथा सिद्धान्त के अनुसार यह अनावश्यक है।

यह अनावश्यक है क्योंकि मनुष्य जाति स्वाभावतः विशेषज्ञ है। कार्य में रत किसी वैज्ञानिक को लीजिए। यदि वह राजनीति में अपरोक्ष रूप से भाग लेगा तो उसके निजी कार्य में विघ्न पड़ेगा, क्योंकि शतरंज की भाँति राजनीति एक अत्यन्त व्यस्त रखने वाला तथा ध्यान बँटाने वाला कार्य है। जब तक वैज्ञानिक राजनीति को अनियमित खेल के रूप में नहीं लेता, वह जितना ही राजनीति में भाग लेगा, उतनी ही वैज्ञानिकता उसमें कम होती जायगी।

यह कहा जा सकता है कि यूनान के एक नगर में एक नागरिक ने अपने व्यवसाय के साथ अपने राजनैतिक कर्तव्यों को भली-भाँति निर्वहन किया। निःसन्देह, आधुनिक राज्यों में यह असम्भव है, कारण कि इस प्रकार अनेक विषयों पर मनन करने के लिए आधुनिक राज्य अत्यन्त विशाल हैं। प्रश्न यह है कि नागरिक की राजनैतिक योग्यताओं को सीमित कर दिया जाय अथवा विशालता के श्राप को घटाया जाय। कुछ ऐसे हैं जो उत्तर क्रम का पक्ष लेते हैं। राजनीति में, अर्थशास्त्र में, जीवन के लगभग सभी विभागों में, अति विशाल संस्थाओं द्वारा व्यक्ति का गला घोंटकर उसका शून्य बनाया जा रहा है। अतः यह कहा जाता है कि हमारी संस्थाओं को ऐसे लघु एकक में विभाजित कर देना चाहिए कि कोई भी मनुष्य अपनी सामर्थ्य का तथा अपनी राजनीतिक योग्यताओं का भी विकास करने में समर्थ हो। परन्तु यह कोई हल नहीं है, क्योंकि आधुनिक संसार जो है सो है, उसकी विशालता स्थायी हो रही है। यदि तुम लघु एकक से प्रारम्भ करो जिसमें व्यक्ति पूर्ण राजनैतिक उत्तरदायित्वों का अपरोक्ष रूप से निर्वहन करे, हर तरह से उस लघु एकक से ही आरम्भ करो, तथापि ये लघु एकक स्वयं सम्मिलित होकर विशाल एकक बन जाएँगे और इस प्रकार जिस विशालता के श्राप को एक ओर से हटाया वह दूसरी ओर से आ गया।

अब इस साधारण तथ्य को स्वीकार कर लेना चाहिए कि राजनीति अब एक ऐसा विशेष व्यवसाय है जिसमें साधारण और असाधारण दोनों ही प्रकार के व्यक्तियों की समस्त लगन खप सकती है। अतएव एक वैज्ञानिक राजनीति में उतनी ही रुचि ले सकता है, जितनी कि राजनीतिज्ञ, और उतनी ही लेना भी उचित है, या उस कारण से अन्य कोई नागरिक विज्ञान में उतनी ही रुचि ले सकता है और लेनी भी चाहिए, क्योंकि हम वैज्ञानिक तथा राजनीतिज्ञ दोनों को ही मानव रखना चाहते हैं। हम यह कामना नहीं करते कि एक मनुष्य को विज्ञान की लत लग जाए और अन्य को राजनीति की जैसे आल्डस हक्सले ने कहा।

अतएव किसी सामान्य नागरिक के लिए न तो सम्भव है और न आवश्यक ही है कि वह राजनीति में मतदान से अधिक गहराई में जाए।

परन्तु फिर, जो मनुष्य निजी विशेष विषय के परे अन्य कुछ नहीं देख पाते, इनके परिणामों से बचाने के लिए हम उन्हें परामर्श देंगे कि मत तो उन्हें देना ही चाहिए, और विवेक से। ओरटिगा ए गेसेट के मुहावरे के अनुसार हर मनुष्य का निजी जीवन के अत्युत्तम स्तर पर पहुँचना जन्म-सिद्ध अधिकार और कर्तव्य है।

निजी जीवन के उच्चतम स्तर पर पहुँचे हुए राजनीतिज्ञ से आशा की जाती है कि वह विज्ञान के आविष्कारों से अवगत रहे तो जीवन के अत्युत्तम स्तर पर पहुँचे हुए वैज्ञानिक को राजनीति का ज्ञान होना चाहिए। विवेक सहित मतदान कर राजनीति के प्रवाह में योग देना, ये दोनों उत्तरदायित्व ऐसे मनुष्यों के हैं जो अपने जीवन के उच्चतम स्तर पर पहुँच गए हैं।

आप विचारेंगे—यह भी अनूठा सिद्धान्त है कि नागरिक के राजनैतिक कर्तव्यों को केवल मतदान तक संकुचित कर दिया जाए। क्या होगा जब एक राजनीतिज्ञ किसी एक सामान्य नागरिक को मतदान से वंचित कर देने वाली परिस्थिति में डाल दे। यह केवल एक अव्यावहारिक प्रश्न नहीं है, ऐसा अनेक बार हुआ है। मेरा उत्तर यह है कि यदि कोई राजनीतिज्ञ उसको ऐसी परिस्थिति में डाल देने का कुचक्र चले तो सामान्य नागरिक कुछ नहीं कर सकता। उदाहरणार्थ, जब कोई डॉक्टर किसी साधारण नागरिक को गलत औषधि दे दे तो वह कर ही क्या सकता है ? और हम सब-के-सब डॉक्टर नहीं बन सकते, जैसे हम सभी राजनीतिज्ञ नहीं बन सकते। उक्त केवल यह सिद्ध करता है कि एक राजनीतिज्ञ को केवल कूटनीतिज्ञ होना चाहिए, परन्तु वह दूसरी बात है।

पुरुषों तथा स्त्रियों के विचारों को उचित रूप में परिणत करने वाली शिक्षा का सम्बन्ध केवल यह है कि जहाँ कहीं नागरिक मतदान कर सकते हैं उन्हें प्रथम तो मतदान अवश्य करना चाहिए और द्वितीय समझ-बूझकर करना चाहिए। दोनों ही अनिवार्य हैं। क्योंकि ऐसे भी उदाहरण हैं जब या तो आलस्यवश अथवा अवगुणों के कारण मनुष्य मत नहीं देते। भारत में हाल में ही हुए चुनावों में मैंने इस गम्भीर सत्य को पाया जबकि अल्प-शिक्षित, किंवा अशिक्षित वर्गों का तो मतदान कक्ष में जमघट लगा था, किन्तु शिक्षित मनुष्यों की एक बहुत बड़ी संख्या ने मतदान कक्ष तक जाने का ही कष्ट नहीं किया। इन शिक्षित मनुष्यों ने यह नहीं विचारा कि इसी प्रकार मनुष्य अपने मत खो बैठते हैं जो कुछ मैंने भारत के लिए कहा वह ऐसे अनेक देशों के लिए भी सत्य है जहाँ मनुष्यों को मतदान का अधिकार है।

जागृत बुद्धि वाले मनुष्य भी मतदान से दूर रहें यह शोचनीय है, क्योंकि यह माना जाता है कि यदि वे मतदान करेंगे तो विवेक सहित करेंगे। राजनैतिक उत्तरदायित्व के दृष्टिकोण से यह उचित है कि बिना विचारे मतदान की अपेक्षा मत न देना अधिक अच्छा है।

अतएव राजनैतिक उत्तरदायित्व का आधुनिक अर्थ है मत का विवेक सहित प्रयोग। अतएव हमें यह प्रश्न करना चाहिए कि मत का विवेक सहित प्रयोग किसे कहते हैं। मत का

किस प्रकार प्रयोग किया जाए कि जिससे मनुष्य की बुद्धि, विवेक तथा विद्वत्ता के साथ न्याय हो। निःसन्देह इसका उत्तर सरल है। जब कोई मनुष्य समय की आवश्यकताओं को समझता हो, और राजनीतिज्ञ और राजनैतिक दलों की इस दृष्टिकोण से तुलना करता है कि इन आवश्यकताओं की पूर्ति करने के लिए कौन अधिक योग्य है, तभी वह समझदारी और बुद्धिमानी से मत देता है। परन्तु आवश्यकताएँ व्यक्तिगत, स्थानीय, राष्ट्रीय तथा भौगोलिक भी हो सकती हैं। और मेरा कथन है कि इस २०वीं सदी के उत्तरार्द्ध के राजनैतिक उत्तरदायित्व का कठिन कार्य मानवता के दृष्टिकोण से समस्त आवश्यकताओं को समझना तथा तदनुसार मत देना है। अन्य किसी प्रकार का मतदान अनुत्तरदायित्व है।

उनका कथन है कि हमारी प्राविधिक स्थिति तथा हमारे सामाजिक-संस्थान में भयंकर अन्तर है। मेरे विचार से यह अन्तर हमारे विशाल मानसिक क्षितिज तथा हमारे संकुचित बन्धनों के मध्य अधिक भयंकर है। हमें ज्ञात है कि यह मानवता है जो अधिक सत्य है, परन्तु हम ऐसे व्यवहार करते हैं मानो हमारा अपना अस्तित्व सबसे बड़ा सत्य है और उससे कम हमारे निजी सम्बन्धियों का अस्तित्व। मनुष्य आते हैं और जाते हैं, राष्ट्र बनते हैं और बिगड़ते हैं, परन्तु मानवता अमर है। पिथेकोन थ्रोपस से २०वीं सदी होमो तक, मानवता केवल एक महान् सिद्धान्त पर कार्य करती रही है और वह है संस्कृति की वृद्धि द्वारा जीवन की वृद्धि। मानवता के विशेष अंश से उस महान् सिद्धान्त की कोई तुलना नहीं। तब इस आधारभूत सत्य का सामना क्यों न किया जाय और सदा के लिए यह मान लिया जाय कि व्यक्ति-विशेष तथा राष्ट्रों की वास्तविकता मानवता की वास्तविकता के अधीन है और इसकी उत्पत्ति की तरह, व्यक्ति-विशेष तथा राष्ट्रों के भी अधिकार मानवता की आवश्यकता तथा माँग के अधीन मान लिये जाएँ।

यह लगभग सम्भव ही है कि इस स्थिति के विरुद्ध विरोध होगा। यदि मानवता मुख्य सत्य है तो कोई राजनीतिज्ञ मानवता के नाम पर व्यक्ति-विशेष को कुचल सकता है। यदि कोई राष्ट्र मानवता की दुहाई देकर किसी का अणु-बम से विनाश करना चाहे तो कर सकता है। व्यक्तियों की स्वाधीनता, मूल्य तथा गौरव, जिसके लिए संयुक्त राष्ट्र भी प्रयत्न कर रहा है, सब केवल एक विडम्बना मात्र रह जाते हैं।

अब यह स्पष्ट है कि व्यक्ति-विशेष के अधिकार सदा केवल सिद्धान्तों तक ही सीमित थे। व्यक्तिवाद के युग में राज्य तथा राष्ट्र की व्यक्ति-विशेष से सदा अधिक महत्ता रही है। सैद्धान्तिक रूप से तो व्यक्ति-विशेष ही सर्वाधिकारों का भण्डार था, परन्तु व्यवहार में सत्तारूढ़ राष्ट्र ही सब कुछ था। कुछ भी हो, यह तथ्य अस्वीकार नहीं किया जा सकता कि पूर्वकालिक साम्प्रदायिक अथवा नगरपालिका पद्धति की तुलना में राष्ट्रीय पद्धति ने मनुष्य

के अधिकारों का यथेष्ठ विकास किया। समानुरूपता से तर्क करते हुए हम कम-से-कम यह कह सकते हैं कि यह आशा करना अन्याय न होगा कि मानवता की पद्धति, यद्यपि व्यक्ति-विशेष तथा जनसमूहों के अधिकारों को प्रथम स्थान नहीं देगी, तथापि व्यवहार में उनके अति-विकसित जीवनार्थ परिस्थितियाँ निर्माण करेगी। क्योंकि किसी परिवार के सदस्यों से घृणा करके उस परिवार को किस प्रकार स्नेह प्रदान किया जा सकता है ? और मानवता से प्रेम करने के लिए इसके तुच्छतम अंगों को पसन्द व प्रेम करना अनिवार्य है।

दूसरी ओर से भी विरोध सम्भव है। यह कहा जायगा कि व्यक्ति-विशेष तथा जनता को अधिकारों से वंचित करके तथा दोनों को मानवता के ऐतिहासिक कार्य के अधीन बनाना साम्यवाद की बातें करना है। मेरा कथन है कि यदि साम्यवाद का यही सिद्धान्त है तो मैं इसका स्वागत करता हूँ, हम सभी को इसका स्वागत करना चाहिए। परन्तु मानवता का आदर करने के लिए वर्गीय संघर्ष करना, पारस्परिक विनाश के लिए युद्ध करना, बैर-भाव तथा पाशविक भौतिक हिंसा प्रदर्शन, ये बड़े विचित्र मार्ग हैं और केवल यही साम्यवाद की देन है।

मैं निःसंकोच यह तर्क करता हूँ कि सर्वोच्च सत्य मानवता की प्रशंसा करते समय हमें समस्त भय व शंका त्याग देनी चाहिए। क्योंकि यह निश्चित है कि जैसे मनुष्य के साम्प्रदायिकता से राष्ट्रीयता पर उठने से व्यक्ति-विशेष के लिए अवसरों का विकास हुआ, तदनुरूप और अधिक उच्च संघटन पर उठकर हम राष्ट्रों में व्यक्ति-विशेषों के अन्तर को दूर कर देंगे और इस प्रकार निश्चय ही व्यक्तियों तथा जनता के अवसरों को सीमित करने की अपेक्षा उनका विकास करेंगे। परन्तु यह तभी न्यायपूर्ण होगा यदि मानवता स्वयं संस्कृति व जीवन के अधिक उच्च स्तर को अपनाए।

मेरा कथन है कि इस प्रकार राजनैतिक उत्तरदायित्व की दृढ़ता मानवता को ही अधिक वास्तविकता मानने में और मतदान के समय इसी पक्ष को व्यावहारिक रूप देने में है। आरम्भ में उठाये गए दो प्रश्नों में प्रथम प्रश्न 'आधुनिक जीवन में किसी नागरिक का राजनैतिक उत्तरदायित्व क्या है ?' का यह उत्तर है।

जो कुछ मैंने कहा उसमें कुछ नवीनता नहीं है। संसार एक है इस सिद्धान्त से हम सभी परिचित हो गए हैं। परन्तु उकता देने वाली सीमा तक हमें इसके सम्बन्ध में तर्क-वितर्क करने की आवश्यकता है, जब तक कि हम इससे भय न खा जायँ। क्योंकि ऐसे करने से हम निजी स्वाभाविक देश-भक्ति के संस्थानों के स्थूल कवच को भंग करने की आशा कर सकते हैं।

और अब हम द्वितीय प्रश्न की ओर मुड़ते हैं, इसकी वृद्धि में प्रौढ़-शिक्षा क्या सहायता कर सकती है ? उत्तर है—यह केवल-शिक्षा है जो मनुष्यों के विचारों में और उनके उद्देश्यों में नवीन राजनैतिक उत्तरदायित्व के अनुसार परिवर्तन कर सकती है। राजनैतिक क्षेत्र में जीवित अणु तो आधुनिक सभ्यता द्वारा अपेक्षित विविध कार्यों में व्यस्त नर-नारी हैं। अतएव, इन अणुओं के विचार व व्यवहार परिणत करके ही किसी जनता-जनार्दन का राजनैतिक संस्थान परिवर्तित कर सकते हैं। हम अपनी सन्तान को नवीन ढंग से शिक्षित करें, इस आशा से कि जब वे वयस्क होंगे तब वे अपने राजनैतिक ढंग को परिवर्तित करेंगे, घोड़े के आगे गाड़ी जोड़ना है। आप बालकों को नवीन पद्धति से शिक्षित कर सकते हैं जब कि उनके शिक्षक जो स्वयं वयस्क हैं, नवीन पद्धति के हों और उन्हें शिक्षित करने के लिए स्वतन्त्र हों। सब प्रौढ़ों को शिक्षित करने की प्राथमिकता की ओर संकेत करते हैं।

साधारण शिक्षण-पद्धति सदैव प्राचीन होती है। साधारणतः राजनैतिक दलों का पारस्परिक संघर्ष है। जब दैनिक कार्यों में व्यस्त नर-नारी के जीवन में कोई व्यापक आन्दोलन घर कर लेता है, तभी इन मनुष्यों की राजनीति में नवीन प्रकाश की किरणें चमकती हैं। अतः जनता की राजनैतिक उत्तरदायित्व की चेतना जागृत करना और उसे क्रियात्मक रूप दिलाना केवल प्रौढ़-शिक्षण का ही उत्तरदायित्व है।

आठवाँ अध्याय

प्रौढ़-शिक्षण में व्यक्तित्व का प्रशिक्षण

प्रो० डॉ० बर्टा ह्यूबर बिन्डशेडलर
संचालक फोक हाईस्कूल स्विज़रलैन्ड

दीर्घ अवधि के अनुभव से हमें यह शिक्षा मिलती है कि वर्तमान प्रौढ़-शिक्षा का ध्येय विस्तार की अपेक्षा उसकी गहराई पर अधिक होना चाहिए। विभिन्न क्षेत्रों के ज्ञान-प्रदान की अपेक्षा प्रौढ़-शिक्षण का ध्येय गहन विचार, अनुभूति तथा विवेकपूर्ण निर्णय करने का पथ-प्रदर्शन होना चाहिए। मानसिक प्रक्रियाओं का विकास होना चाहिए, विद्यार्थियों की व्यक्तिगत उमंगों का नहीं, क्योंकि वास्तविक सभ्यता उपयोगिता, शक्ति तथा सफलता की दासी नहीं है अपितु वह मानवीय व्यक्तित्व के विकास के लिए है। प्राविधिक विजय के सार्वजनिक युग में जब जीवन का भी यन्त्रीकरण हो गया है, वास्तविक मानवीय मूल्यों को भयानक ख़तरा है। ऐसी मिथ्या शिक्षा (अर्थात् ऐसा ज्ञान प्रदान करना जो श्रोताओं के सम्मुख कोई माँग नहीं रखता) से मिथ्याभिमान तथा बाह्यता उत्पन्न हो जाती है। प्रौढ़-शिक्षा को सदा से अधिक आवश्यकता है कि वह जनता को स्वयं की ओर, वास्तविक मनुष्य की ओर, आत्मा, शरीर व मन की एकता की ओर और ऐसे व्यक्ति की ओर मोड़े जो विश्व में अन्य व्यक्तियों के सम्बन्ध से ही अपना स्थान खोजता हो। इस प्रकार हमारा मुख्य कर्तव्य व्यक्ति को प्रशिक्षित करना और इसके लिए व्यवहृत नियमित ज्ञान सम्पूर्ण व्यक्ति के सम्मुख लाना चाहिए, ताकि वह निर्मोही रूप से सीखने की अपेक्षा कुछ करने का वचन दे। इस कार्य के लिए महान् शिक्षात्मक उत्तरदायित्व संगठन-कर्ता व वक्ताओं में कला की आवश्यकता है। इसकी पूर्ति कोई उन्मत्त क्रियाओं द्वारा नहीं होगी और जहाँ इसकी पूर्ति होती है वहाँ सदैव अन्य मनुष्यों के प्रति प्रेम की अभिव्यक्ति के कारण ही होती है।

(जर्मन से अनुवादित)

नवाँ अध्याय

आवासिक संस्थाओं का मूल्य डेन्मार्क

प्रोफेसर जोहन्स नोवरूप
फोक हाईस्कूल के संचालक मेगलीस

सौ वर्ष से अधिक से लोक उच्च विद्यालय आवास-संस्थाओं के आधार पर चल रहे हैं। निःसन्देह, हम डेन्मार्क के निवासी किसी ऐसे लोक उच्च विद्यालय के सम्बन्ध में विचार भी नहीं कर सकते जहाँ शिक्षक तथा शिक्षार्थी, एक साथ रहते हुए एक सम्प्रदाय निर्मित न करते हों। तीन अथवा छः मास के पाठ्य-क्रम के इन विद्यालयों के मूल्य में हमारा विश्वास इस तथ्य पर आधारित है कि वे केवल ऐसे विद्यालय नहीं हैं जहाँ शिक्षा का आदान-प्रदान होता हो, अपितु वह जीवन का एक रूप है।

ग्रुन्त विग ने लोक उच्च विद्यालय के सम्बन्ध में लिखते हुए यह परामर्श दिया कि हमारे संविधान के अनुसार ही उनको ढालना चाहिए, ताकि वे अपने विद्यार्थियों को सामाजिक तथा राजनैतिक जीवन में उत्तरदायी नागरिक की भाँति भाग लेने की शिक्षा दे सकें। अतएव उसने विद्यार्थियों के मध्य स्वायत्त सरकार की यथेष्ट वकालत की तथा प्रस्ताव किया कि समस्त महत्वपूर्ण कार्यों में मुख्याध्यापक को विद्यालय समिति से परामर्श लेना चाहिए, और समिति के अधिकतम सदस्य विद्यार्थियों द्वारा ही चुने जाने चाहिए।

यह स्वीकार करना होगा कि डेनिश लोक उच्च विद्यालय के वास्तविक इतिहास में इस विचार ने तुलनात्मक रूप से अधिक कार्य नहीं किया। इसके अनेक कारण हैं। जब ग्रुन्तविग ने उपरोक्त नवीन विद्यालय का वर्णन किया, तब वे एक ऐसे विद्यालय की कल्पना कर रहे थे जो इस वर्तमान स्कूल से विभिन्न था। वह विद्यालय अधिक दीर्घ अवधि तथा असाधारण रूप से योग्य विद्यार्थियों के लिए था। प्रौढ़-शिक्षा पर ग्रुन्तविग के विचारों ने १८३० की जनता को आश्चर्यचकित किया और आकर्षित भी किया, परन्तु उन विचारों को कार्यान्वित किए जाने की पद्धति और भी अधिक विचित्र थी। एक विशाल राज्य संस्था एक लोक-विश्व-विद्यालय की अपेक्षा बीसियों लघु, स्पष्टतया लघु विद्यालय हो गए।

हमारे अल्प-कालिक कॉलिज थे। विद्यार्थी, बालक व बालिकाएँ जो साधारण योग्यता व बौद्धिक विकास के थे, सीधे ग्रामों से आते थे। उनकी शिक्षा केवल नवीन स्थापित, निरर्थक से प्राथमिक पाठशाला में ६-७ वर्ष से अधिक और कोई नहीं थी। अनेक तो उनमें से केवल इसलिए आते थे कि अपनी प्राथमिक स्कूल की अर्द्ध-विकसित शिक्षा को

फिर से स्मरण करें अथवा कुछ विकसित करें। विद्यार्थियों की स्वायत्त सरकार का विचार कोई स्वाभाविक नहीं था और इस प्रकार के विद्यार्थी के अनुकूल भी नहीं था।

ग्रुन्तविग के प्रस्ताव तथा वास्तविक विकास के अन्तर में द्वितीय कारण यह है। उनके प्रचार तथा लेखों से जिस आन्दोलन की वृद्धि हुई वह पारस्परिकता के विचार से (कुछ विशेष ढंग से) रँगी हुई थी, विचार कि "सभी में कुछ एक ही प्रकार की विशेषता है," कि मनुष्य किसी सम्प्रदाय से सम्बन्ध रखकर ही मनुष्य होता है, और इस प्रकार दूसरों के साथ विचारों तथा मूल्यों में भाग लेता है। इस विचार के कारण अनेक मुख्याध्यापक स्कूल के जीवन को आधुनिक सामाजिक संस्थान के अनुसार संगठित करने की अपेक्षा मित्रता तथा मानवता के यथार्थ उत्साह की वृद्धि की ओर अधिक ध्यान केन्द्रित करने लगे हैं।

वर्तमान समय में, सम्भवतः हमें विद्यार्थी स्वायत्त सरकार के विचार पर अधिक महत्व देना चाहिए परन्तु लोकतन्त्र के लिए पारस्परिकता की आवश्यकता अधिक गहन, अधिक आधार-भूत तथा प्राथमिक है।

परन्तु फिर पारस्परिकता के विचार को लोक-उच्च-विद्यालयों में किस प्रकार कार्यान्वित किया जाय? उनके इतिहास के प्रथम दस वर्षों से ही, विद्यार्थियों के सम्मुख लोक-उच्च-विद्यालय पाठशाला की भांति नहीं अपितु घर की भाँति उपस्थित किये गए थे—एक घर जहाँ कि उदाहरणार्थ, कृषक क्रिस्टन कोल्ड वहाँ कृषक बालकों व बालिकाओं के साथ रहने वाला था। वस्तुतः प्रारम्भ में ही क्रिस्टन कोल्ड ने अपने विद्यार्थियों के साथ भोजन करने के अतिरिक्त, उनके साथ एक ही कक्ष में शयन भी आरम्भ किया। शयन के पूर्व वे निजी विद्यार्थी-वृन्द के साथ घण्टों तक वार्तालाप करते पाए जाते और ऐसी परिस्थितियों में औपचारिक विद्यार्थी समिति संगठित करना ऊपरी-सा प्रतीत होता।

जब तक लोक उच्च विद्यालय में अधिकतम बालक ही थे, यह घरेलू वातावरण उत्पन्न करना अपेक्षाकृत सरल था, परन्तु आधुनिक विशाल विद्यालयों में जहाँ सौ और दो सौ की संख्या में विद्यार्थी हैं और एक में तो ३५० तक हैं—यह कैसे हो सकता है?

यह कहना अनुचित न होगा कि यहाँ भी घर के वातावरण की परम्परा पाई जाती है और अनेक रीतियों में व्यक्त होती है। उदाहरणार्थ, सबसे बड़े विद्यालय आसकोव ने, अनेक विद्यार्थियों के कारण उत्पन्न कठिनाइयों को दूर करने का प्रयत्न किया है। समस्त छात्राएँ शिक्षक के निवास-स्थान में रहती हैं। वे अपना भोजन शिक्षक-परिवार के साथ करती हैं और सप्ताह में प्रायः एक बार शिक्षक के निजी कक्ष में औपचारिक रूप से सन्ध्या व्यतीत करती हैं। उसी प्रकार छात्र-गण भोजन तो विद्यालय के भोजनालय में लेते हैं परन्तु सप्ताह में एक बार उन्हें अध्यक्ष तथा उनकी पत्नी के साथ सन्ध्या व्यतीत करने, शनिवार

की सन्ध्या को और रविवार को सार्वजनिक सभा करने के लिए तथा भ्रमणार्थ जाने के लिए उत्साहित किया जाता है। ये समस्त कार्य, व गृह में सन्ध्या व्यतीत करने के कार्यक्रम पूर्णतः ऐच्छिक आधार पर तथा संस्था के सदस्यों की मैत्रीपूर्ण क्रिया-शीलता के आधार पर चलते हैं।

इस पारस्परिकता के विचार की सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण अभिव्यक्ति यह है कि शिक्षा पूर्णतः विभाजित कक्षाओं तथा अध्ययन वर्गों में नहीं होती। दिन में एक या दो बार अधिकतम विद्यालयों में, समस्त विद्यार्थीगण व्याख्यान सुनने के लिए बुलाए जाते हैं। व्याख्यान में ये श्रोतागण अधिकतम महत्त्वपूर्ण लोक उच्च-विद्यालय के माने जाते हैं। भ्रमण के समय, घर में, सायंकाल को, भोजन के समय विद्यार्थी-गण परस्पर एक-दूसरे से तथा शिक्षकों से भेंट करते हैं। सामान्य व्याख्यान के समय, समस्त विद्यार्थियों का समान बौद्धिक तथा आध्यात्मिक घटनाओं से सामना होता है। उनकी प्रतिक्रिया विभिन्न हो सकती है, परन्तु व्यावहारिकता में उनका अनुभव एक समान होता है, अतएव वे अपने अनुभव के सम्बन्ध में तर्क-वितर्क कर सकते हैं। एक समान बौद्धिक तथा आध्यात्मिक अनुभूतियों की पृष्ठभूमि पर मित्रता की वृद्धि होगी। यह भी आवासिक शिक्षा का परिणाम ही है कि वहाँ के विद्यार्थी आजीवन मैत्री के बन्धन में बँध जाते हैं। ऐसी मित्रता विशेषतः रुचिकर होती है जो सामाजिक अथवा वर्ग के बन्धनों को भंग कर देती है और जो नगरों के विभिन्न राष्ट्रों के नवयुवकों में उत्पन्न हो जाती है।

इस औपचारिक पारस्परिकता का निःसन्देह यह अर्थ नहीं है कि विद्यार्थी विद्यालय के सार्वजनिक जीवन में कोई सक्रिय भाग नहीं लेते। अधिक-से-अधिक और सम्भवतः समस्त विद्यालयों में, विद्यार्थी समिति, विद्यार्थी तथा शिक्षक-गण के मध्य की कड़ी है जो वादविवाद, भ्रमण तथा पर्व इत्यादि की व्यवस्था करती है। परन्तु हमारे आवासिक विद्यालयों में संगठित विद्यार्थी समिति द्वारा अपेक्षाकृत सीमित कार्य करने के उपरान्त भी, हमें कोई संशय नहीं कि सामान्य जीवन की अनुभूतियों के साथ इन विद्यालयों ने वास्तविक लोकतन्त्रीय पक्ष के विकास में तथा सार्वजनिक जीवन व राजनीति की प्रणाली में एक महत्त्वपूर्ण कार्य किया है।

दसवाँ अध्याय

आवासिक संस्थाओं का मूल्य

डॉ० फ्रिन्ज वोरिन्सकी
गोरडे फोक हाईस्कूल के अध्यक्ष

कुछ समय पूर्व एक राजनैतिक सम्मेलन में बर्लिन के एक राजनैतिक दल के सचिव मेरे पास आए। उन्हें बैनार रिपब्लिक के समय से जबकि मैं सैक्सोनी में एक लोक उच्च विद्यालय में शिक्षक था मेरा नाम स्मरण था। यद्यपि वे स्वयं ऐसे स्कूल में कभी नहीं गए थे, तथापि उनको उस स्कूल के कार्य की स्पष्ट स्मृति थी। उन्होंने मुझसे कहा—"चारों ओर के समस्त जिलों ने आपके कार्य से लाभ उठाया। सब स्थानों में, राजनैतिक दलों में, कर्मी संघों में, व सहकारी समितियों में, कल्याणकारी व युवक संगठनों में, उच्च उत्तर-दायी पदवियों पर लोक उच्च विद्यालय के शिक्षित नवयुवक थे, जिन्होंने वहाँ से प्राप्त हुए विचारों को क्रियात्मक रूप दिया और साथ ही परस्पर सम्पर्क में रहे। फिर उन्होंने दुखी स्वर में कहा—"आज बर्लिन में ऐसे लोक उच्च-विद्यालय की कितनी आवश्यकता है।"

तथ्य यह है कि आज गत २५ वर्ष पूर्व भी जर्मनी की जनता तथा जर्मनी के नव-युवकों के जीवन और कार्य के लिए साम्प्रदायिक केन्द्रों की आवश्यकता है ताकि सामाजिक और राजनैतिक उत्तरदायित्व के लिए नवयुवकों को तैयार और प्रशिक्षित किया जा सके। ऐसी अनेक बातें जिन्हें १९२५ की नव-सन्तति ने स्वाभाविक और आशामय ढंग से स्वीकार कर लिया था अब पूर्णतः नष्ट हो चुकी हैं।

जर्मनी के बहुसंख्यक निवासी वृद्ध अथवा नव-युवक १९४५ के विनाश के कारण अब तक स्वास्थय लाभ नहीं कर पाए। वे आन्तरिक संघर्ष से व्याकुल तथा भविष्य में नवीन विनाश की आशंका से भयभीत रहते हैं और इस कारण वे किसी भी राजनैतिक तथा सामाजिक मामलों में क्रियाशील भाग लेने से घबराते हैं। अनेक व्यक्तियों का विचार है कि प्रतिक्रिया के अवसर दिए बिना ही अवैयक्तिक सार्वजनिक भाग्य द्वारा वे कुचले गए हैं। उनकी शिकायत है १९४५ के पश्चात् जो उनके प्राचीन उद्देश्यों का उन्मूलन हो गया था, उनके स्थान पर अभी कोई अन्य उच्च उद्देश्य किंवा मूल्य नहीं आए जिनके सहारे वे जीवन-यापन कर सकते। अतएव उनके जीवन में स्थायी उद्देश्य, भौतिक किंवा मनो-वैज्ञानिक सुरक्षा का अभाव है, वे यह भी नहीं जानते कि अपने पड़ौसियों, राष्ट्र तथा मानवता की ओर उनका कैसा व्यवहार होना चाहिए ताकि वे बलिदान और शून्यवाद के

निकट आ जाएँ। इस शोचनीय, सामाजिक तथा मनोवैज्ञानिक स्थिति में जर्मनी के लोक-उच्च-विद्यालय को अपने विशेष कर्तव्य निभाने का प्रयास करना चाहिए।

आवश्यकता तो बढ़ गई, परन्तु समस्या का समाधान कठिन हो गया। यद्यपि (currency reform) के पश्चात् जर्मनी की अर्थव्यवस्था पर आश्चर्यजनक तीव्रता से प्रभाव पड़ा तथापि सांस्कृतिक व शैक्षिक जीवन में विविध अभाव तथा कठिनाइयाँ व्याप्त हैं। न ही यथेष्ट समय और न ही यथेष्ट स्थान उपलब्ध हो सका, प्रतिभाशाली शिक्षकों तथा आर्थिक साधन का अभाव है। इस प्रकार अनेक लोक उच्च विद्यालय तीव्र क्रिया-कलापों का केन्द्र बन गए जहाँ पाठ्य-क्रम अत्यन्त प्रचुर है और समय अल्प है। पिछले समय में अनेक मास के गहन बौद्धिक कार्य के पश्चात् विद्यार्थीगण के निजी सामान्य जीवन तथा कार्य से दूर हट जाने का भय था और इसलिए विद्यालय की पढ़ाई के पश्चात् अपने को सामान्य जीवन के अनुकूल बनाने में कठिनाई अनुभव करते थे। अब यह भय और नहीं प्रतीत होता। अपितु लोक-उच्च-विद्यालय के शिक्षकों को वर्तमान परिस्थितियों में विद्यार्थियों के साथ वास्तविक सम्पर्क स्थापित करने में कठिनाई का सामना करना पड़ता है। विद्यार्थी अनेक हैं तथा समय अल्प है।

कुछ भी हो, अब हमें आधारभूत समस्याओं से हटकर कार्य पर विचार-विनिमय करना चाहिए। जो लोक-उच्च-विद्यालय १९४५ के पश्चात् स्थापित किये गए हैं, उनमें अधिकांश वर्तमान समय में अपने मुख्य पाठ्य-क्रम चार या छः सप्ताह की अवधि तक सीमित रखने को और इनके अतिरिक्त अनेक एक सप्ताह से दो तक के लघु-शिक्षा पाठ्य-क्रम चलाने को बाधित हैं। प्रारम्भिक पाठ्य-क्रम की अपेक्षा लघु-शिक्षा पाठ्य-क्रम पर कुछ अधिक विचार करना चाहिए, विशेषतः नाना प्रकार के निजी, सामाजिक तथा राजनैतिक समूहों में जहाँ भी वे अपने-आपको पाएँ दूसरों के साथ रहने की शिक्षा के दृष्टिकोण से। जो विद्यार्थी ये अल्प-कालीन पाठ्यक्रम लेते हैं वे उनसे प्रेरित हो सकते हैं परन्तु उसका प्रभाव गहन तथा चिरस्थायी नहीं हो सकता। फिर भी, यह प्रेरणा वहाँ मूल्यवान हो सकती है, जहाँ विद्यार्थियों के साथ सम्पर्क स्थापित रखना सम्भव हो और लोक-उच्च-विद्यालय के पाठ्य-क्रम में निरन्तर सहभाग लेने देना सम्भव हो। गोरडे लोक उच्च विद्यालय ने महिलाओं, नवयुवक नेतागण, कुछ संस्थाओं और संगठनों के सदस्यों के लिए भी जैसे प्रशासनिक विद्यालय, शिक्षकों के प्रशिक्षण विद्यालय, कर्मी-संघ, पूर्व जर्मनी से शरणार्थियों के समूह तथा जर्मन सेवा संगठन के सदस्यों के लिए इस प्रकार के लघु पाठ्य-क्रम की व्यवस्था करके उत्कृष्ट परिणाम प्राप्त किए हैं। इन समूहों तथा दीर्घकालीन

पाठ्य-क्रम के विद्यार्थियों की पारस्परिक भेंट दोनों पक्षों के लिए सामाजिक रूप से उपयोगी सिद्ध हुई।

आवश्यक चरित्र-निर्माण और पूर्ण बौद्धिक प्रशिक्षण के लिए चार-छः सप्ताह के मुख्य पाठ्य-क्रम भी वास्तव में अत्यन्त अल्प हैं। परन्तु यहाँ कम-से-कम विद्यार्थियों पर निश्चित शैक्षिक प्रभाव डालने की सम्भावना रहती है। इस दिशा में तीन बातें अधिकतम महत्ता की हैं :—

१. हम बौद्धिक स्पष्टीकरण तथा अभ्यास के लिए आधारभूत समाचार के सम्पर्क के लिए, वस्तुओं में अन्तर्सम्बन्ध की चेतनता के लिए सामाजिक तथा राजनैतिक विचारों के अनुसार अपने स्वभाव को गढ़ने के लिए प्रयत्न कर रहे हैं। मूल-भूत विचारों तथा तथ्य के ज्ञान के बिना, राजनैतिक प्रश्नों को उनके व्यापक अर्थ में समझने और स्पष्ट निर्णयों को विचारने की योग्यता के बिना सामाजिक तथा राजनैतिक दायित्व की शिक्षा शिक्षा नहीं समझी जाती।

२. हमें तो ऐसे उचित वातावरण का निर्माण करना चाहिए जहाँ साधारण बौद्धिक एवं मानवीय कार्य किए जा सकें। व्याख्यान पद्धति के उपयोग को न्यूनतम करने से अध्ययन समूहों, वादविवाद, तर्क-वितर्क विद्यार्थियों द्वारा व्याख्यान देने तथा अचल भाषण की अधिक जानदार प्रणालियों के परिणामस्वरूप अधिक निपुणता प्राप्त होती है, व्यक्तित्व का विकास होता है, स्वतन्त्र प्रयत्नों को प्रोत्साहन मिलता है तथा साम्प्रदायिक भावना का संवर्द्धन होता है। अध्ययन मण्डल विशेषतः उन सामाजिक गुणों के अभ्यास के पर्याप्त अवसर प्रदान करता है जिसके बिना सामाजिक तथा राजनैतिक उत्तरदायित्व की भावना अविचारणीय है। जैसे—बौद्धिक स्वतन्त्रता, अन्य मनुष्यों का आदर, सहनशक्ति तथा व्यावहारिकता।

३. विद्यालय में सामूहिक जीवन का समस्त वातावरण एक शैक्षिक कार्य करता है। अतः यह अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है कि यह सामूहिक जीवन लोक-तन्त्रीय उद्देश्यों तथा शिक्षा-पद्धति के अनुरूप हो। पाठ्य-क्रम के प्रशासन में विद्यार्थियों को भाग देने से, विद्यार्थी समितियों तथा शिक्षक-शिक्षार्थी और मित्रता की भावना को परिवर्द्धित करने से विद्यार्थियों के निजी कक्षों में, साम्प्रदायिक भोज के समय, विद्यालय के लिए, व्यावहारिक कार्य करने से, रसोई में, लड़की के सायबान तथा बागमें, खेल-कूद के अवसर, साम्प्रदायिक गान तथा शौकिया ड्रामे, सामाजिक सन्ध्या, भोज व पार्टी द्वारा यह अनुरूपता प्राप्त की जा सकती है। परिस्थितियों के अनुकूल एक प्रकार का साम्प्रदायिक जीवन जिसमें औपचारिकता न हो, निर्माण और अनुभव होना चाहिए। इससे प्रत्येक सदस्य को अन्य मनुष्य

के सम्बन्ध में विचारने की तथा उनकी ओर दया भाव रखने की शिक्षा प्राप्त होगी। इससे मनुष्य अपने और अपने समूह के लिए उत्तरदायित्व अनुभव करेगा।

हमें हमारे विद्यार्थियों द्वारा ज्ञात होता है कि व्यक्तिगत उत्तरदायित्व की ओर यह तिहरी शिक्षा उनके भविष्य के लिए अत्यन्त महत्त्वपूर्ण रही है। सामाजिक कर्तव्य अपनी वास्तविक परिस्थिति में कितने ही कठिन क्यों न हों, और हमारे सामाजिक जीवन की नीरस यथार्थताएँ, हमारे संगठन और हमारे कार्य-स्थान कितने भी निरुत्साहित करने वाले क्यों न हों, पर वे निरन्तर सामाजिक कर्तव्य वहन करने का प्रयास करते हैं।

२. इस सम्बन्ध में जर्मनी में वर्तमान प्रौढ़ों की सामाजिक तथा राजनैतिक शिक्षा के दो विशेष कार्य बताऊँगा। प्रथम कार्य तो लोकतन्त्रीय सार उत्पन्न करने का है और द्वितीय लोकतन्त्रीय संगठन का।

१९३३ से लोकतन्त्रीय परम्पराओं में विशृंखलता हो जाने के कारण तानाशाही तथा सम्पूर्ण युद्ध के विनाशकारी प्रभावों के कारण, लोकतन्त्रीय तत्व का निर्माण ही इस देश में लोक-नन्त्र को बचाए रखने का कारण बन गया। यदि 'जो लोकतन्त्र तथा इसकी स्वतन्त्रता के सम्बन्ध में अलापते हैं, उनके गुणों द्वारा ही केवल वह सुरक्षित की जा सकती है तो उन गुणों की आवश्यकता हो जाती है। जर्मनी में, लोकतन्त्रीय सार की शक्ति विशेषत: गत वर्षों में अधिक न्यून हो गई है जिसके परिणाम गम्भीर हुए। जो लोकतन्त्र के यथार्थ गुण प्रदर्शन करने के लिए रह गए हैं उन पर प्राय: अत्याधिक कर लगाया जाता है और उनमें से बहुत अब वृद्ध हो गए हैं। इस प्रकार अब ऐसे युवक लोकतन्त्रीय तत्व के निर्माण की आवश्यकता है जो अविलम्ब नेतृत्व संभाल लें और लोकतन्त्र के अन्तर्गत सम्पूर्ण उत्तरदायित्वों को समझते हुए उसे प्राप्त कर ले। हमारे लोक-उच्च-विद्यालयों के कार्य के लिए यह निश्चित ध्येय है। इस आश्वयकता की पूर्ति के लिए लोक-उच्च-विद्यालय को चाहिए कि वे युवकों को आवश्यक राजनैतिक ज्ञान और कला-कौशल दें। उनकी सामाजिक भावना को दृढ़ करें। राजनैतिक तथा बौद्धिक कार्यों को संभालने के लिए बौद्धिक प्रशिक्षक और आवश्यक प्रविधि की जानकारी महत्त्वपूर्ण है। यह भी उतना ही महत्त्वपूर्ण है कि कॉलिज के जीवन और कार्य में युवक प्रत्यक्ष लोकतन्त्र के रूप तथा मूल्य की अनुभूति करें। राजनैतिक निर्णय करते समय, व्याख्यान में या लेखों में अपने विचार व्यक्त करते समय, मानव-जाति के साथ व्यवहार करते तथा क्रियात्मक कार्यों के समय लोकतन्त्र के रूप और मूल्य का निरीक्षण करने के लिए विद्यार्थियों को प्रशिक्षित करना चाहिए। लोक-उच्च विद्यालय में इस प्रकार के सुअवसर प्रतिदिन पर्याप्त परिणाम में उपलब्ध होते हैं। उदाहरणार्थ, मैं एक विवाद की व्यवस्था तथा आवासिक गृह के नियमों के सम्बन्ध में (जैसे

व्यर्थ का शोर विशेषतः विश्राम के समय), पड़ौसियों से अच्छे सम्बन्ध व कॉलिज की सम्पति का आदरणीय उपयोग करने के सम्बन्ध में विचार कर रहा था। इन मामलों में विद्यार्थी नेता तथा विद्यार्थी-प्रशासनिक समितियाँ अपना प्रभाव डाल सकती हैं। वे कभी-कभी स्वाधीनता और प्रण, एक ओर किसी के राजनैतिक विचारों की मान्यता और दूसरी ओर असहमति के विचारों के आदर के सम्बन्ध में शैक्षिक वाद-विवाद के कारण भी बन सकते हैं। आवश्यक गुण की व्याख्या करने के लिए जीवित या इतिहास या साहित्य से लिए गये प्रसिद्ध व्यक्तियों के उदाहरण दिये जा सकते हैं। उदाहरणार्थ, प्रो० रैजल आमरैनत की कथा जो अपने आलसी पुत्र को मतदाता के उत्तरदादित्व का ज्ञान कराता है, या अल्बर्ट शिवीटज़र के कार्य सामाजिक जीवन की शिक्षा के सदा मूल्यवान साधन सिद्ध हुए हैं।

कुछ भी हो, वर्तमान परिस्थितियों में, इस बात पर विशेष ध्यान देना चाहिए कि ऐसे व्यक्तियों को प्रशिक्षित करने की आवश्यकता नहीं है जो नीतिज्ञ और जीवन-वृत्ति बनाने वाले नौकरशाही एवं उत्तेजित हों। विद्यालयों में जो मानव प्रवृत्तियों को प्रोत्साहित किया जाता है और समस्त कार्य-कलापों में सामाजिक भावना को जो महत्त्व दिया जाता है उससे विद्यार्थियों को मनुष्यों की सेवा करने की एवं उत्तरदायित्व की शिक्षा मिलनी चाहिए जो उस सेवा का ही एक अंग है।

लोकतन्त्रीय सार के निर्माण की भाँति वास्तविक साम्प्रदायिक जीवन की शिक्षा भी महत्त्वपूर्ण है। इसको मैं लोकतन्त्रीय संगठन कहना ठीक समझूँगा। एक-पक्षीय अर्थात् केवल 'व्यक्तित्व की शिक्षा', अथवा "किसी के निजी सामाजिक समूह के लिए शिक्षा" का प्रयत्न नहीं करना चाहिए, इसके लिए बौद्धिक साधनों की आवश्यकता है इसीसे सदैव व्यक्तिगत तथा सामाजिक अहंकार की उत्पत्ति होती है।

सामाजिक उत्तरदायित्व की व्यावहारिक शिक्षा, निस्सन्देह यथार्थ विभिन्नता, रुचि में तथा नाना प्रकार के सामाजिक समूहों के रूप के अन्तर की उपेक्षा नहीं कर सकती। यह ग्रामीण नवयुवक तथा युवक औद्योगिक कार्मिकों की रुचि से निश्चित प्रार्थना करती हैं। उनके आत्म-सम्मान, निजी विशेष परम्पराओं, एकत्व तथा सामूहिक मर्यादा की उपेक्षा की अपेक्षा उन्हें दृढ़ करना है। उनके सामाजिक तथा राजनैतिक संघर्ष में न्याय-युक्त अधिकारों की मार्मिकता को समझने में विद्यालय सहायता देता है। यह सब प्रकार के भौतिक, सामाजिक तथा मनोरंजनात्मक कार्य-कलापों में व्यक्तिगत तथा सामाजिक आत्म-अभिव्यंजना को प्रोत्साहित करता है और निजी सामाजिक पृष्ठ-भूमि को साहित्य से परिचित कराता है। परन्तु साथ-साथ विद्यालय युवकों को उनके व्यवसाय और विस्तृत समुदाय की ओर उनका कर्तव्य-बोध कराती है। विद्यालय राष्ट्रों और उपरोक्त राष्ट्रीय-

समाज में, गृह-राजनीति में तथा अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति में समानता का ज्ञान कराता है। प्रत्येक विद्यार्थी को केवल अपने ही समूह की ओर नहीं, अपितु राष्ट्र की ओर एवं विस्तृत तथा अन्तर्राष्ट्रीय सम्प्रदाय की ओर अपने उत्तरदायित्व और कर्तव्यों का ध्यान रखना चाहिए।

जर्मनी में आज किसी विशेष सामाजिक संघ की, राष्ट्रीय संघ की तथा यूरोपियन संघ की सदस्यता की शिक्षा की आवश्यकता है। ग्रामीण तथा नागरिक कार्यकर्ताओं की प्राचीन परम्पराओं का लोप हो गया है और एक युवक को अपने निजी संघ की यथार्थ कड़ी खोजने के लिए फिर से कार्य आरम्भ करना पड़ेगा। साथ ही यह भय भी है कि विशाल संस्थाएँ अधिकारों की माँग करते हुए और अपनी शक्ति की निर्मम नीति पर चलते हुए दबाव डालेंगे और व्यक्ति निजी संघ और सम्प्रदाय की ओर अपने मालिक दायित्व को विस्मृत कर बैठेंगे।

इस प्रकार लोक-उच्च-विद्यालय को दो उत्तरदायित्वों का ध्यान रखना चाहिए। एक तो सामाजिक समूह और द्वितीय राष्ट्रीय व अन्तर्राष्ट्रीय सम्प्रदाय। जर्मनी और उसके योरुप के साथी राष्ट्रों की समान आवश्यकताएँ और मूल्य स्पष्टतया बता देने चाहिए। व्यावहारिकता की शिक्षा, पारस्परिक सम्मान तथा सहायता और उचित कार्य ही समान उद्देश्य और उत्तरदायित्व की स्वीकारोक्ति का मूल है। हमारे विद्यालयों के जीवन द्वारा, जब हम अपने विद्यार्थियों के साथ सामाजिक और राजनैतिक समस्याओं पर तर्क-वितर्क करने बैठते हैं, केवल तभी नहीं, बल्कि पक्षपात और उन्माद, शक्ति और अहंकार की भूख जो सामाजिक और राजनैतिक उत्तरदायित्व के साथ-साथ लगे हैं उनको दबाना पड़ेगा। विभिन्न सामाजिक पृष्ठभूमि के व्यक्तियों की भेंट, विविध धर्म-सम्प्रदायों और राजनैतिक विचारकों को एक अथवा अनेक कार्यक्रमों में भेंट होना, दृढ़ विचार वाले शिक्षकों का उदार, समुचित तथा सहनशील व्यवहार, उपयुक्त दर्शक-संगठन एवं विचारों का प्रतिनिधित्व करने वाले व्याख्यानदाताओं की सहायता ये समस्त बातें, हमारे लक्ष्य प्राप्ति में सहायक हैं।

जर्मनी के लोक-उच्च-विद्यालय ने कुछ ही वर्ष पूर्व अपना कार्य पुनः आरम्भ किया। अतएव परिणाम के सम्बन्ध में कुछ नहीं कहा जा सकता। हमें ज्ञात है कि हमारे विद्यालय के विद्यार्थी-गण अनेक सार्वजनिक पदवियों पर कार्य करते हैं, अनेक केन्द्रीय और स्थानीय राज्य कर्मचारी हैं। कुछ कार्मिक संघ, सहकार समितियों, राजनैतिक दलों, विद्यालयों, गिरिजा-घरों तथा नवयुवकों के कार्यों में संलग्न है। ये सब यथार्थ मानवीय, सामाजिक व राजनैतिक उत्तरदायित्व की भावना सहित शक्ति और किसी एक धर्मोन्माद

के विरुद्ध संघर्ष कर रहे हैं। अन्तर्राष्ट्रीय समूहों तथा विविध सामाजिक संघों, जैसे गोरडे में बारह या अधिक राष्ट्रों सहित योरुप के ग्रीष्म-कालीन विद्यालय, गोटिन्गटन में अल्पवयस्क कार्यकर्ता, कृषक, विद्यार्थीगण के लिए छुट्टियों के लिए पाठ्यक्रम, इन सब संस्थाओं से ज्ञात होता है कि जर्मनी के लोक उच्च विद्यालय के कार्य और जीवन ने सामाजिक तथा राजनीतिक उत्तरदायित्व में यथेष्ट योग दिया है।

(जर्मनी से अनुवादित)

ग्यारहवाँ अध्याय

आवासिक संस्थाओं का मूल्य इंगलैंड

श्री लेसली स्टीफन्स
मुख्याध्यापक, फिरकोफ्ट कॉलिज बरमिंघम

इंगलैंड में आवासिक शिक्षा का एक दीर्घ इतिहास है; वास्तव में ऑक्सफोर्ड तथा केम्ब्रिज के आवासिक विद्यालयों की आंशिक खोज से ही ग्रुन्नविग को डेनमार्क के निवासियों के लिए जनता कॉलिज तथा लोक-उच्च-विद्यालय स्थापित करने का विचार आया। यह कहना भी एक फ़ैशन था कि ऐटन और विनचैस्टर जैसे पब्लिक स्कूल, जो कि निःसन्देह आवास रहित विद्यालय है जहाँ छात्र रहते हैं और अध्ययन भी करते हैं। योरुपियन शिक्षण को हमारी सर्वाधिक महान देन है। परन्तु ऑक्सफोर्ड और केम्ब्रिज, ऐटन और विनचेस्टर धनाढ्य व्यक्तियों के लिये हैं जबकि प्रौढ़-शिक्षण का ध्येय सामान्य जनता की सेवा करना है। ब्रिटेन में जिन्हें अब प्रौढ़ आवासिक विद्यालय कहते हैं उनकी स्थापना विश्व-विद्यालय विस्तार आन्दोलन और कार्मिक शैक्षिक परिषद् की स्थापना के साथ-साथ ही हुई थी। मौलिक धारणा यह थी कि पच्चीस से तीस वर्षीय सामान्य श्रमजीवी, जो अवकाश में अर्थशास्त्र, राजनीति, इतिहास अथवा साहित्य का अध्ययन करते हैं, उनको अपनी ज्ञान-वृद्धि के लिए निरन्तर पूर्वकालीन अध्ययन में एक वर्ष लगाना चाहिए ताकि उनके आत्म-विकास की आधार बुद्धि तीव्र हो सके और समुदाय की समृद्ध सहायता कर सकें। इन विद्यालयों के संस्थापकों का मत था कि ऐसे अनेक व्यक्ति हैं जिनकी शक्तियाँ लुप्त रहती हैं और जो प्लेटों के शब्दों में शिक्षा के बिना 'जीवन-पर्यन्त लंगड़ा कर चलेंगे।" ये विद्यालय कर्मी-वर्ग के लिए सामाजिक तथा राजनीतिक उत्तरदायित्व के प्रति सम्पूर्ण लोकतन्त्रीय आन्दोलन का अंश पाये गए हैं। पब्लिक स्कूलों में आवासिक विश्वविद्यालयों में उत्तरदायित्व के लिए उच्चवर्गीय कक्षाओं को प्रशिक्षित किया जाता है, फिर तदानुरूप अवसर कार्मिक व्यक्तियों हेतु तदनुरूप परिणाम क्यों नहीं उत्पन्न करेंगे।

तब फिर फिरकोफ्ट जैसे आवासिक विद्यालय के, जिसमें ४० विद्यार्थी एक वर्ष तक एक संग रहते तथा अध्ययन करते हैं क्या अनिवार्य शैक्षिक अंग हैं? प्रथम तथ्य यह है कि अनुभूति के पश्चात् अध्ययन किया जाता है ताकि वे विषय, चाहे वे अर्थशास्त्र हो या इतिहास, साहित्य हो या दर्शन, ऐसे नहीं पाये जाते जो परीक्षा के उद्देश्य से उपयुक्त समझे जाते हैं परन्तु वे समाज तथा विश्व से सम्बन्धित मनुष्य के विषय में जानकारी प्राप्त करने

में सहायता देते हैं। जब यह अध्ययन का समय पारस्परिक सहानुभूति के वातावरण में व्यतीत हो जाता है, जब मनुष्य काम-काज के संसार से पृथक् हो जाते हैं, जब वे प्रतिदिन ऐसे शिक्षकों के सम्पर्क में रहते हैं जो उच्च अध्ययन के अधिक अवसर प्राप्त होने के उपरान्त भी विद्यार्थी रहते हैं और जीवित समस्याओं को समझने और सुलझाने का प्रयत्न करते रहते हैं, ऐसी परिस्थितियों में वहाँ रहने की अवधि बौद्धिक तथा संवेगात्मक विकास के लिए एक अद्वितीय सुअवसर प्रदान करती है, यद्यपि ऐसा विकास कोई आनन्ददायक अनुभव नहीं होता।

द्वितीय अंग, सहानुभूति और दूसरे को समझना, इनका विस्तार पृथक्-पृथक् घरों, व्यवसाय तथा देशों से आने वाले विभिन्न व्यक्तियों के अनुभवों के विनिमय से होता है। डरहम से कोयले की खान वाला, लन्दन से क्लर्क, बरमिंघम से मशीन ऑपरेटर ब्रिस्टल से रेल वाला, कोपेनहागल से रोटी वाला, वियाना या बर्लिन से कर्मी संघ अधिकारी, नॉरवे से पत्रकार, और यूगोस्लाविया से स्कूल शिक्षक इस अंतर्व्यावसायिक और अंतर्राष्ट्रीय विद्यालय में कितनी समृद्ध शिक्षा प्राप्त होती है, पारस्परिक भावनाओं का आदर मित्रता द्वारा उत्पन्न होता है। जो बाग लगाने, कपड़े धोने, सामाजिक तथा साहित्यिक समितियों में कार्य करने अथवा एक ही कमरे में अध्ययन व सोने से परिवर्द्धित होती है। एक मित्र के लिए तो विशेष उत्तरदायित्वपूर्ण अनुभव होता है; यदि वह मित्र पूर्व बर्लिन अथवा आस्ट्रिया से, इजराइल अथवा पश्चिमी अफ्रीका से हो तो वह अपने देश की राजनैतिक तथा सामाजिक समस्याओं के सम्बन्ध में किसी की प्रवृत्तियों का क्या कर सकता है ?

तृतीय, व्यक्तिगत उत्तरदायित्व की वृद्धि होती है। आधुनिक औद्योगिक समाज में जहाँ अधिकांश वस्तुएँ विशाल होती हैं। जैसे कारखाने, उद्योग, कर्मी-संघ, सिनेमा, यह अनुभव करना कितना कठिन है कि एक भी व्यक्ति विभिन्नता ला सकता है। एक लघु समूह में हरेक की गणना होती है, हरेक का उत्तरदायित्व होता है और हरेक से विभिन्नता हो सकती है। किसी आवसिक विद्यालय में एक वर्ष का निवास व्यक्तियों को उत्तरदायित्व का अर्थ खोजने में सहायक होता है, और एक आदर्श अथवा माप निश्चित कर सकता है जिसको वह बाद में सारे संसार पर लागू करने की कामना करना है। उदाहरणार्थ, फिरक्रोफ्ट के विद्यार्थी बहुत अंश तक स्वायत्त हैं, विद्यालय की व्यवस्था में समस्त विद्यार्थियों व शिक्षकों की सभा एक महत्वपूर्ण भाग लेती है, विद्यार्थियों द्वारा चुना हुआ उच्च-कक्षा का विद्यार्थी बागवानी, घरेलू कार्य तथा प्रातः अध्ययन के प्रबन्ध का उत्तरदायी है। क्रीड़ा, पुस्तकालय, सामाजिक उत्सव, कॉलिज पत्रिका, संगीत, वाद-विवाद, साहित्यिक कार्य-कलाप इत्यादि का प्रबन्ध विद्यार्थी समितियाँ ही करती हैं। फिरक्रोफ्ट में किसी उत्तरदायित्व से

दूर रहना कठिन है। फिर भी, केवल किसी संगठन में ही कोई कार्य करना उत्तरदायित्व नहीं कहलाता। उत्तरदायित्व का अर्थ गहन है जो सत्य की पहचान से होता है। सामान्य श्रमिकगण जिन्होंने १४ या १५ वर्ष की आयु में स्कूल छोड़ दिया हो, और जो एक ही स्थान तथा व्यवसाय में रहे हों और सम्भवतः एक ही राजनैतिक दल के भी रहे हों, स्वभावतः सबके लिए न्यायपूर्ण विचार नहीं रख सकते। दुःखदायी तत्वों का अवलोकन करना, अपने साथियों द्वारा स्वीकृत धारणाओं की पृष्ठभूमि में छिपे मिथ्या सिद्धान्तों को ईमानदारी से पहचानना, यह एक दुखद कार्य है, परन्तु निस्सन्देह यह प्रौढ़-शिक्षण का और सामाजिक तथा राजनैतिक उत्तरदायित्व का सार है। लघु आवसिक विद्यालय का मुख्य कार्य मित्रता के वातावरण में सत्य का सामना करने में सहायता देना है, ताकि वे विपत्तियों के मध्य भी सत्य से पृथक् न होवें। जैसे पूर्वीय योरुप में आजकल रहने वाले एक विद्यार्थी ने कहा है, "फिरकोफ्ट से ही मुझे लोकतन्त्र में विश्वास जमाये रखने में सहायता प्राप्त होती है।"

बारहवाँ अध्याय

नीदरलैंड में अव्यवस्थित युवकों के क्लब

जैकोबस डबल्यू० उम्स
अव्यवस्थित युवकों के क्लब परिषद के संचालक

एक लघु लेख में युवा कार्य-कर्ताओं के लिए नीदरलैंड में विकसित क्लब के कार्यों के कुछ ही पक्षों पर ध्यान दिलाना सम्भव है। वास्तव में यह कार्य युवा-शिक्षा तथा प्रौढ़-शिक्षण के मध्य में पड़ता है, परन्तु इसे एक प्रकार से प्रौढ़-शिक्षण का रूप कहा जा सकता है। यहाँ मैं सम्पूर्ण समस्या को एक ही मानकर कुछ कहूँगा। क्लब की कार्य-परिधि में युवा वर्ग, उद्देश्य और प्रणाली, नेतृत्व संगठन और अल्प-वयस्क प्रौढ़ों का विशेष स्थान। तीव्र औद्योगिक उन्नति व गत १०० वर्षों में जन-संख्या की महान्-वृद्धि के बहुत-कुछ शक्तिशाली प्रभाव के कारण परिस्थितियों को वर्तमान रूप प्राप्त हुआ है। औद्योगिक केन्द्रों में अधिकांश कार्मिकों का जीवन-स्तर, ऐसे गृह जिनको कठिनाई से कोई गृह कह सकता था, और कार्य का दीर्घ समय, ये सब स्वस्थ पारिवारिक जीवन में बाधाएँ थीं। सरकारी विधान तथा नियुक्त कर्ताओं के अधिक उदार दृष्टिकोण के कारण श्रमिकों को कुछ सामाजिक अरिष्टि प्राप्त हुई है। (उदाहरणार्थ, कार्य का अधिकतम समय रुग्णता में कुछ लाभ, छुट्टियाँ) यह स्थिति सुधार में सहायक हुई है। इस सुधार ने विशेषतः कार्य समय के कम होने से, परिवर्तन यह किया कि पहले तो समस्या यह थी कि कार्य के घण्टे अधिक थे, अब यह समस्या है कि अवकाश का सदुपयोग कैसे किया जाय। प्रावैधिक विकास जैसे रेडियो, सिनेमा, दूर-दर्शनकारी यन्त्र, इनके कारण अवकाश में निष्क्रिय कार्य की संलग्नता में वृद्धि हुई है।

इस शताब्दी के प्रारम्भिक वर्षों में और विशेषतः प्रथम युद्ध के पश्चात्, कई युवा आन्दोलन स्थापित किए गये, परन्तु अनेक युवकों को शिक्षा प्रदान करने के उपरान्त भी ये संगठन न्यून वर्गों तक ही पहुँच पाए, विशेषतः समान धार्मिक, राजनैतिक अथवा अन्य पृष्ठभूमि वाले जो निश्चित नियमों का पालन करने को तत्पर हैं। प्रारम्भ में, अल्प वयस्क प्रौढ़ विशेषतः विश्वविद्यालय के विद्यार्थीगण भी भाग लेते थे, परन्तु अब साधारणतः इन युवक आन्दोलनों में १५ वर्ष से अधिक की आयुवाला कोई नहीं आता।

कुछ अन्य देशों की भाँति नीदरलैंड में भी पारस्परिक सामाजिक आदर्श भी क्षीण हो गए। साधारणतः अव्यवस्थित युवक श्रामिकगण के लिए नवीन आदर्शों को स्थानापन्न करके अपनी क्षति-पूर्ति करनी सम्भव नहीं है, जो अन्य कई वर्गों के लिए उपलब्ध हैं, अतः

वह एक विशेष समस्या हो जाती है। अधिकतम परिवार अथवा पाठशाला में अपर्याप्त सामान्य शिक्षण के पश्चात जब वे केवल १४ वर्ष के होते तो ऐसे कार्य में प्रवेश कर लेते हैं जिसमें विशेष दक्षता और प्रशिक्षण की आवश्यकता नहीं होती। परिणाम यह होता है कि उनमें बड़प्पन की भावना उत्पन्न हो जाती है (क्योंकि वे धनोपार्जन करने लगे हैं और पारिवारिक कोष को सहायता देते हैं)। लेकिन प्राकृतिक मनोवैज्ञानिक विकास उनकी वास्तविक अवस्था के अनुसार ही होता है। उन्हें ऐसा आभास होता है कि उनका कोई आदर नहीं करता और उनकी प्रवृत्ति नियम-उल्लंघन की होती है। सड़कें ही उनका निवास स्थान हैं, जहाँ अनेक अवांछनीय अंश अपना प्रभाव डालते रहते हैं। अनुभवानुसार, अवकाश के लिए वर्तमान शैक्षिक कार्य-कलाप इन युवकों के लिए रुचिकर नहीं होते।

द्वितीय विश्व-युद्ध से बहुत समय पूर्व, अव्यवस्थित अल्प-वयस्क प्रौढ़ों के लिए क्लब का कार्य औद्योगिक क्षेत्रों में आरम्भ किया गया था। परन्तु विशेषतः युद्ध के पश्चात् अनेक व्यक्ति, संस्थाएँ तथा अधिकारी इस वर्ग के लिए एक उत्तरदायित्व का अनुभव करने लगे, और जिसे अब हम क्लब कार्य कहते हैं, उसका विकास विभिन्न व्यक्तियों तथा ऐच्छिक संस्थाओं की सहायता द्वारा हुआ। उपर्युक्त कथन से जैसा स्पष्ट है कि क्लब का उद्देश्य विशाल नगरों में अव्यवस्थित ऐसे नवयुवक हैं, जो अपने अनिवार्य-शिक्षण के पश्चात् बिना किसी व्यावसायिक अथवा औद्योगिक प्रशिक्षण के रोज़गार में लग जाते हैं। उनकी और समाज की कठिनाइयाँ तब प्रकट होती हैं जब कुछ वर्षों पश्चात् उन्हें एक सामान्य परिवार के पालन योग्य उचित नौकरी प्राप्त नहीं होती।

क्लब के तीन कार्य हैं—(क) अवकाश के लिए उपयुक्त कार्य, (ख) व्यक्तिगत सम्बन्ध स्थापित करने और पूर्ण जीवन के लिए आवश्यक व्यक्तिगत सम्भावनाओं तथा योग्यताओं के विकास हेतु अवसर प्रदान करना और (ग) नव-युवकों को सामाजिक जीवन में क्रियाशील स्थान प्राप्ति में सहायता देना।

जहाँ गृहस्थ तथा विद्यालय असफल रहे वहाँ पर शिक्षा देना क्लब का अतिरिक्त कार्य है। एक ओर तो यह सामान्य युवा कार्य से सम्बन्धित है, दूसरी ओर सामाजिक सामूहिक कार्य के रूप में समाज से, जिसके अन्तर्गत कभी-कभी व्यक्तिगत मामले भी आ जाते हैं। नेता ही वह केन्द्रीय व्यक्ति है, जो नव-युवक को सन्तोषजनक सम्बन्ध स्थापित करने में सहायता देता है। फिर भी ये सम्बन्ध एक समूह के भीतर ही रखने होते हैं और नेता का एक कार्य यह निश्चय करना भी है कि किस अवस्था में वह नवयुवक अपनी रक्षा स्वयं कर सकता है।

क्लब को प्रतिदिन खुलना चाहिए और विविध कार्यकलापों का अवसर प्रदान करना चाहिए, जिससे इच्छानुसार चुनाव किया जा सके। उदहरणार्थ, क्रीड़ा, खेल-कूद, लोक-नृत्य, बालरूम नृत्य, अध्ययन, धातु तथा लकड़ी का कार्य, नाटक, विशेष समूह जैसे शिविर कला (camp crefe) तथा वयस्क युवक व युवतियों के लिए विवाद समूह। हर समय हरेक के लिए उपलब्ध कार्य-कलाप और लघुतर विशेष सामूहिक कार्य-कलाप के सम्मिश्रण को हम पसन्द करते हैं। घर में प्रविष्ट करने पर नवयुवक नाना प्रकार के कार्य-कलापों से भरपूर एक विशाल कक्ष पाता है। जिनमें इसकी इच्छा हो तो भाग ले सकता है अन्यथा वह आए, उन्हें देखे, और कुछ न करे। इस प्रकार किसी कार्य-कलाप में एकदम से भाग लेने के लिए उस पर दबाव नहीं डाला जाता और वह अपने लिए सम्भावनाओं को मापता रहता है। हमारा अनुभव है कि कुछ काल के पश्चात् जब कि वह निष्क्रिय हो केवल दर्शक बना रहता है, वे किसी सामूहिक कार्य-कलाप में भाग लेना आरम्भ करते हैं। शीत काल में अधिकांश कार्य-कलापों का घर में विकास होता है और ग्रीष्म ऋतु में बाहर। एक श्रेष्ठ उपकरणों से सुसज्जित क्कब में एक विशाल कक्ष की आवश्यकता है जहां 'खुलाद्वार' कार्य-कलाप, सभाएँ, छाया-चित्र और सामाजिक उत्सव हो सकें। इसके अतिरिक्त न्यूनतम, कतिपय लघुतर कक्ष व एक कार्यालय अपेक्षित हैं जहाँ नेता को निजी प्रशासनिक कार्यों की व क्लब के नवयुवक व युवतियों से व्यक्तिगत वार्तालाप करने में सुविधा हो। अनेक क्लबों में बैठक भी है और कुछ में भोजनालय भी (कैन्टीन) हैं। एक क्रीड़ा स्थल बहुत अनिवार्य है। ग्रीष्म शिविर तथा सप्ताह अन्त सम्पर्क स्थापित करने के लिए अनेक अवसर प्रदान करते हैं। कुछ क्लबों में रचनात्मक कार्य-कलापों (उदाहरणार्थ, लकड़ी व धातु के कार्यों) को मुख्य स्थान दिया गया है और कुछ में अवकाशकालीन कार्य-कलापों को। क्लब से बाहर पारिवारिक सम्बन्ध (जैसे घरों में पारिवारिक भेंट करने जाना) अन्दर (माताओं के लिए विशेष सामूहिक सभा तथा सामाजिक भेंट जिसमें पारिवारिक सदस्य भाग लेते हैं) के सम्बन्ध महत्त्वशाली होते हैं।

क्लब के नवयुवकों द्वारा प्रदत्त आर्थिक सहायता के सम्बन्ध में मतभेद हैं। कुछ नव-युवकों को आर्थिक सहायता कठिनाई में डाल देती है, यद्यपि उनकी साधारण प्रवृत्ति के कारण यह महत्त्वपूर्ण है कि जब तक किसी वस्तु का धन द्वारा क्रय नहीं किया जाता उसका कोई मूल्य नहीं समझा जाता। अन्य दृष्टिकोण से भी आर्थिक सहायता महत्त्वपूर्ण है क्योंकि स्वाधीनता का आभास होता है। हमारे विचार से साप्ताहिक अथवा मासिक शुल्क रखना अत्युत्तम प्रणाली है और जैसा कि कुछ क्लबों में प्रचलित है प्रत्येक उपस्थिति अथवा प्रत्येक क्रियाशीलता के लिए शुल्क न लिया जाय। समस्त क्लबों में महत्त्वपूर्ण बात यह है कि नव-

युवक व युवतियों को उनके यथार्थ स्वरूप में ही स्वीकार कर लेना चाहिए। सच्चा नेता जानता है कि वास्तव में पारस्परिक अधीनता में ही लड़कों से सम्बन्ध स्थापित करना सम्भव होगा। और यदि नेता के कृपालु अथवा करुणामय भाव से युवक का कोई लाभ न होगा तो नेता का कर्त्तव्य तो सहकार का है; उसे नवयुवकों की रुचियों और हितों को खोजना चाहिए तथा कार्यक्रम निश्चित करने में उन्हें भी भाग लेने के लिए प्रेरित करना चाहिए।

अनुभव से ज्ञात होता है कि क्लब के कार्य में प्रत्येक १५ युवक व युवतियों के वृन्द के लिए व्यक्तिगत सम्पर्क स्थापना हेतु एक नेता की आवश्यकता है। नेतां के सम्बन्ध में कुछ अभ्युक्तियाँ उपयोगी सिद्ध होगी। समस्त क्लब गृहों में एक वैतनिक नेता तथा एक वैतनिक सहायक नेता होता है; फिर ऐच्छिक नेता होते हैं, विशेष कार्य-कलापों के लिए प्रावैधिक नेता होता है, जिन्हें प्रति घण्टे की दर से शुल्क दिया जाता है। वैतनिक नेताओं को विशेषज्ञ होना आवश्यक है, क्लब गृह के कार्य में और सामान्यतः सामाजिक कार्य में प्रशिक्षित होना चाहिए। उनका निजी जीवन-दर्शन होना चाहिए। उनका कार्य कठिन है। नवयुवक-वृन्द के साथ वर्णित कार्य में नेता के समग्र व्यक्तित्व की आवश्यकता है। एक सामान्य पारिवारिक जीवन उनके लिए सम्भव नहीं है क्योंकि उसका कार्य दोपहर के पश्चात् (तैयारी, प्रशासन, परिवारों, विद्यालयों, उद्योगों तथा अधिकारियों से सम्पर्क) और तन्ध्या में होता है (सामूहिक कार्य-कलाप)। इसके उपरान्त इस कार्य को अभी सामाजिक मान्यता प्राप्त नहीं हो सकी। और उसके गुणों तथा उपयोगिताओं का मूल्यांकन नहीं किया जाता। किसी विद्यालय में सामाजिक कार्य का प्रशिक्षण और साथ में क्लब गृह कार्य में कुछ विशेषज्ञता होने से या वर्ष की अवस्था में अन्य प्रकार के सामाजिक कार्य में अन्य प्रकार के सामाजिक कार्य में परिणत करने की सम्भावना रहती है। वैतनिक नेताओं के लिए प्रतिवर्ष विशेष प्रत्यास्मरण पाठयक्रम की व्यवस्था की जाती है वहाँ विशेषज्ञ, क्रियात्मक समस्याओं पर विवाद कर सकते हैं तथा अतिरिक्त सैद्धान्तिक प्रशिक्षण प्राप्त कर सकते हैं। ऐच्छिक नेताओं पर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है, वैतनिक नेता के कार्य का एक अंश सब नेताओं में सामूहिक भावना का निर्माण करना भी है। क्लब गृह-कार्य का निरीक्षण आरम्भ भी हो चुका है परन्तु अभी तक कोई प्रशिक्षित निरीक्षक नहीं है।

नीदरलैण्ड में समस्त क्लब-गृहों को ऐच्छिक संस्थाएँ चलाती हैं, उनमें के अधिकांश अव्यवस्थित नवयुवक कार्यकर्ताओं के लिए क्लब-गृहों के राष्ट्रीय परिषद के सदस्य हैं। राष्ट्रीय परिषद से सम्बन्धित समस्त संस्थाओं को सरकार से सहायता प्राप्त होती है। अधिकांश नगरपालिकाएँ भी सहायता देती हैं। शेष आमदनी निजी सहायता द्वारा होती है, अधिकतर महान् उद्योगों द्वारा उपहार के रूप में। क्लब-गृह की कार्यकारिणी समिति का

कर्तव्य कार्य के उपयुक्त परिस्थितियाँ निर्माण करना है (अर्थ प्रतिनिधित्व), शैक्षिक कार्य का उत्तरदायित्व वैतनिक नेता पर निर्भर होता है।

१९४५ के पश्चात् शीघ्र ही क्लब गृह के विस्तार की समस्या पर वैज्ञानिक पद्धति का उपयोग अधिक किया गया और आदर्शवाद का कम। अभ्यास से 'कैसे' और 'क्यों?' के प्रश्न सामने आए और विज्ञान की सहायता की आवश्यकता स्पष्ट होने लगी। सरकार ने अनेक शैक्षिक संस्थाओं तथा सामाजिक विज्ञान की संस्थाओं से इस समस्या के विषय में अध्ययन करने के लिए कहा। क्लब गृह कार्य अधिकतर १२ से १७ वर्ष की आयु के बच्चों के लिएहोते हैं। अब प्रश्न उठता है कि इससे अधिक आयु के व्यक्तियों के लिए क्या किया जा सकता है। क्लब गृह के अत्यधिक कठिन कार्य का मूल्य भी घट जाता है यदि हम उनके लड़कों व लड़कियों के लिए विशेष प्रकार की प्रौढ़ शिक्षा की खोज नहीं करते। कुछ दीर्घ स्थापित गृहों में इस प्रकार की कुछ प्रणालियों का विकास हुआ है, परन्तु इस प्रकार लघु समूहों तक ही पहुँच हो पाई है। पुराने क्लब गृह के कुछ लड़कों ने लोक उच्च-विद्यालय के कार्य-कलापों में भी भाग लिया है। कुछ स्थानों में तो उन्होंने स्वयं ही विवाद-समूह को निर्माण कर लिया। क्लब गृह के किसी विवाहित सदस्य का घर ही सभास्थल बना लिया। अब तक के परिणामों को संख्या में व्यक्त करना सम्भव नहीं परन्तु जिन्हें क्लब-गृह के कार्य का दीर्घ अनुभव है उन्हें पक्का भरोसा है कि उन्नति हो गई है। क्लब गृह के कार्य की एक महानतम देन यह है कि इसने यह सिद्ध कर दिया कि अव्यवस्थित अल्प-वयस्क कार्यकर्ताओं में क्या-क्या रचनात्मक सम्भावनाएँ हैं। हम प्रायः अपने ही आदर्शों से सिद्धान्त आरम्भ करते हैं। यह निश्चित है कि उक्त अल्प-वयस्क प्रौढ़ किसी आदर्श का पालन करते हैं परन्तु उनके आदर्श हमारे आदर्शों से भिन्न होते हैं। और यह स्मरण रखना हमारे हित में ही होगा कि वर्तमान सामाजिक आदर्श सामयिक होते हैं।

यह प्रश्न पूछा जा सकता है कि प्रौढ़-शिक्षा जो कि क्लब गृह में आरम्भ कर देनी चाहिए, उसकी क्लब का एक अंग बन कर अधिक अच्छी व्यवस्था होगी कि नहीं। हमारे विचार से तो एक प्रौढ़-शिक्षण नेता में आवश्यक गुण अल्प-वयस्क व्यक्तियों के नेता के गुणों से भिन्न होते हैं। इसमें क्लब गृह का यह कार्य हो सकता है कि वह वर्तमान प्रौढ़-शिक्षण के सम्बन्ध में जहाँ तक सम्भव हो सके समाचार दें और उनकी तैयारी करें। इसका हमें भी पूर्ण विश्वास है कि क्लब गृह का कार्य तो केवल सामाजिक तथा सांस्कृतिक शिक्षण की एक प्रणाली है, कि अपनी विकास सीमा पर यह अभी तक नहीं पहुँचा, कि अन्य प्रयोग करने पड़ेंगे, उदाहरणार्थ अल्पवयस्क स्वच्छन्द वृन्द के साथ जैसे गली के झुण्ड। नीदरलैंड में इस समय क्लब-गृह के कार्य की सर्वाधिक जटिल समस्याएँ हैं, पद्धति नेतृत्व का प्रशिक्षण

अर्थव्यवस्था और तदनन्तर प्रौढ़-शिक्षा। समस्याओं का हल करने में और अनुभव के आधार पर प्रौढ़-शिक्षण क्षेत्र में अध्ययन तथा अभ्यास में सहायक होने के लिए अन्तर्राष्ट्रीय सम्पर्क होना अपेक्षित है क्योंकि अन्य देशों में भी क्लब-गृह के कार्य के समान क्रियाशीलता का विकास हो रहा है।

फ़ोय डे कल्चर में नागरिकता (अज्ञात)

फोय डे कल्चर क्या है ?

फ़ोय डे कल्चर में व्यक्तिगत धारणाओं का आदर होता है। इसका राजनैतिक दलों व धार्मिक सम्प्रदायों से कोई सम्बन्ध नहीं। जो इसका प्रयोग करते हैं वे व्यक्ति-विशेष की भाँति करते हैं। वे फ़ोय डे से बाहर जिस किसी आन्दोलन, परिषद्, दल अथवा समूह से सम्बन्धित रहते हैं, फ़ोय डे के अन्दर उनके विषय में कोई प्रचार नहीं करते। यह जन-समूह के लिए विशेषतः अल्पवयस्क व्यक्तियों के लिए ऐसा स्थान अर्पित करता है जहाँ वे सम्मिलित हो सकें, जैसे सभा कक्ष, रेस्तोराँ, मदिरालय तथा गृह। (यह मनोरंजन तथा आदेश भी प्रदान करता है। क्रीड़ा, खेल, घर से बाहर का जीवन व आमोद-प्रमोद द्वारा शारीरिक प्रशिक्षण, पारिवारिक मामलों पर परामर्श, उदाहरणार्थ घरेलू प्रबन्ध तथा शिशु का पालन-पोषण, कायिक कार्य, ड्राइंग, टाइप राइटिंग, आधुनिक भाषाओं तथा बागवानी जैसी कलाओं में प्रशिक्षण, चल-चित्र, नाटक, संगीत तथा गान, पुस्तकालय, व्याख्यान, विवाद-समूह, अध्ययन समूहों, बौद्धिक तथा कलात्मक विकास; निरीक्षण, अध्ययन योजनाओं, वाद-विवादों तथा यात्राओं द्वारा नागरिकता, आर्थिक व सामाजिक विषयों पर शिक्षा देना) कानून में, फ़ोय डे कल्चर स्वायत्त है यद्यपि इसे पर्याप्त धन अनुदान करने वाला राज्य इसके ऊपर निरीक्षण करता है। सदस्यों में से २० प्रतिशत युवक आन्दोलनों से आते हैं और शेष वे हैं जिनके ऐसे कोई सम्बन्ध नहीं हैं। बहुसंख्यक श्रमिक गण १५ से २५ वर्ष की आयु के हैं। वे अवकाश के समय फ़ोय डे आते हैं, उनका प्रथम उद्देश्य विश्राम तथा मनोरंजन है। स्वस्थ वातावरण में ऐसा मनोरंजन प्रदान करना फ़ोय डे के शैक्षिक उद्देश्यों में से एक है। यहीं उसके उद्देश्य समाप्त नहीं हो जाते। युवक व वृद्ध सभी की आशा रहती है कि यह उनकी शिक्षित, समाचार प्राप्त, विवेकशील व सुसंस्कृत बनने की वैध कामना-पूर्ति में सहायक होगा। इस सम्बन्ध में, आर्थिक, सामाजिक व राजनैतिक समस्याओं पर विशेष महत्व दिया जाना चाहिए। हम मौलिक परिवर्तन के रूप में रह रहे हैं, युग जिसमें नवीन समाज अपनी खोज में संलग्न है। यह आवश्यक है कि हममें से हरेक को समय और स्थानानुसार अपनी स्थिति का ज्ञान होना चाहिए और उसे समस्या के उलझे हुए तत्वों के व्यावहारिक

ज्ञान व उसके हल के विभिन्न प्रस्तावों से परिचित रहना चाहिए, ताकि वह अपने जीवन में पथ-निर्देशक सिद्धान्तों का स्वतन्त्रता से चुनाव कर सके।

फ्रांस के एक अत्यधिक महत्वपूर्ण फ़ोय डे कल्चर द्वारा प्रेषित एक अधिकृत पत्र उक्त उद्देश्यों की इस सूची से ज्ञात होता है कि वस्तुतः योजना में फ़ोय डे कल्चर शिक्षा और नागरिक चेतना के महत्वशील केन्द्र हैं।

फ़ोय डे कल्चर में नागरिकता की शिक्षा

फ़ोय डे कल्चर राजतन्त्रीय संस्था है। ऐसा मानने के दो कारण हैं। प्रथम दो दैनिक सामाजिक जीवन से ही इसकी उत्पत्ति हुई है। द्वितीय, फ़ोय के संचालन और क्रियाशीलता के लिए यह अपने सदस्यों से दायित्व की आशा करता है। इन दो पहलुओं पर हम और अधिक सूक्ष्मता से देखें।

फ़ोय डे कल्चर का भवन आवासिक क्षेत्र में स्थित होता है। नगर के जीवन में इसका स्थान है। यह अधिकारियों की देख-रेख में चलाए जाने वाला सार्वजनिक भवन नहीं है, अपितु इसके सार्वजनिक होने का अर्थ है कि यह सार्वलौकिक (प्रत्येक व्यक्ति के लिए खुला है) है और आवासिक जनता की भाँति कोई शैक्षिक अथवा व्यावसायिक संस्था नहीं है जहाँ विशेष परिस्थितियों में विद्यार्थियों को प्रशिक्षण प्राप्त होता है। फ़ोय डे कल्चर के रहन-सहन की परिस्थितियाँ, सामान्य सामाजिक जी परिस्थितियाँ हैं; सदस्य आवागमन के लिए स्वाधीन हैं; वे अपनी जीविका उपार्जन करते हैं और सामान्य पारिवारिक जीवन यापन करते हैं। वे अपने दैनिक समूह से सम्पर्क बनाए रखते हैं यद्यपि फ़ोय डे द्वारा उनके इस समूह की वृद्धि हो जाती है। नागरिकता की शिक्षा किसी नियम के अनुसार नहीं चलती।

नागरिक जीवन का यह संस्थात्मक चरित्र ही फ़ोय डे कल्चर की नागरिक शिक्षा का प्रथम अंक है।

इस संस्था से हमारा यह अर्थ नहीं है कि फ़ोय डे कल्चर का जीवन प्रशासनिक ढाँचे में ढल जाय। केवल यह विचारना आवश्यक है कि किस-किस सदस्य को अनुस्मरण कराना आवश्यक है कि फ़ोय को अपनी पद्धति के बँध जाने का खतरा नहीं है। नियमों का सामान्यतः यथेष्ट ध्यान रखा जाता है। सदस्यों में पर्याप्त अनुशासन है जो फ़ोय और उसके उपकरणों को अपनी सबकी सम्पत्ति समझते हैं और उसको ठीक से चालू रखने में अपने-आपको उत्तरदायी समझते हैं। क्योंकि फ़ोय के अनुशासन तथा विविध कार्यकलापों के लिए प्रेरणा सामान्य सदस्यों से आती है। फ़ोय के आन्तरिक व्यवस्था का लोकतन्त्रीय

रूप वहाँ की परिस्थिति के तथ्यों पर प्रकाश डालता है। समिति तथा कार्यकारिणी समितियों का चुनाव औपचारिक कार्य नहीं रह जाता। अधिक आयु प्राप्त सदस्य वास्तविक प्रौढ़ समझे जाते हैं। फ़ोय डे कल्चर की अन्य विशेषता, जिससे उसका लोकतन्त्रीय होना सिद्ध होता है, उसकी शैक्षिक पद्धति पारस्परिक सम्बन्ध सूचक है नागरिकता की शिक्षा एक सम्पूर्ण शृंखलाबद्ध क्रियाशीलता है, यद्यपि किसी भी समय ऐसा प्रतीत नहीं होता।

फ़ोय डे कल्चर का प्राथमिक उद्देश्य प्रौढ़-शिक्षा नहीं है। यदि इसके कार्यों से ऐसा प्रकट हुआ तो इसके समर्थकों का अभाव हो जायगा। अपितु अपने ढाँचे और कार्य-प्रणाली में यह नागरिक भावना से संचालित होता है। हमने यह स्पष्ट कर दिया है कि नागरिकता प्रशिक्षण के उद्देश्य हेतु इसकी उपयोगिता के दो कारण हैं। एक लोकतन्त्रीय कार्य-प्रणाली जिसके द्वारा यह समुदाय से सम्बन्धित है दूसरा आन्तरिक व्यवस्था। इन्हीं कारणों से इसका अन्य प्रौढ़ संस्थाओं से उल्लेखनीय अन्तर है। नागरिकता प्रशिक्षण की देख-भाल फ़ोय डे कल्चर के आदर्श का एक अंश है। दो अन्य प्रकार से फ़ोय डे कल्चर में नागरिकता की भावना परोक्ष रूप से दृढ़ की जाती है। हम उस ओर आपका ध्यान दिलाना चाहते हैं।

नागरिकता की शिक्षा में आवासिक पाठ्यक्रम द्वारा छात्रों की परस्पर भेंट होती है। यद्यपि वे एक-दूसरे से परिचित नहीं होते, तथापि उनमें सामाजिक भावना की वृद्धि होती है, पारस्परिक अधीनता व एक ही उद्देश्य की भावना का संवर्द्धन होता है। फ़ोय डे कल्चर ऐसे व्यक्तियों की परस्पर भेंट कराता है जो एक-दूसरे की भावनाओं से परिचित होने व समझने का दम भरते हैं, परन्तु उनके उद्देश्य विरोधात्मक तथा विभिन्न दिशाओं में होते हैं।

फ़ोय डे कल्चर का उपयोग, जिसका उद्देश्य प्रायः भौतिक लाभ होता है, के अतिरिक्त सदस्यों में सामान्य तथ्य यही है कि वे सब एक ही विशेष क्षेत्र में निवास करते हैं। तब व्यक्तिगत रुचि अथवा सामूहिक भावना के अनुसार फ़ोय एक सभास्थल बन जाता है। फ़ोय डे में आने वाले विभिन्न प्रकृति के व्यक्ति घर को चालू करने में, कुछ निष्पक्ष कार्य-कलापों जैसे फोटोग्राफी, मोडल, प्रदर्शियों की व्यवस्था करने में, बरांडे में, क्रीड़ाकक्ष में अथवा मदिरालय में परस्पर भेंट करने को बाधित होते हैं। पारस्परिक सहायता व आदर एक साथ रहने के लिए आवश्यक हैं, अतएव यह स्पष्ट है कि सामाजिक व राजनैतिक मतभेद होते हुए भी उनकी अनिवार्य भेंट नागरिकता प्रशिक्षण में एक शक्तिशाली साधन है। एक साथ रहने से व्यक्तियों को सभा का प्रबन्ध और उसमें सम्मिलित होना ही पड़ता है। ऐसे विचार-विनिमय, जो सामान्य सामाजिक जीवन में सम्भव नहीं हैं, में प्रविष्ट होना ही पड़ता है। फ़ोय डे कल्चर ऐसी सभाओं को प्रोत्साहित करता है जिनसे दृष्टिकोण का सामान्य विकास होता है।

यदि नामानुसार फ़ोय का प्राथमिक उद्देश्य सांस्कृतिक न होता तो इस प्रकार के विचार विनिमय को समझना कठिन हो जाता। इन संस्थाओं में, संस्कृति, समस्त सामाजिक तथा राजनैतिक क्षेत्रों में विस्तृत है। परन्तु यह सोचना एक भूल होगी कि संस्थाएँ एक नवीन संस्कृति की नींव डाल रहे हैं। साहित्यिक, वैज्ञानिक व कलात्मक संस्कृति का आधार ही है। यही वह संस्कृति है जो मानवीय व्यक्तित्व का विकास करके, उत्तरदायित्व की भावना का संवर्द्धन करती है। संस्कृति के बहु-पक्षों के निरीक्षण से समस्त दल अपने से विभिन्न दलों में केवल अन्तर देखने की अपेक्षा समृद्धि देखने को प्रोत्साहित होते हैं। एक नागरिक जो व्यक्तिगत संस्कृति व सामाजिक सन्तुलन का आदर्श पालन करता है, इस खतरे से दूर रहता है कि सामान्य कारण खोजने के लिए कहीं विश्वासों और मतों के हीन स्तर पर समझौता न करना पड़े। सामान्यता इस समझौते को संस्कृति प्राप्ति की सार्वलौकिक इच्छा ने प्रदान किया। यह प्रयास फ़ोय डे कल्चर के जीवन को प्रेरित तथा उसके कार्य को निश्चित करता है। इससे, शैक्षिक पद्धति की अपेक्षा उसके परिणामों में अधिक रुचि लेने वाले शिक्षा शास्त्री गण इसकी योग्यता और मूल्य के प्रश्न का निर्णय करते हैं।

विशेष उदाहरण पर कुछ चर्चा

यह फ़ोय डे कल्चर एक विशाल नगर की निकटवर्ती बस्ती में स्थित है। आवास का अभाव होने के उपरान्त भी, कुछ परिवर्तन के पश्चात् एक विशाल भवन सम्प्रदाय के नवयुवकों के लिए दे दिया गया है। अब १० वर्ष पश्चात्, इस भवन में एक छोटा सा नाटक-गृह है, एक क्रीड़ाकक्ष है जहाँ व्यक्ति अपना मनोरंजन कर सकते हैं, अनेक सभाकक्ष, एक व्याख्यानकक्ष, एक चित्र खींचने का कक्ष एक सहायक अन्धकारमय कक्ष, एक कार्यालय तथा एक बैठक है। उस भवन को लगभग प्रतिवर्ष रोगन कराया जाता है। देखने में साफ-सुथरा व स्वागत के लिए तत्पर प्रतीत होता है, सदस्यगण भी अपने व्यवहार में भवन के स्तर के अनुसार ही रहने की आवश्यकता समझते हैं। सुघड़ता और विनम्रता सम्मान के चिन्ह हैं जो यदा-कदा कृत्रिम भी हो जाते हैं।

फ़ोय एक संचालक के अधीन है और फैक्टरी बन्द होने के समय अपने द्वार खोलता है, प्रथम आगन्तुक अपने काम-काज से सीधे आते हैं और नियमों का उल्लंघन होते हुए भी अन्तिम आगन्तुक अर्ध-रात्रि के पश्चात् जाते हैं। एक सप्ताह की अवधि में ८०० व्यक्ति आते हैं। कतिपय निजी मनोरंजनार्थ आते हैं, कुछ अपने धार्मिक अथवा राजनैतिक संस्थाओं की सभाओं में सम्मिलित होने आते हैं। व्यक्ति विशेष को प्राथमिकता दी जाती है। आन्दोलन दल व परिषद् फ़ोय के सदस्य नहीं बन सकते, केवल व्यक्ति विशेष के ही उस

सदन में अधिकार है। वे थोड़ा सा वार्षिक चन्दा देते हैं, उन्हें मतदान का अधिकार होता है और प्रशासनिक समिति के एक तिहाई सदस्य इन्हीं में से चुने जाते हैं। कार्य-कारिणी के लगभग समस्त सदस्य इन्हीं में से छाँटे जाते हैं। इसके अतिरिक्त प्रशासनिक समिति में नगरपालिका, सार्वजनिक सेवा, कार्मिक संघ, शैक्षिक संस्था युवा आन्दोलन तथा सांस्कृतिक समितियों के प्रतिनिधि होते हैं जो फ़ोय डे कल्चर के कार्य की सहायता करते हैं।

मेयर प्रशासनिक समिति का अध्यक्ष होता है, जो राष्ट्रीय संविधान का सदस्य भी होता है। स्वाभाविक है कि अल्पायु सदस्यों के लिए प्रशासनिक सभा के अधिवेशन का शैक्षिक मूल्य होता है। यह सम्भवतः उतना स्पष्ट नहीं है कि साथ-साथ उन्हें राजनैतिक विरोधों का और अपने से बड़े जनों में व्याप्त दुर्भावों का अपरोक्ष अनुभव होता है। फोय के चलाने में अल्पायु सदस्यों के भाग लेने से एक जटिल शैक्षिक समस्या उठती है, क्योंकि किसी भी प्रकार से नाम मात्र को भी उनका सहभाग नहीं होता। दलों का विरोध चिर-स्थायी होता है और देश व सम्प्रदाय के सामान्य सार्वजनिक जीवन के मूल झगड़ों से तुलनीय है।

सदस्य कौन हैं ? वे सम्प्रदाय के प्रतिनिधि गण हैं। ४०% कायिक कार्मिक, ४०% मध्यम वर्गीय श्रमजीवी गण, २०% विद्यार्थी, सिपाही, शिल्पी इत्यादि। कुल संख्या का १०% बालिकाएँ होती हैं। अन्य फोय में तनिक अन्तर है। इस क्षेत्र में दो फ़ोय स्थापित किये गए थे, एक युवकों के लिए, दूसरा युवतियों के लिए, परन्तु मिश्रित सदस्यता के सिद्धान्त ही प्रचलित हुए। यहाँ १५ से ऊपर की आयु के नवयुवक व युवतियाँ एकत्रित होती हैं। ४० वर्षीय प्रौढों का अब अभाव नहीं है, परन्तु बहुसंख्या २० वर्ष को अवस्था वालों की है। सह अस्तित्व की समस्या की कल्पना की जा सकती है जब उस लघु-कक्ष में विशाल जन-समूह एकत्रित होता है। व्यक्तियों का आवागमन निरन्तर चलता रहता है। फ़ोय के शान्तिमय संचालन को बिगाड़ने के लिए संदिग्ध चरित्र तथा परिवर्तनशील ग्राहक ऐसी स्थिति में अपना कर्तव्य दिखाने का उत्कृष्ट अवसर पाते हैं। परन्तु उन्हें बहि-ष्कृत करना सिद्धान्त के विरुद्ध है। तर्क अथवा अफवाह के भय से द्वार बन्द नहीं किये जाते हैं। स्थिति को वश में लाने में किंवा अनुशासन स्थापित करने में उत्तरदायी व्यक्तियों के शैक्षिक प्रयास असफल रह जाते हैं। तब यदा-कदा उन पर बल प्रयोग किया जाता है अन्यथा शान्ति स्थापना का और कोई मार्ग नहीं है।

निःसन्देह कुछ व्यक्ति वहाँ केवल अशान्ति मचाने आते हैं। परन्तु बहुसंख्यक वहाँ साधारणतः मानसिक विश्राम व आत्म-सुधार के लिए आते हैं। उन सबकी कोई-न-कोई मुख्य रुचि होती है, चाहे वह क्रीड़ा हो अथवा चौपड़ या ब्रिज, चित्रकारी अथवा फोटो-

ग्राफी, नाटक अथवा चलचित्र या संगीत। कतिपय आशुलिपि का पाठ्य-क्रम लेते हैं। अन्य (spelelogical expeditions) की योजना बनाते हैं। कुछ कार्मिक संघ के इतिहास का अध्ययन करते हैं तो अन्य रूसी भाषा व सभ्यता सीखते हैं। लेखक गण निजी पुस्तकों के सम्बन्ध में बताने अथवा निजी नाटक पढ़ने आते हैं। कुछ आधुनिक नाटक सर्वप्रथम उस फ़ोय डे कल्चर में ही खेले गए थे जिनकी स्थापना मार्क सैन्गियर ने पेरिस में ३० वर्ष पहले की थी। फ़ोय डे कल्चर के सांस्कृतिक जीवन के अभाव में तो वह श्रांत तथा श्रांत करने वाले व्यक्तियों का ही सभास्थल होता।

फोय में कुछ व्यक्तियों का उत्तरदायित्व है। कुछ व्यक्ति विशेष समूहों के विशेष क्रिया-कलापों का निर्देशन करते हैं। अन्य व्यक्ति सदस्यों के चुनाव सम्बन्धी सभा का प्रतिनिधित्व करते हुए, संस्था का संचालन करते हैं। अन्तिम विश्लेषण में, ऐसी संस्था का उत्तरदायित्व जो सर्कस तथा स्कूल दोनों से ही मिलती-जुलती हो, ऐसे संचालक के कन्धे पर पड़ता है जिसे नियमित शिक्षा-प्रद स्कूल के अध्यक्ष के समान वेतन प्राप्त होता है। यह सैद्धान्तिक व व्यावहारिक दोनों ही प्रकार से अत्यन्त महत्त्वपूर्ण प्रश्न है कि संस्था संचालक के अधीन हो। आर्थिक, प्रशासनिक तथा शैक्षिक, ये समस्त उत्तरदायित्व एक ही व्यक्ति पर निर्भर हैं। हम राजनैतिक उत्तरदायित्व जोड़ सकते हैं, कारण कि फोय का चुनावों से घनिष्ट सम्बन्ध है तथा राजनैतिक दलों की इसमें अत्यन्त रुचि है। संचालक को सब प्रकार की गाथाओं तथा विरोधात्मक कथाओं द्वारा सताया जाता है। उसके लिए इन सबके ऊपर उठ जाना अपेक्षित है। कठिन परिस्थितियों में उसका व्यक्तित्व ही उसका मुख्य शैक्षिक अस्त्र है। उसका जीवन दुर्गम है, यदि उसे अपने स्वास्थ्य का भरोसा है तो समय उसका साथ देगा। समय अधिकांश समस्याओं को हल कर देता है, कुछ का स्पष्टीकरण हो जाता है और कुछ को स्खलित कर दिया जाता है। एक अव्यवस्थित भवन में यह अनिवार्य है कि संचालक पूर्णतः आत्म-संयमी हो। उसे वातावरण में इतनी सरलता उत्पन्न कर देनी चाहिए कि उन्हें समय का ध्यान रहे; क्योंकि जीवन और समय ही नवयुवकों को नागरिक उत्तरदायित्वों के लिए तैयार करते हैं। यह महत्वपूर्ण है कि समस्त अनुभव द्वारा ही पारस्परिक घनिष्ठ परिचय तथा सामाजिक समानुरूपता की आवश्यकता समझें।

फोय के क्रियाशील सदस्यों की आर्थिक सहायता आय-व्ययक (budget) की पूर्ति के लिए पर्याप्त नहीं होती। इस आय-व्ययक की पूर्ति ९०% नगर-पालिका अनुदान द्वारा होती है। अनेक विविध सांस्कृतिक, सामाजिक व राजनैतिक कारणों से, गत १० वर्षों से इस अनुदान पर अधिक-से-अधिक निर्भर होना सम्भव हुआ है। सार्वजनिक विभाग शैक्षिक वस्तुएँ प्रदान कर संस्था का आर्थिक व्यवस्था में सहायता करती हैं।

यदि संचालक अनुचित कार्यों का दमन किंवा सुधार ही अपना कर्तव्य समझे, तो शीघ्र ही भवन में उसकी महत्ता का ह्रास हो जायगा। संचालक ही फोय की सांस्कृतिक तथा सामाजिक गतिविधियों का उत्तरदायी हैं। उदाहरण स्वरूप जब हॉलैण्ड बाढ़ पीड़ित था तब फोय ने सहायता-कार्य की व्यवस्था की थी। सदस्यों ने सम्प्रदाय में वस्त्रों का व खाद्य पदार्थों का संग्रह किया। कुछ सहायतार्थ बाढ़-ग्रस्त क्षेत्र में भी गए। एक अन्य उदाहरण में, जब नगर-नियोजक नगर में निवास स्थान की खोज बीन कर रहे थे तो इसका अनुसन्धान भवन के सदस्यों ने ही किया था। साम्प्रदायिक क्रीड़ाओं द्वारा परिवर्धित सामान्य क्रियाएँ तथा सामान्य रुचि, संगीत, फोटोग्राफी जैसी सामान्य क्रियाशीलता के परिणामस्वरूप जो सभाएँ लगती हैं वे दोनों ही नागरिक शिक्षा-प्रणाली व उसका परिणाम हैं। यदि सामान्य सामाजिक जीवन से अधिक उच्च नागरिक भावना की आशा न भी की जाय, तो भी दैनिक व आवर्ती कठिनाइयों के उपरान्त भी फोय डे कल्चर ऐसी संस्था है जिससे बहुत कुछ आशा की जा सकती है। हमने संस्था कहकर इसका उल्लेख किया है, परन्तु यह एक जीवित संस्था है। फ्रैन्च नगर आयोजकों ने इसे अनुभव किया है कारण कि इस क्षेत्र के पुनर्संगठन की आयोजना में उन्होंने फोय डे कल्चर के भवन के लिए स्थान रखे हैं। क्या शिक्षा-वेत्ता नगर आयोजकों के पीछे रह जायेंगे ?

(फ्रेन्च से अनुवादित)

तेरहवाँ अध्याय

बैलजियम में सरकारी सहायता राजनैतिक दल व प्रौढ़-शिक्षा

डॉ० पौल रोक
शिक्षा मन्त्रालय ब्रूसल्स

लोकतन्त्र के अन्तर्गत जनता को राज्य-कार्य में क्रियात्मक भाग लेना चाहिए। परन्तु हमारे समाज के औपचारिक लोकतन्त्रीयकरण ने इतनी तीव्रता से प्रगति की है कि लोकतन्त्रीय कर्तव्यों की शिक्षा समान उन्नति करने में असमर्थ रही, अर्थात् लोकतन्त्रीय कार्य-प्रणाली तथा इस कार्य-प्रणाली को चलाने में सार्वजनिक क्षमता व अधिकृत स्थान पर कार्य करने की सामर्थ्य के मध्य अन्तर रह गया।

लोकतन्त्रीय राज्य चलाने के योग्य व्यक्तियों को इच्छानुसार चुनने का अधिकार प्राप्त है, परन्तु अधिकांश मामलों में, चुनावकर्ताओं तथा निर्वाचितों में से कोई भी पर्याप्त शिक्षित नहीं होता। एक ओर तो चुनावकर्ता न्यायपूर्ण चुनाव करने के लिए यथेष्ट प्रशिक्षित नहीं होते, दूसरी ओर जो चुने जाते हैं वे प्रत्याशित राजनैतिक तथा सामाजिक उत्तरदायित्व निर्वहन करने में प्रायः असमर्थ रहते हैं।

कुछ वर्षों से मजदूर आन्दोलन एक तो देश की आर्थिक व्यवस्था में सुधार करने की ओर, दूसरे शीघ्रातिशीघ्र उद्योग-व्यवस्था में मजदूरों को भाग लेने के अवसर दिए जाने के लिए कार्य समिति निर्माण करने की माँग कर रहा है। अतएव ऐसी समितियाँ निर्मित कर दी गई हैं। सैद्धान्तिक रूप से तो उनकी व्यवस्था पूर्ण है परन्तु यथार्थता में बहिरंग भ्रमात्मक है। क्यों ? कारण केवल यही है कि मजदूर आन्दोलन द्वारा प्रेषित सदस्य कार्य के लिए यथेष्ट शिक्षित तथा प्रशिक्षित नहीं हैं।

लोकतन्त्र का होना या न होना इस पर निर्भर है कि राजनैतिक आन्दोलनों व कर्मी संघ के नेतागण अपने कार्य व कर्तव्य के लिए प्रशिक्षित हैं अथवा नहीं और साथ ही इस बात पर भी कि सामाजिक व राजनैतिक उत्तरदायित्वों के लिए जनता स्वयं शिक्षित है या नहीं।

हमारा आदर्श, व्यक्ति का नैतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक व धार्मिक निर्बाधित विकास, केवल लोकतन्त्रीय राज्य में सम्भव हो सकता है। यह स्पष्ट है कि प्रौढ़-शिक्षा का

सम्बन्ध एक तो मनुष्यों को देश के राजनैतिक जीवन में सामान्य सहभागी के रूप में दी जाने वाली शिक्षा से होना चाहिए, और दूसरे इसके संचालकों की शिक्षा से। अतएव प्रौढ़-शिक्षा के प्रति उत्तरदायी व्यक्ति राजनैतिक मामलों में रुचि न लेने के लिए क्षम्य नहीं हैं।

यही वे मूलभूत कारण हैं जिनके आधार पर बैलजियम सरकार निजी प्रौढ़-शिक्षा नीति निर्णीत करती है। सार्वजनिक, नैतिक, सामाजिक, राजनैतिक, सांस्कृतिक तथा धार्मिक शिक्षा के लिए उपयुक्त वातावरण निर्माण करना सरकार की नीति है। इस क्षेत्र में योजनाओं एवं कार्यों को सरकार की ओर से पर्याप्त नैतिक व भौतिक सहायता प्राप्त होती है।

निःसन्देह, प्रचार तथा राजनैतिक वादानुवाद का संकुचित अर्थों में बहिष्कार कर देना चाहिए (यहीं संकुचित तथा एकपक्षीय दलीय भावना व्यापक रहती है), फिर भी यद्यपि यह मानना पड़ेगा कि समस्त प्रौढ़-शिक्षा कार्य वास्तविक जीवन के राजनैतिक अथवा दार्शनिक पक्ष की प्रतिछाया है, हमारा कार्य तो मनुष्यों को स्वयं विचारने योग्य शिक्षित कर देना है। स्वतन्त्र विचारों का अभाव ही लोकतन्त्रीय प्रणाली के असन्तोषजनक कार्य का कारण है।

बैलजियम में, प्रौढ़-शिक्षा संगठनकर्ता राजनैतिक दलों से सीधे सम्बन्धित हैं। समाज वादी दल ही Centrale d' Education Ouvriere तथा अन्य अनेक संस्थाओं जैसे Tourisme Populaire, the Fedaration Socialistes des Societies de Musique Populaire, तथा Federation Socialiste du Theatre d amateures का नियन्त्रण करना है। इन संस्थाओं के नेतागण दल के सक्रिय सदस्य होते हैं, और मुख्यतः स्थानीय तथा क्षेत्रीय नेता राजनैतिक प्रतिनिधि होते हैं, यहाँ तक कि कुछ संस्थाएँ तो ऐसी हैं कि जिनके सदस्य होने के लिए समाजवादी दल से सम्बन्धित होना अनिवार्य है। प्रायः उनके कार्यक्रमों की दल के तत्वावधान में होने की घोषणा की जाती है। the Cantraled' Education ouvriete स्वयं मुख्यतः राजनैतिक तथा कर्मी संघ के कार्यकलापों हेतु पाठ्यक्रम, सम्मेलन, अध्ययन समूह व सार्वजनिक पुस्तकालय इत्यादि के शिक्षण में रुचि रखता है।

कैथोलिक पक्ष की स्थिति भी प्रायः समान ही है the mouvement Ourier chretion तथा mouvement des Paysans प्रत्येक के शिक्षा के लिए श्रमजीवियों तथा कृषकों के पृथक् विभाग हैं। इन आन्दोलनों में भी सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक, नागरिक व सांस्कृतिक शिक्षण पर अति परिश्रम व प्रयास किया जा रहा है। यद्यपि क्रिश्चन सामाजिक दल से सम्बन्ध क्षीण हुए प्रतीत होते हैं तथापि उनमें घनिष्ठ सम्बन्ध हैं। यहाँ भी शिक्षा विभाग के अधिकारी गण प्रायः राजनैतिक प्रतिनिधि हैं (mandataires Politi ques) क्षेत्रीय तथा

स्थानीय वृत्तों में प्रायः सामाजिक राजनैतिक व देश के आर्थिक जीवन से सम्बन्धित विषयों पर तर्क-वितर्क होता है।

कार्यक्रमों का सूक्ष्म वर्णन तथा व्यवहृत प्रणाली का विवरण हमें बहुत दूर ले जायगा, परन्तु इन संगठनों के फैलाव तथा महत्व का अनुमान इसी से लगाया जा सकता है कि वे ७५% आबादी में कार्य करते हैं।

इन समस्त संस्थाओं को बेलजियम सरकार द्वारा नैतिक व भौतिक सहायता प्राप्त होती है, चाहे वह सार्वजनिक शिक्षा मन्त्रालय हों, चाहे सार्वजनिक स्वास्थ्य व परिवार मन्त्रालय हो अथवा कृषि भन्त्रालय हो। आर्थिक सहायता की शर्तें विविध हैं, परन्तु यह सामान्य नियम है कि परिस्थितियों के अनुसार स्वीकृत व्यय का १०% से ५०% राज्य की ओर से प्राप्त होता है।

मन्त्रालयों के उन विभागों को जो इन गतिविधियों की आर्थिक सहायता करते हैं व उनका निरीक्षण करते हैं, परामर्शदात्री समितियाँ सहायता देती हैं। इन समितियों में सम्बन्धित संस्थाओं के प्रतिनिधिगण भाग लेते हैं। ये समितियाँ न केवल प्रौढ़-शिक्षा के विविध क्षेत्रों में लागू सामान्य नीति के सम्बन्ध में परामर्श देती हैं, अपितु सरकार प्रदत्त कोष के वितरण के विषय में भी परामर्श देती हैं। राजनैतिक दलों के प्रतिनिधि इन परामर्शदात्री समितियों में भाग लेते हैं। Consel Superieur de l Education Populaire के दो अध्यक्ष प्रतिनिधि सदन के सदस्य हैं। एक सदस्य तो क्रिश्चियन समाज दल के हैं और अन्य समाजवादी दल के हैं।

अतएव, अन्त में, यह स्वीकार करना चाहिए कि राजनैतिक दलों का प्रौढ़-शिक्षण पर प्रभाव पड़ता है। इस प्रभाव का मूल्यांकन करना अनुचित होगा। विरोधात्मक व्यवहार करने की अपेक्षा यह उचित होगा कि हम इस तथ्य को स्वीकार करें और इसका प्रयोग करें। यदि हम योग्य तथा उत्तरदायी व्यक्तियों द्वारा संचालित सुस्थापित लोकतन्त्रीय संगठन के इच्छुक हैं तो यह अनिवार्य है कि प्रत्येक को उत्तरदायित्व निर्वहन करने के लिए शिक्षण प्राप्ति के अवसर प्रदान किए जायँ।

(फ्रेंच से अनुवादित)

चौदहवाँ अध्याय

कार्यकर्ताओं के मध्य डान्टे

ल्यूसिआनो गोरल्डो
विज्ञान विद्यालय में प्राध्यापक ट्यूरिन

यह गत कुछ वर्षों में, ट्यूरिन में, कार्यकर्ताओं के एक समूह के साथ इटली में किए गये शिक्षण के एक प्रयोग का विवरण है। यह प्रयोग किसी एक औपचारिक शैक्षिक सिद्धान्त पर आधारित नहीं है, इसे शिक्षा-विशेषज्ञों ने प्रयोग नहीं किया अपितु शुभेच्छुक सामान्य जनता ने नवीन पद्धति प्रदर्शनार्थ किया है।

१९४६ में "Piccola opera della Divina Provvidenza" नामक सामान्यतः इसे इसी नाम के ट्यूरिन के पीछे Don Orione का कार्य भी कहते हैं) धर्मार्थ संगठन ने आव्रजक श्रमिकों के लिए, जो व्यवसाय की खोज में इस कस्बे में आए थे, एक बस्ती स्थापित करने का निर्णय किया। जो व्यक्ति अपने परिवारों से पृथक् हो गये थे, सार्वजनिक भवनों के अतिरिक्त उनके लिए अन्य कोई गम्य स्थान न था, वहाँ उनकी आय शीघ्र ही समाप्त हो जाती थी। उन्हीं व्यक्तियों की दुर्दशा के कारण यह योजना आरम्भ की गई थी। इस बस्ती के संस्थापक Don Pollarolo इन अभागे व्यक्तियों को ऐसा स्थान प्रदान करना चाहता था जहाँ वे सार्वजनिक भवन से विभिन्न, सुखद वातावरण में अच्छा भोजन प्राप्त कर सकते तथा पारिवारिक घर की भाँति उन्हें आराम प्राप्त होता। इस बस्ती के विशिष्ट गुण उपलब्ध भोजन तथा निवास गृह में ही नहीं है, न केवल विश्राम तथा देख भाल ही में है, परन्तु सायंकालीन संस्था की गतिविधियों में है, जो आरम्भ से ही इसका एक अंश हो गई है। डोन पोलेरोलो को पूर्ण विश्वास था कि वह वहाँ निवासियों के लिए अच्छे भोजन तथा स्वच्छ निवासालय के अतिरिक्त दिनभर के कार्य के पश्चात् शिक्षा के अवसर देगा। उनके विचार से शिक्षण ही नवीन समाज व्यवस्था का आधार होना चाहिए।

इस बस्ती का वातावरण एक सरल ग्रामीण जीवन का वातावरण नहीं है। इसमें अत्यन्त विनम्र व्यक्ति लिए जाते हैं जो प्रायः पूर्णतः अशिक्षित होते हैं; जो व्यक्ति नाना प्रकार के दूरस्थ स्थानों से आते हैं— (इटली में देश के विभिन्न भाग एक-दूसरे से अब भी बहुत पृथक हैं) एकाकी व्यक्ति मित्रता तथा पारिवारिक जीवन की सुरक्षा से वंचित रहते हैं। अतएव सन्ध्याकालीन संस्था इन व्यक्तियों को सामूहिक रूप में निकट लाने के लिए

आरम्भ की गई थीं। यह आशा थी कि सामान्य अध्ययन द्वारा वे परस्पर हिलमिल कर रहना सीख जायेंगे।

डोन पोलैरोलो अध्ययन के सामाजिक पक्ष का अत्यधिक मूल्यांकन करते थे। आजकल एक निर्धन परिवार के नवयुवक अपना सुधार करते हैं ताकि कायिक परिश्रम न्यूनतर करना पड़े तथा पारिश्रमिक अधिक प्राप्त हो। इस प्रकार के दृष्टिकोण से अध्ययन का मूल्य गिर जाता है तथा यह ऐसी बाधा बन जाता है जिसे सम्भवतः शीघ्रातिशीघ्र पार किये जा सकने की कामना रहती है। अध्ययन सुविधा प्राप्त तथा असुविधा प्राप्त के मध्य सामाजिक दीवार भी बन सकता है। पाठशाला जाने की सुविधा के कारण जो अपने लिए संसार में एक उच्च स्थान बनाने में समर्थ हो सके, उनको और मशीन पर परिश्रम करने के लिए बाधित व्यक्तियों को अध्ययन ने पृथक कर दिया। तदनुसार, कायिक परिश्रम का अवमूल्यन हो जाता है और उससे बचने का प्रयास परिवर्द्धित होता जाता है।

डोन ओरियन का लक्ष्य एक तो शिक्षा की ओर इस उपयोगिता के दृष्टिकोण का विरोध करना है और दूसरे अध्ययन की प्राचीन महिमा का पुनःस्थापन व उसमें स्वाभाविक गुण के भाव का प्रादुर्भाव कराना है। वहाँ कोई डिप्लोमा नहीं दिये जाते जिनसे कोई फैक्ट्री से किसी आफिस में उन्नति कर सके। लक्ष्य तो कार्यकर्ता में केवल ज्ञान और रुचि जागृत करने का है ताकि वह दिन-भर की कायिक थकान के पश्चात बौद्धिक जीवन व्यतीत करने में समर्थ हों। उत्तम पुस्तक तथा मधुर संगीत का उचित मूल्य आँके। सुविधाप्राप्त से पृथक, निम्नतर तथा हीनतर के भाव को काट सकें, अन्य सामाजिक वर्ग से परस्पर परिचय के तथा समानता के स्तर पर भेंट कर सकें। कार्यकर्ता अब एक भद्र पुरुष बन जाता है, कारण कि वह इटली तथा यूरोप की मनुष्यत्व की प्राचीन परिपाटी के अनुसार केवल शुद्ध ज्ञानानन्द के लिए ही अक्ष्ययन करता है। डोनपोलैरो तथा उसके सहायकों के समस्त प्रयास अध्ययन के मान को बनाए रखने में लगे रहते हैं। "सार्वजनिक विश्व विद्यालय" के अध्यापक हर कोई नहीं होंगे, वे नगर के श्रेष्ठ तथा अत्यन्त प्रसिद्ध व्यक्ति होंगे। व्याख्यान के लिए किसी को शुल्क नहीं दिया जाता। श्रमिकों को यह भली भाँति ज्ञान होना चाहिए कि अत्युत्तम विद्वान आने के इच्छुक हैं और उनको व्याख्यान देने में अपना मान समझते हैं। 'सिद्धान्त की ठोसता तथा भाषा की सरलता' (यह स्कूल का नारा है) के कारण विषम समस्याओं को हल करना भी सबके लिए सम्भव हो जाता है।

श्रमिकों के वातावरण में संस्कृति के निजी गुण के कारण उसकी स्थापना किसी आदर्शवादी के पवित्र भ्रम के समान है। फिर भी तथ्य बताते हैं कि श्रमिकों की अव्यक्त उमंगों के साथ ही विचार मेल खाते हैं। उन भाग्यहीन श्रमिकों की उमंगें जो डोन पोलैरो के

द्वार पर शय्या और रोटी के टुकड़े के लिए याचना करते हैं। सर्वप्रथम डोन पोलैरो ने डान्टे की पुस्तकों का वाचन कर अपना प्रयोग आरम्भ किया। उनके मित्र घबरा रहे थे। डान्टे को ही क्यों चुना जाय ? क्या कोई आधुनिक वस्तु उत्तमतर न होती ? श्रमिकगण मध्य-कालीन युग में कैसे पहुँच सकते हैं ? छः सौ वर्ष प्राचीन पद्यात्मक भाषा को कैसे समझ सकते हैं ? परन्तु इन समस्त तर्कों के विरुद्ध डोन पौलैरो ने व्यक्तिगत तथ्य के आधार पर निर्णय किया। उनका निजी आध्यात्मिक विकास अधिकांश डान्टे के कारण ही हुआ था। अतः जो कुछ उन्होंने प्राप्त किया उसे दूसरों तक पहुँचाना निजी कर्तव्य समझा। वे स्थिर रहे, और एक वर्ष भर तक अपने शिष्यों को डान्टे पढ़वाया और जब पाठ्य-क्रम के अन्त में मत लिया गया, और उनसे यह पूछा गया कि वे आगामी वर्ष में प्राविधिक विषय का अध्ययन करेंगे अथवा सांस्कृतिक विषय का, तो बहुसंख्यक ने साहित्य तथा संगीत ही चुना।

समय-समय पर पाठ्य-क्रम का विस्तार होता गया। अब उसमें डान्टे के अतिरिक्त आधुनिक उपन्यासकार, इतिहास, दर्शन शास्त्र, खगोल विद्या, अन्य विज्ञान तथा संगीत पढ़ाये जाते हैं। उदाहरणार्थ, गत वर्ष का कार्यक्रम था।

दर्शन शास्त्र : मानव इतिहास की महत्ता (४ पाठ)

साहित्य : शेक्सपियर की मानवता (४ पाठ)

(अन्त में हेनरी V का एक फिल्म प्रदर्शन भी हुआ)।

गृह निर्माण विद्या—मानव जीवन पर गृह-प्रभाव (४ पाठ)

संगीत—वाद्य वृन्द के साज़ तथा अभिव्यक्ति में उनका मूल्य। ट्यूरिन संगीत विद्यालय के विद्यार्थियों द्वारा दिए १० संगीत पाठ)।

चल-चित्र : फिल्मों ने मानव जीवन को जिस दृष्टिकोण से लिया है, उसका नाटक (सामान्य भूमिका देकर ४ फिल्मों का प्रदर्शन किया गया) तदुपरान्त उस पर सामान्य वादविवाद किया गया।

खगोल विद्या : विश्व की लम्बाई-चौड़ाई (५ पाठ)

श्रमिकों को ट्यूरिन के ऊपर पिनो वेधशाला दिखाने गाड़ी में ले जाया गया, तथा दूरदर्शी यन्त्र से दूरस्थ वस्तुएँ दिखाकर व्याख्यान दिया गया।

प्रत्येक वर्ष एक सामाजिक सप्ताह मनाया जाता रहा। गत सामाजिक सप्ताह में, विश्वविद्यालय के राष्ट्रीय प्रसिद्धि प्राप्त अध्यापकों ने 'अहंकार तथा समाज'; 'परिवार', 'जीवन अत्युत्तम उपहार'; 'हमारा व्यवसाय तथा सामान्य भलाई'; एवं एकत्रत्व पर अनेक व्याख्यान दिए—(यहाँ यह उल्लेखनीय है कि जब एक अध्यापक ने प्राविधिक उन्नति को, श्रमिकों के जीवन की परिस्थितियों के सुधार का साधन बताया तो अनेक श्रोताओं ने विरोध

किया कि श्रमिक या खनिक की स्थितियों के सुधार का प्रथम मार्ग उसके अवकाश में बौद्धिक जीवन का अवसर प्रदान करना है।

इस वर्ष एक नवीन भाषण-गृह के उद्घाटन के कारण डोन ओरियोना का सार्वजनिक विश्वविद्यालय ऐसे अतिरिक्त विद्यार्थी लेने योग्य हो गया है जो वहाँ बस्ती में नहीं रहते। यह इसलिए किया गया ताकि श्रमिक गण अतिथेय का कार्य कर सकें और अन्य व्यक्तियों को चाहे वे अवस्था में बड़े ही क्यों न हों स्वयं भोगे हुए आध्यात्मिक सुख देने को तैयार रहें।

स्कूल का अत्युत्तम व लगभग क्रान्तिकारी प्रयोग निस्सन्देह श्रमिकों को दर्शन का ज्ञान कराना था। जेनोआ विश्व-विद्यालय के प्राध्यापक कार्लो मज़ानतिनी जैसे दार्शनिक ने, जो इटली की सीमा के बाहर भी विख्यात हैं, किये गए कार्य पर सन्तोष प्रगट किया। उन्होंने कहा कि श्रमिकों की शिक्षा ने यह सिद्ध कर दिया कि दर्शन जिसकी एकरूपता की धारणा के लिए माँग है, वह दर्शन प्रत्येक मनुष्य के अन्तस्तल में बसा हुआ है और उसे ज्ञान की किसी मात्रा के अनुरूप उपस्थित किया जा सकता है। प्रौढ़-पुनर्विचार तथा आलोचना के अभ्यस्त होते हैं और यही प्रवृत्ति हमारा प्रारम्भिक स्थान है। हमें उनके निजी यौवन के उत्साह तथा आदर्शवाद को ही पुनर्जीवित करने का प्रयास करना चाहिए। उन्हें इस विचार से परिचित कराने का प्रयास करना चाहिए कि व्यापक समस्याएँ न दूर हैं और न ही अस्पष्ट, सत्य केवल एक है। यद्यपि प्रत्येक मनुष्य उसे अपने दृष्टिकोण से देखता है। इस प्रकार अलौकिक ढंग से देखकर वह अपने साथियों के उस एक सत्य के ज्ञान को परिवर्द्धित करता है।

इस प्रकार दार्शनिक विचारों से सार्वजनिक सम्बन्धों में सुधार होता है, क्योंकि यह प्रत्येक मनुष्य के आदर को महत्ता देता है, प्रत्येक मनुष्य का निजी व्यापक मूल्य होता है। यह मानव-सम्बन्धों में न्याय-प्राप्ति के प्रयास को प्रमाणित करता है क्योंकि प्रत्येक मनुष्य में दिव्यात्मा का अंश रहता है।

डिप्लोमा न देने वाले इस स्कूल ने निर्धनतम व्यक्ति के लिए क्या परिणाम दिखाए? स्वभावतः विविध प्रकार के परिणाम हैं, जिनका मूल्य आँकना कठिन है। व्याख्यानों में २०० के लगभग ऐच्छिक उपस्थिति रहती थी, निबद्ध नहीं। सबसे बड़ी संख्या संगीत और दर्शन की कक्षाओं में होती थी। दर्शन में इतनी संख्या का होना अप्रत्याशित था।

एक विशाल बाधा यह थी कि श्रोतागण विविध प्रकार के होते थे जिनमें स्त्री-पुरुष, युवा व वृद्ध, सभी सम्मिलित होते थे। विद्यार्थियों की संख्या अधिक होने के कारण स्पष्टतः अनेक विद्यार्थी व्याख्यानोपरान्त वादविवाद में भाग लेने से घबराते थे। पुरस्कार-

प्रतियोगिता के कुछ परिणाम अच्छे निकले। इस प्रतियोगिता में प्रत्येक विद्यार्थी व्याख्यान के सम्बन्ध में, इच्छानुसार कुछ निजी विचार लिखकर अभिव्यक्त कर सकता था।

यह देखा गया कि युवकों की अपेक्षा वयस्कों में सामान्यतः रुचि अधिक प्रबल होती थी और यह भी देखा गया कि जितनी अधिक किसी में अज्ञानता थी, उतनी ही अल्प उनकी जिज्ञासा। यद्यपि यह स्वाभाविक है, तथापि कितना दुःखमय। अत्यधिक कठिन तथा महत्त्वपूर्ण कार्य था रुचि की प्रथम चिन्गारी जलाना। जिस मनुष्य को पहले से ही कुछ थोड़ा-बहुत ज्ञान है वह और अधिक जानने का इच्छुक रहता है। कुछ को लालायित तथा अनुरागी कहना उचित होगा। जब कभी अध्यापक का व्याख्यान ठीक से कर्णगोचर नहीं होता था, तत्काल ही उज्र उठाया जाता था। उन्हें एक भी शब्द का छूट जाना सह्य न था। कभी-कभी अपनी समझने की सामर्थ्य पहचानने पर उनके चेहरे आनन्द से दैदीप्यमान हो उठते थे। जिन्हें समझ में नहीं आता था वे ऐसे प्रतीत होते थे मानो उनके साथ कोई अन्याय हो गया हो। परन्तु क्या प्रत्येक वस्तु समझना आवश्यक है? सम्भवतः नहीं। सम्भव है, प्रत्येक वस्तु न समझ सकना और इस बात से अवगत होना ही अच्छा है कि विश्व में ऐसी कोई वस्तु नहीं है जिसके सम्बन्ध में आप समस्त ज्ञान प्राप्त कर सकें। महत्त्वपूर्ण बात यह है कि इन व्यक्तियों में एक बेचैनी उत्पन्न की जा सकती है, ऐसी बेचैनी जो कल्याणकारी होगी।

डान्टे का एक ऐसा व्याख्यान वर्णित करूँगा जिसे मैंने सुना है। काले वस्त्र धारण किए, धीरज धरे, मन्द स्वर में वार्तालाप करते, प्रतीक्षा में बैठे हुए व्यक्तियों से विशाल कक्ष भरा हुआ था। अन्धकार छाया था। दीवारों पर अन्य संसार के चित्र टंके हुए थे। पृष्ठभूमि में, दीवार पर ऊँचे, कुछ पर्दों के ऊपर वृत्ताकार प्रकाश में, डान्टे का एक विशाल चित्र प्रत्येक को आकर्षित करता था। इस आवास में डान्टे के प्रति प्रत्येक के हृदय में गहन श्रद्धा थी। उन्होंने उसकी उपस्थिति की अनुभूति उत्पन्न करने का प्रयास किया, मनुष्य उसके पास निःशब्द होकर जाते तथापि वे उसमें ऐसा मनुष्य देखते जो उनमें से एक हो।

इस वृत्ताकार प्रकाश के नीचे अनेक व्यक्ति थे। उनमें श्रमिकों के अतिरिक्त अवस्था-प्राप्त स्त्रियाँ भी थीं। सम्भवतः कुछ चलचित्र की आशा से आए थे। प्रथम अवसर पर तो किसी ने इसे स्वीकार भी कर लिया था, परन्तु व्याख्यान चलते रहे और वे व्यक्ति भी आते रहे।

अध्यापक डलेसिस के स्कन्ध (कविता का एक अंश) का पाठ करते हैं। अद्वितीय यात्री—नायक का वृद्ध तथा श्रान्त साथियों के साथ वार्तालाप जिसमें वह उन्हें जीवन के अन्तिम क्षण तक ज्ञान की उपासना करने का आदेश देता है।

"पशुओं की भाँति जीवन-यापन करने के लिए तुम्हारा निर्माण नहीं किया गया, अपितु गुणों के अभ्यास व उच्च ज्ञान प्राप्ति के लिए।" श्रोतागण निस्तब्ध होकर सुनते रहते हैं।

"आप में से प्रत्येक को भी ये शब्द सम्बोधित किए जा रहे हैं। आपको यह विश्वास होना चाहिए कि प्रत्येक मनुष्य में ज्ञान की यह प्यास रहती है। आज चलचित्र में जाने की अपेक्षा आपका यहाँ आना यह सिद्ध करता है कि आपको भी इस तृष्णा की अनुभूति हो रही है और स्मरण रखिए कि जब हम ज्ञान के अनुराग की ओर ध्यान देते हैं केवल तभी हम मनुष्य कहलाने योग्य हैं।"

अध्यापक सवा घण्टे तक भाषण देते रहे परन्तु विशाल कक्ष में निस्तब्धता छाई रही। सबके नेत्र उनकी ओर जमे रहे। तब एक हल्का-सा खुर्राटा कर्णगोचर हुआ जिससे यह प्रकट हुआ कि कोई सो गया। यह एक शिशु ही था जो अपनी माता की गोद में सुरक्षित सो गया था। माता उसे दृढ़ता से पकड़े थी और मुस्कराते हुए सामने देख रही थी। मैं एक कोने में घुस गया। वहाँ से बिलकुल चले जाने की इच्छा थी। जिन व्यक्तियों ने कभी ये पद्य सुने ही नहीं थे, जिन्होंने किसी वस्तु को निजी कहने का साहस ही नहीं किय था, उन्होंने इन आध्यात्मिक शब्दों का किसी प्रयोजनार्थ अथवा किसी डिप्लोमा-प्राप्ति हेतु दुरुपयोग नहीं किया। उनके लिए शब्दों में मौलिक आकर्षण तथा जादू था।

ये लोग अपने साथ क्या ले जाएँगे ? वे अपने मानस में क्या विचारेंगे ? किसी को ज्ञात ही क्या होगा ? मैं उन्हें बाहर जाते तथा रात्रि में एक-एक कर पृथक् होते चुपचाप देखता रहा। अल्प समय के लिए ही वे उस वृत्ताकार प्रकाश के नीचे एकत्र हुए थे।

पन्द्रहवाँ अध्याय

प्रौढ़ शिक्षा में विज्ञानेतर विषयों की महत्ता

प्राध्यापक डब्ल्यू० एस० सेफ़र्त
हॉवर्ड विश्व-विद्यालय, वाशिंगटन, डी० सी०

सितम्बर १९५२ के हेम्बर्ग यूनेस्को संस्था सम्मेलन ने अपने को प्रौढ़-शिक्षा तक ही सीमित रखा। तथापि, उसी समय, इसने सम्बन्धित शैक्षिक क्षेत्रों में क्रियात्मक तथा सैद्धान्तिक अनुभवों से लाभ उठाने का अवसर दिया, क्योंकि वे अनुभव तीनों महाद्वीपों में अनेक राष्ट्रों से सङ्कलित किये गए थे। विशेषतः, कॉलिज शिक्षा के सम्बन्ध में उठाई गई कतिपय समस्याओं के यथार्थ प्रतिरूप प्रौढ़-शिक्षण में भी हैं। इस सामान्यता से ज्ञात होता है कि विविध शैक्षिक पद्धतियों में एकता की भावना को लेकर हा न केवल सामान्य समस्याओं का समाधान करना चाहिए अपितु दोनों स्तरों पर, कॉलिज तथा प्रौढ़ की शिक्षा की शक्ति तथा संगत को सुधारना चाहिए। ऐसे प्रयास निश्चित रूप से तथा किसी महाद्वीप में सीमित नहीं रहने चाहिए।

इस लघु लेख में हम आधारभूत शैक्षिक विषयों के सम्बन्ध में बातें करेंगे। इनका मुख्य सम्बन्ध उस शिक्षा से हैं जिसे अमरीका में 'सामान्य शिक्षा आन्दोलन कहते हैं और विशिष्टतः विज्ञानेतर विषय। गत युद्ध के कारण कॉलिज शिक्षा की अनेक भ्रमात्मक धारणाएं प्रकाश में आईं। तब से ऐसे आधारभूत विषयों की खोज हो रही है, जो अनेक समय से लुप्त, बौद्धिक उन्नति के हेतु दी गई शिक्षा का स्थान ग्रहण करने में समर्थ हो सके। ऐसे अनुसन्धान का प्रयास अनिवार्य विषयों को खोज निकालना है जिनसे संगठनात्मक सिद्धान्त के अनुरूप, कॉलिज के पाठ्य-क्रम का इस प्रकार आयोजन किया जा सके ताकि उनमें सम्बद्धता, एकता, प्रतिष्ठा, प्रासंगिक योग्यता आ सके। विशेषीकरण के पीछे और ऊपर ज्ञान क्षेत्र में आधारभूत एकरूपता है, इसका प्रदर्शन किस प्रकार किया जाय? विद्यार्थी को सांस्कृतिक नैतिक, बौद्धिक, सामाजिक तथा कलात्मक मूल्यों की अनुभूतियों में इस एकता का भास किस प्रकार कराया जाय? 'विश्वविद्यालय, पद को इसका संगठनात्मक महत्व कैसे दें? तथा शैक्षिक बुद्धि के साथ राष्ट्र के, सम्भवतः मानवता के सामाजिक व नैतिक जीवन के कैसे अन्य सम्बन्ध स्थापित किये जाएँ? गत १५ वर्षों से अमरीका में यही सब सामान्य शिक्षा आन्दोलन का उत्कृष्ट उद्देश्य रहा है।' यह विशाल कार्य प्रौढ़-शिक्षा आन्दोलन की अत्यधिक आवश्यकताओं से सम्बन्धित है। यहाँ भी, केन्द्रीय विषय,

केन्द्रीय उद्देश्य, समय की परिभाषा करना, शैक्षिक विषयों की प्रणाली को प्रौढ़-शिक्षा की प्रणाली में परिणत करना है। ऐसी प्रणाली को प्रौढ़ व्यक्ति तथा किसी सामूहिक उद्देश्य की पूर्ति में सहायक तथा योग्य सिद्ध होना पड़ेगा। कॉलिज स्तर के प्रतिरूप की भाँति इस प्रणाली की मानव-जीवन की एकता तथा अविभाज्यता को नहीं भूलना चाहिए, चाहे व्यक्तिगत अनुभूतियों में कितनी ही विशेषता, अलौकिकता तथा विरोध का आभास क्यों न हो ?

और फिर यह कॉलिज शिक्षा व प्रौढ़-शिक्षा दोनों का ही अनुभव रहा है कि प्राकृतिक विज्ञान अथवा सामाजिक विज्ञान किसी ने भी हमारे शैक्षिक दर्शन को मनुष्य की ऐसी धारणा प्रदान नहीं की जो अपेक्षित एकरूपता के सिद्धान्त को पूर्ण कर सके। यह असफलता स्वाभाविक ही है और प्रत्याशित भी। परन्तु हमारा युग जो क्रमिक उन्नति तथा शिल्पकला सम्बन्धी उन्नति से प्रभावित हुआ है, अब यह अनुभव करने लगा है कि यह तो सामूहिकता तथा शिल्प कला के समक्ष आत्म-समर्पण कर रहा है जब कि मानव के अविच्छेद अधिकारों को छीना और उन पर प्रहार किया जा रहा है। स्वभावतः प्राकृतिक विज्ञान मानव-जाति के वर्ग से परे नहीं जा सकता कारण कि उसमें मनुष्य का अध्ययन किया जाता है, मनुष्य के गुण तथा नियमों के परे नहीं जहाँ पाशविक अस्तित्व तथा कार्यों का विवरण हो। होमो सैपिन्स अन्य जातियों में से एक है (और लेशमात्र भी महत्वपूर्ण नहीं) मनुष्य का अद्वितीय गुण 'मानवता' प्राकृतिक विज्ञान के अनुसन्धान-क्षेत्र में नहीं आता। शिल्प कला विज्ञान में जहाँ समय, पुद्गल तथा स्थान के ऊपर महान विजय प्राप्ति हेतु यन्त्र तथा उपकरणों का उत्पादन किया जाता है, उस विज्ञान से यह आशा नहीं की जा सकती कि वह मनुष्य के सम्बन्ध में पुष्ट धारणा स्थापित करे जैसा कि पहले से ही 'विशेषज्ञ' की धारणा है। हमारी यान्त्रिक सभ्यता तथा इसके सहस्रों उपकरणों को किस दिशा में लगाया जाय, उसका उद्देश्य तथा लाभ क्या हो सकता है, इस समस्या का समाधान तो अन्ततः शिल्पकला के बाहर से ही किया जा सकता है।

समाज-विज्ञान की दृष्टि से मनुष्य निश्चित रूप से समूह का सदस्य है। केवल सामूहिक सम्बन्धों से ही उसकी परिभाषा की जा सकती है। सामाजिक घटनाओं का वही एक उद्देश्य तथा साधन है। समाज-विज्ञान जिसका ध्येय केवल समूह, सामूहिक हित तथा सामूहिक सम्बन्ध हैं, वे अन्त में केवल सामूहिक दृष्टिकोण से जीवन को देखते हैं, एक अनियन्त्रित सामूहिक शासन की प्रवृत्ति तथा व्यक्ति के ऊपर सम्पूर्ण सामूहिक शासन की अव्यक्त प्रवृत्ति का पोषण हो रहा हैं। मनुष्य को एक व्यक्ति-विशेष न समझने, उसके प्रति हिंसात्मक वृत्ति करने, अस्तित्व से निशब्द छिप जाने की सम्भाव्यता इन अध्ययनों में तब तक व्याप्त रहेगी जब तक मनुष्य तथा समाज के आधारभूत दर्शन पर सहमति न हों, जैसा

कि 'मूल अधिकारों के मसौदे' की स्वीकृति पर अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों के क्षेत्र में व्यक्त हैं। वह आधार जिस पर अत्यधिक मर्यादाशील 'मूल अधिकारों का मसौदा' निर्भर है, अर्थात मानवीय गौरव का सिद्धान्त, अन्ततः मानवीय जीवन की पवित्रता सामाजिक विचारों से उद्भूत नहीं की जा सकती। मानवीय गौरव की धारणा तो केवल व्यक्ति-विशेष के सम्बन्ध व उसके विचारों से समझी जा सकती है। इस धारणा की स्थापना तो केवल उसी क्षेत्र में हो सकती है जहाँ मनुष्य कर्म नहीं अपितु कर्ता है। यह क्षेत्र विज्ञानेत्तर विषय है।

शासन-प्रणाली के ऊपर सर्वव्यापक विवाद जो गत युद्ध में चरम सीमा पर पहुँच गया था परन्तु किसी समझौते पर नहीं, और विचारों का सामान्य संघर्ष इन दोनों ने शैक्षिक समस्याओं के स्पष्टीकरण में अनेक योगदान दिया है। यह स्पष्ट है कि लोकतन्त्र पद्धतियाँ ऐसे व्यक्तियोंके साथ, जो आधुनिक समाज में नाना प्रकार के सहस्रों कार्यों में विशेषज्ञ हैं, कार्य में उन्नति प्राप्त नहीं कर सकतीं, केवल क्रियात्मक प्रशिक्षण से मनुष्य में सन्तुलन नहीं रहता तथा उसमें संवेगात्मक अभाव का रोग हो जाता है। इस रोग का परिणाम विनाशकारी भी हो सकता है, जब राज्य की यान्त्रिक धारणाएँ तथा असीमित शिल्पकला की गति उस रोग को उत्तेजित करती हों। हमारे समय की तानाशाही के यही कारण थे। किसी भी विशेषज्ञता की अति होने से मस्तिष्क की स्वतन्त्रत अन्तर्क्रीड़ा नहीं होती जिस पर लोकतन्त्र निर्भर है। तृतीय शतक में, इस देश में कॉलिज स्तर पर इस विकास के कुछ बौद्धिक लक्षण दर्शनीय थे। चतुर्थ दशक के प्रारम्भ में आरम्भ सामान्य शिक्षा-आन्दोलन इसी जाँच से अनुप्रेरित हुआ। यह निरीक्षण प्रौढ़-स्तर पर कितना प्रबल है, और उन देशों में जहाँ बहुसंख्यक के लिये सार्वजनिक शिक्षा-प्रौढ़ता के प्रारम्भिक वर्षों में ही समाप्त हो जाती है, इसका अनुमान लगाना सहज है।

कॉलिज स्तर पर विशेषीकरण के विध्वन्सात्मक प्रभाव का प्रतिरोध केवल व्यापक शिक्षण के ठोस तथा रचनात्मक कार्यक्रम से ही हो सकता है। लोकतन्त्र हेतु, सामूहिक माँग की अपेक्षा व्यक्तिगत माँग की स्वीकृत प्राथमिकता के लिए ऐसा कार्यक्रम अनिवार्य सिद्ध हुआ है। लोकतन्त्र वैयक्तिक जीवन की पवित्रता में विश्वास करता है। इसे मशीन तथा सार्वजनिक सभ्यता के आक्रमणों के विरुद्ध इस विश्वास की रक्षा करनी पड़ती है। लोकतन्त्रीय शिक्षा को मनुष्य के व्यक्ति-विशेष मानने की धारणा पर पुनर्महत्व देना है, जो ऐतिहासिक रूप से, लोकतन्त्र का मूल है। इसे विज्ञानेतर विषयों के स्रोतों से आकर्षित करना है।

विशेषता यह है कि 'विज्ञानेतर विषय' का, गत दशक में, शब्दकोष में दी गई परिभाषा की संकीर्णता तथा अस्पष्टता से उत्थान हुआ। इसका अब सामान्य शिक्षण में केन्द्रीय

स्थान है। यह मानव-जीवन की सीमा की रूपरेखा बनाता है जहाँ मनुष्य को निजी अस्तित्व को सार्थकता देनी पड़ती है, अभिव्यक्ति के रूप रचता है, आन्तरिक अनुभूतियों व वातावरण की चुनौती को रचनात्मक उत्तर देता है। इस क्षेत्र में मनुष्य का प्रथम स्थान विवेकशील, ललित कला में निपुण, अन्वेषक सिद्ध पुरुष का है। शैक्षिक अनुशासन के सम्बन्ध में, इस क्षेत्र में पुरातन तथा आधुनिक साहित्य, दर्शन-शास्त्र तथा धर्म, ललित कला व संगीत सम्मिलित हैं। यहाँ मनुष्य की भावुक, उत्तरदायी, अतुलनीय रचयिता व्यक्ति की धारणा स्थापित की जा सकती है। नाना प्रकार के माध्यमों, पर्याय तथा मूल्यों की दृष्टि से उसका अध्ययन एवं निरीक्षण किया जा सकता है। अनुरूप उपहार, आवश्यकताओं तथा विद्यार्थियों की दृष्टि के सहायतार्थ मनुष्य के विचारों की मार्मिकता, रूप तथा जीवन पर उससे अधिकारों का वर्णन किया जा सकता है।

कॉलिज तथा प्रौढ़, दोनों ही स्तरों पर सामान्य शिक्षा की परिधि तथा विषयों की रूप-रेखा अंकित करने के लिए प्रथम कार्य मनुष्य को व्यक्ति विशेष स्वीकार करने में विशेषज्ञ तथा विश्ववाद के विवाद को पराजित करना है। ज्ञान के तीनों मुख्य क्षेत्रों (प्राकृतिक विज्ञान, सामाजिक विज्ञान, विज्ञानेत्तर विषय) को एकता की भावना से ओत-प्रोत करना है—क्योंकि अनुशासन सत्य, एकपक्षीय तथा विभागात्मक है। अन्तर्वस्तु तथा पद्धति से सीमित है—पाठन के क्रियात्मक उद्देश्य के लिए, हमें ऐसे मानवीय सिद्धान्त पर सहमत होना है जो प्राकृतिक तथा सामाजिक रचना विभाग के आधारभूत से उठकर विज्ञानेतर विषयों के शिखर तक उन्नत हो जावे। अमरीका में अधिकृत अन्तर्दृष्टि तथा साधन सामग्रियों की मात्रा के अनुसार इन सैद्धान्तिक आवश्यकताओं पर विवाद हो चुका है।

पाठ्य-पुस्तकों की सूची की दृष्टि से प्रौढ़-शिक्षा की आवश्यकताओं का परीक्षण करते समय हमें यह अनुभव हुआ कि मनुष्य की ऐसी गहन अन्तर्दृष्टि, जो मानवीय परिस्थितियों के सम्बन्ध में अधिक विस्तृत तथा अन्तिम सत्य का बोध कराएगी, वह विज्ञानेतर विषयों के अनुसन्धान के बिना प्राप्त नहीं की जा सकती। हममें से कुछ को ऐसा भी प्रतीत हुआ कि विज्ञानेतर विषयों का अध्ययन ही केवल मनुष्य के सम्बन्ध में व्यापक सत्य का बोध कराएगा, विशेषतः व्यक्ति-विशेष के सम्बन्ध में, और यह कि मनुष्यों की सम्भाव्यताओं की कल्पना यहीं पर अधिकतम स्पष्ट की जा सकती है। इन विचारों को मन में रखते हुए, विज्ञानेतर विषयों की अध्ययन योजना बनाकर, हमने अपना ध्यान संयुक्त राष्ट्रों में कॉलिज स्तर पर अनुभवों की ओर फेरा। वस्तुतः यही वह स्थान था जहाँ आधारभूत विषयों में अनिवार्य एकरूपता, जो गत अध्याय का विषय है, हमारे विचारों में उभर आई। ऐसा हुआ कि विज्ञानेतर विषयों की एक विशेष अध्ययन-योजना, पूर्ण विवरण सहित अनुसन्धान हेतु

उपलब्ध थी। यह योजना वाशिंगटन, डी० सी० में हावर्ड विश्वविद्यालय के कॉलिज ऑफ़ लिबरल आर्टस में दस वर्षों से अधिक से सामान्य-शिक्षण कार्यक्रम की योजना में क्रियान्वित की जा रही थी। यह योजना गत अध्याय में स्थापित कुछ सिद्धान्तों तथा धारणाओं को प्रकाशित करती है। कुछ सीमा तक यह ऐसी योजनाओं का उचित आदर्शभूत समझी जा सकती है। प्रौढ़-शिक्षा स्तर पर विज्ञानेतर विषयों के पाठनार्थ, पद्धति के रूप में इसका मूल्य हो सकता है, कम-से-कम स्कैन्डिनेविया, इंगलैंड तथा जर्मनी के ढंग के आवासिक विद्यालयों में। इस दृष्टिकोण से, इस विशेष अध्ययन योजना ने प्रौढ़-शिक्षा पर यूनेस्को सम्मेलन का ध्यान आकर्षित किया।

यह 'विज्ञानेतर विषय का परिचय' कॉलिज में एक वर्ष का पाठ्यक्रम है, जिसमें सप्ताह में तीन घण्टे का साप्ताहिक व्याख्यान और दो विचार-गोष्ठियाँ होती हैं। इस कार्यक्रम (आधुनिक तथा शास्त्रीय भाषाएँ इंगलिश) से सम्बन्धित विभाग ही अध्यापक नियुक्त करता है तथा अध्यापकों को इस कार्य में अध्यापन भार के अनुसार श्रेय प्राप्त होता है। इन शिक्षकों के अतिरिक्त संस्था के कुछ सदस्य इस कार्यक्रम में पूर्ण समय देते हैं। वे विशेष उत्तरदायित्व निर्वहन करते हैं।

इस योजना से अनेक प्रकार के अनुभव हुए, उन्नति भी हुई। विश्व-साहित्य के प्रचुर संग्रह को पाठ्य-पुस्तिका की भाँति व्यवहृत करके अनेक वर्षों के प्रयोग से यह निश्चय किया गया कि अध्ययन करने योग्य सावधानी से चुनी हुई सीमित पुस्तकों पर सम्पूर्ण ध्यान केन्द्रित करना चाहिए।

अधिकतम संग्रहों के पीछे उमंगपूर्ण सांस्कृतिक-ऐतिहासिक अभ्युद्देश्य की स्थान-पूर्ति, चरित्रों तथा विचारों, पर्यायों तथा धारणाओं, प्रवृत्तियों तथा मूल्य के गहन अध्ययन ने की। इस पाठ्यक्रम तथा केवल ऐतिहासिक अथवा साहित्यिक पाठ्यक्रमों में एक स्पष्ट अन्तर यह है कि महत्त्व केवल एक ही अभिलेख पर दिया जाता है—इसके महत्त्व, सम्भवतः इसकी अद्वितीयता, इसके विरासती गुण, पक्ष, तथा मूल्य। विज्ञानेतर विषयों में सम्मिलित किसी एक विषय की सीमाओं का यह अध्ययन अतिक्रमण करता है तथा एकरूपता के सिद्धान्त की सहायता से इन विषयों को संगठित करने का, इस अध्ययन का उद्देश्य है। अर्थात्, इसका उद्देश्य उनको एक सामान्य लक्ष्य प्रदान करने का है। यह सामान्य लक्ष्य है 'मनुष्य की प्रतिमा' उद्देश्य है एक 'भावना का संग्रह'।

एक सतत अन्वेषण जिसने अभिलेखों को चुना और जो स्कूल के प्रत्येक वर्ष में पाठन-सम्बन्धी चुनौती बना रहता है, वह 'मनुष्य की प्रतिमा' की खोज है। भूत के वृहद् सांस्कृतिक युग की अवधि में मनुष्य ने निजी सम्बन्ध में क्या समझा? उसने किस में

विश्वास किया ? उसे क्या आशा थी ? उसने मानव-जीवन का क्या अर्थ लगाया ? दुःख, निराशा तथा असफलता के कारण उसके अस्तित्व में उत्पन्न संघर्ष तथा विषम समस्याओं में भी उसने इस अर्थ को किस प्रकार सुरक्षित तथा बचाए रखा ? इस प्रतिमा में, जैसा कि इस अध्ययन से ज्ञात होता है, देवताओं तथा परमात्मा की प्रतिच्छाया दृष्टिगोचर होती है। मानव-जाति को बनाए रखने और प्रेरणा देने वाली दैवी शक्तियाँ अभिव्यक्त होती हैं। घटनापूर्ण मनुष्य, योद्धा, जन-जाति, शाश्वत्-सत्य तथा धार्मिक अनुभूतियों का अनुसन्धानकर्ता, दुःखी घटनाओं का नायक, आत्म-प्रवंचक, तथा सदैव मन, जीवन तथा समय का अतिक्रमण करने का प्रयास करने वाला; मनुष्य के नैतिक व्यक्तित्व का रूप जो निजी कथन, विचार तथा क्रिया का उत्तरदायित्व ग्रहण करता है, निजी वातावरण का परिणाम तथा शिकार और अन्त में निजी यन्त्रों का दास, ये ही वे कुछेक रूप हैं, जो इस अध्ययन योजना में प्रगट व प्रकाशित होते हैं। जिस कवि ने इन मूर्तियों की रचना की है उसकी भावुकता तथा बुद्धिमत्ता का विद्यार्थी को भी आभास होता है। शिक्षक का यह उत्तरदायित्व होता है, कि वह निरन्तर उनका सम्बन्ध उन मूल्यों से समझाए (विवेक-मय, नैतिक, धार्मिक तथा कलात्मक ढंग) जो 'मनुष्य की धारणा' की तथा 'भावना-संग्रह' की परिभाषा करे। निम्नलिखित अभिलेखों का (कुछ परिवर्तन सहित) कतिपय वर्षों से उपयोग किया जा रहा है :—

होमर की ओडिसिस
सोफेकल्स की ओडियस दी किंग और ऐन्टोगोन; यूरीपिडस की मीडिया।
प्लेटो की एपोलोजी, क्रटों, फोयडो तथा सिमपोजियम।
डान्टे की दी डिवाइन कोमेडी के चुने हुए अंश।
शेक्सपियर की किंग लियर ओनेलो तथा दी टैमपैस्ट।
मिल्टन की पैराडाइस लोस्ट।
पास्कल की थोट्स।
वोलटायरे की कैन्डाइड।
गैटे की फोस्ट।
मैलविले की मोबी डिक।
जोला की जरमिनल।
इलियट की मरडर इन दि कैथेड्रल और बाइबिल की ओल्ड व न्यू टेस्टामैन्ट।

कोई भी चुनाव अन्तिम नहीं हो सकता। चुनाव के सिद्धान्त पर जो 'सामान्य' बपौती को मान्यता देता है, विवाद नहीं किया जा सकता। यह चुनाव मुख्य बातों तथा

कुछ व्यावहारिक, प्रायः परिवर्तनशील अंश, जैसे विद्यार्थियों के गुण तथा उपयुक्त पाठ्य-पुस्तकें, समय तथा अध्यापकगण की उपलब्धि पर निर्भर होता है। इस विशेष चुनाव के दोष स्पष्ट हैं। ऐतिहासिक शृंखला जिसे केवल ऐतिहासिक शिक्षण-क्रम में भी पाना कठिन है, उसे शैक्षिक प्रबलता के पक्ष में त्याग दिया गया है। इस योजना में निहित प्रत्येक प्रणाली तथा प्रत्येक मूल्य की धारणा का प्रदर्शन व प्रकाशन पूर्णतः विभिन्न चुनाव से किया जा सकता था। उदाहरणार्थ, यदा-कदा लघुतर वार्तालाप की अपेक्षा प्लेटो का 'गण-राज्य' अधिक सहायक सिद्ध होता है। ग्रीस के दुखान्त तथा शेक्सपियर के नाटकों में से प्रायः कोई भी नाटक इस समय व्यवहृत नाटकों की भाँति उद्देश्य-पूर्ति करेगा। क्रस्टोफर मारलो का 'डा० फास्टस' का बारम्बार प्रयोग किया गया था। बाइबिल में से चुने हुए अंशों का सरलता से परिवर्तन किया जा सकता है। मैलविले ने अभी हाल में ही इमरसन के लेखों का स्थान ग्रहण किया है। इस शिक्षण-क्रम की उद्देश्य-पूर्ति के लिए इबजन के कुछ नाटक, बालज़क के यूजिनी ग्रेन्डेट तथा पैरे गैरियट को हाल में ही उपयोगी समझा गया है। सामान्य बपौती का 'कोष-पात्र' अशेष्य है। यह तथ्य केवल शिक्षकों तथा शिक्षार्थियों के लिये सतत ललकारने व प्रेरणा देने वाला है। इसका संकेत क्षेत्र में नवीन दृष्टिकोण तथा अनुसन्धान की ओर है। 'मनुष्य की प्रतिमा' की खोज को सम्बन्धित संगीत तथा ललित कला के क्षेत्र तक विस्तृत करने का प्रश्न सामयिक तथा प्राविधिक सुविधाओं का है। (हावर्ड विश्वविद्यालय में इस आवश्यकता की आंशिक पूर्ति इन क्षेत्रों में कतिपय धारावाहिक शिक्षण क्रम से की गई है।) माध्यम, प्रणाली तथा पर्याय के अन्तर के अतिरिक्त विज्ञानेतर विषयों की आधार-भूत एकता मनुष्य की आत्म-प्राप्ति व मूल्यों की धारणा से सम्बन्धित तथा मानवीय रचना की अथाह गहराई सदा स्थापित करेगी।

इस योजना (जैसे किसी और के) का समस्यात्मक पक्ष, शतक के परिवर्तन के पहुँचते ही, (भूत तथा वर्तमान) प्रगट हो जाता है। विज्ञानेतर विषयों में 'सामान्य बपौती' के के अभिलेखों के स्थायी मूल्य से सम्बन्धित युग के स्पष्ट निर्णय अभी नहीं बताए गए। हमारा निजी निर्णय अशुद्ध हो सकता है। क्या विज्ञानेतर विषयों में ऐसे अभिलेख प्राप्त हो सकेंगें जो मनुष्य को मशीनों तथा यन्त्रों की दासता से मुक्ति दिला सके, और मुक्ति दिला सके भय और सामूहिक बाढ़ से, उसमें मस्तिष्क तथा इच्छा की स्वतन्त्रता को पुनः स्थापित कर सकें? क्या कोई चुनाव प्राचीन अभिलेखों के पद तथा व्यापकता से, सैकड़ों वर्षों के पश्चात् अद्वितीय महानता का स्थान बना सके हैं, हीन तो नहीं रह जायगा? सम्भवतः, एक राष्ट्रीय साहित्य की सीमा में इसका उतर मिल जाए। जैसे अल्बर्ट शूजर्स, के Out of my life & Thought फिर भी ये प्रश्न जो उपरोक्त कारणों से शिक्षण क्रम

की समाप्ति के चिह्न हैं, यदि उपयुक्त ढंग से उपस्थित किये जायें तो अब भी चिह्न तथा चुनौती की भाँति अध्यापकों का उद्देश्य हल करेगा।

शिक्षक को हर स्तर पर मिलने वाली विक्षुब्ध और भ्रमात्मक धारणा में एक मनुष्य की आत्मा का स्पष्ट चित्रण आवश्यक है। मनुष्य का यह चित्र मानव के रूप पर आधारित होना चाहिए।

सोलहवाँ अध्याय

राजनैतिक तथा सामाजिक उत्तरदायित्व हेतु प्रौढ़-शिक्षा में इंगलैंड के विश्व-विद्यालय का कार्य

प्राध्यापक आर० डी० वॉलर
प्रौढ़-शिक्षा के प्राध्यापक मानचेस्टर विश्व-विद्यालय

इंगलैण्ड के विश्व-विद्यालय के कार्य के समान यह भी है। समग्र ठोस शिक्षा हर प्रकार के उत्तरदायित्व की शिक्षा है, यह उत्तरदायी मस्तिष्क-निर्माण की शिक्षा है, निःसन्देह तथ्य यह है कि जो विश्व-विद्यालय में पठनार्थ आते हैं। उनमें कुछ-न-कुछ उत्तर-दायित्व की भावना पहले से ही रहती है और इसी कारण वे आते हैं। सहस्रों में एक उदा-हरण है—एक लोहार, विशाल-काम, भद्दा तथा अल्पभाषी। उसने प्रथम पुरातन इतिहास पर विश्व-विद्यालय की कक्षा में प्रवेश किया, तत्पश्चात् अंगरेजी साहित्य की। इस प्रकार उसने लिखकर तथा बोलकर निजी भावों को व्यक्त करने की योग्यता प्राप्त कर ली और पुस्तकालयों में विशेष रुचि रखते हुए सर्वाधिक उपयोगी स्थानीय समिति का सदस्य बन गया। उसके सम्बन्ध में दो बातें हैं—वह आरम्भ में अव्यक्त नैतिक भावना से प्रेरित होकर आया होगा और वह स्पष्टतः प्राचीन विश्व के सम्बन्ध में तथा इंगलिश के गहन अध्ययन में अग्रसर हुआ।

यह विचारना एक महान् भूल होगी कि अर्थशास्त्र तथा स्थानीय सरकार के अध्ययन से सामाजिक तथा राजनैतिक उत्तरदायित्व में अवश्यमेव संवर्द्धन होता है; यह तो नर-नारियों की नैतिक प्रवृत्ति से उत्पन्न होता है और समग्र ज्ञान से परिवर्द्धित होता रहता है, विशेषतः उन ज्ञान क्षेत्रों से जो भावुक, विवेकशील तथा क्रियाशील मनुष्यों का चित्रण करते हैं। निःसन्देह रस्किन ने इंगलैंड के प्रौढ़-शिक्षा के लिए मार्क्स की अपेक्षा अधिक कार्य किया है तथा वह स्वयं कलाक्षेत्र से राजनैतिक तथा सामाजिक अर्थ-व्यवस्था के अध्ययन तथा व्याख्या पर उतरा।

इस शीर्षक के अधीन कही गई बात विश्व-विद्यालय के समग्र कारा बाह्य कार्यों Extra Moral Work की ओर संकेत करेगा। निश्चित रूप से इसमें विश्वविद्यालय विस्तार

के महान् दिवस, कैम्ब्रिज में १८१३ के आरम्भ से शतक के अन्तिम दशक तक आने चाहिए। विषय प्रायः साहित्यिक, कलात्मक तथा वैज्ञानिक और उससे कम ऐतिहासिक होता था और शायद ही कभी सामाजिक, आर्थिक तथा राजनैतिक, तथापि समस्त कार्य सामाजिक युक्ति के द्वारा विश्वविद्यालय के बाहर किये जाते थे। यह अनेक उमंग-भरे कार्मिक वर्गीय मस्तिष्क का पोषण करते थे। हमारे औद्योगिक नगरों में आप अभी भी ऐसे वृद्ध पाएगें जिनकी कल्याण-शक्ति को १८८० या १८९० तक किसी भ्रमणार्थ विश्व-विद्यालय के अध्यापक ने प्रेरित किया हो।

सामाजिक स्थितियों से अधिक समीपवर्ती सम्बन्ध विश्व-विद्यालय बस्ती का है जो टोनबी हाल से आरम्भ हुई जिसे लन्दन के पूर्वीय सिरे पर कैवन बारनेट तथा १८८४ में अन्य ओक्सफोर्ड के आदमियों ने, तत्पश्चात् कतिपय अन्य मनुष्यों ने स्थापित की। इससे दो उद्देश्य सिद्ध हुए। विश्व-विद्यालय के आदमी बस्ती में रहने तथा चारों ओर के सामाजिक तथ्यों का अध्ययन करने लगे, स्थानीय जनता परामर्श, आदेश, प्रकाश तथा प्रेरणा हेतु बस्ती में आने लगी। ऐसे केन्द्रों में यह स्पष्ट था कि विद्वान् लोग स्थानीय जल-यान कार्मिक, खाती इत्यादि के साथ सामान्य सामाजिक उत्तरदायित्व की भावना में भाग लेते थे। निःसन्देह मुझे प्रायः ऐसा प्रतीत होता है कि १९वीं सदी में अंगरेजों की सामान्य सामाजिक उन्नति में विश्व-विद्यालय की शैक्षिक उपस्थिति, शीघ्र तथा भयानक रूप से परिवर्तनशील समय मे हमारी जनता के मिले-जुले रहने का व स्थिरता का एक महत्वपूर्ण कारण रही है। उदाहरणार्थ, यह स्मरणीय है कि लॉर्ड बैवरिज की ख्याति का आधार बेकारी का अध्ययन था जो उसने टोनबी हाल में ऑक्सफोर्ड के निवासी की तरह किया था।

कथा का सर्वाधिक उल्लेखनीय अंश इस सदी का है। इसका सम्बन्ध विश्व-विद्यालय तथा श्रमिकवर्गीय संगठन के मध्य की चिर-स्थायी शृंखला से है, जिसकी स्थापना श्रमिक शिक्षा परिषद् के कारण हुई। इस संस्था की स्थापना १९०३ में हुई थी। ऑक्सफोर्ड में १९०७ में कक्षाओं के लिए प्रथम विश्व-विद्यालय सहायक समिति की स्थापना के अवसर पर इस संस्था का विश्व-विद्यालय से साझा हुआ। अन्य समस्त विश्व-विद्यालयों के तथा विश्व-विद्यालयों के कॉलिजों ने भी यही किया परन्तु यह स्मरणीय है कि यह नहीं होता यदि विश्व-विद्यालय गत अनेक वर्षों से विस्तार सेवा से सम्बन्धित न होता। नवीन कार्य विस्तार का एक विशेष रूप था—इसकी व्यवस्था इस प्रकार की गई थी कि हर प्रकार से श्रमिक विद्यार्थियों की इच्छापूर्ति की जा सके। और तीन वर्षों के दीर्घ पाठ्य-क्रम के विशेष पर्याय का लेकर, यह किसी भी विस्तृत शिक्षा-क्रम से अधिक मार्मिक था।

कार्मिक शैक्षिक परिषद् कक्षाओं में, सामाजिक, राजनैतिक तथा आर्थिक विषयों का आरम्भ से ही अधिक जोर था। निःसन्देह, विश्व-विद्यालय को यह शीघ्र विदित हो गया कि इस क्षेत्र में माँग की पूर्ति के लिए उनके पास पर्याप्त शिक्षकवर्ग नहीं था। यह कहना अत्युक्ति-मात्र होगा कि विश्व-विद्यालयों में सामाजिक विज्ञान के विकास का कारण कार्मिक शैक्षिक परिषद् का उदय था। परन्तु इसका प्रभाव अवश्य ही तीव्र था। इस प्रकार मेरे निजी विश्व-विद्यालय के शिक्षक वर्ग में अनेक व्यक्तियों की, विशेषतः कक्षाएँ लेने के लिए नियुक्ति की गई थी—उनमें से एक तो अर्थ-शास्त्र का प्राध्यापक बन गया तथा अन्य ने प्रथम विश्व-युद्ध में मारे जाने से पूर्व चारटिस्म पर प्रसिद्ध पुस्तक लिखी थी।

इस लघु लेख में सफल साझे के सम्बन्ध में अधिक लिखने के लिए स्थान नहीं है, परन्तु मेरे विचार से यह प्रचुर मात्रा में विख्यात है। यह विश्व-विद्यालयों के लिए बहुत अच्छा रहा—अपने क्षेत्रों के सामान्य जीवन की अनुभूतियों में इससे सहायता प्राप्त हुई, इसके द्वारा उन्हें वर्तमान समस्याओं के सम्बन्ध में पूर्ण समाचार ज्ञात होते हैं और इसने उन्हें पाठन-पद्धति की शिक्षा दी। श्रमिकों की परिवर्द्धित राजनैतिक क्रिया-शीलता के लिए यह ज्ञान, विवेक तथा शक्ति का समृद्ध उद्गम स्थान है। अपने कक्षा के विद्यार्थियों से विश्व-विद्यालय आशा करता है कि उसका उद्देश्यात्मक तथा बौद्धिक संगठन उस उच्च स्तर का रहे जो विश्व-विद्यालय के आन्तरिक कार्य की विशेषता होती है, और इसका महत्व सामाजिक तथा राजनैतिक रोगों में विशेषतः स्पष्ट है। अध्ययन तथा तर्क-वितर्क द्वारा अपने निर्णय करने व अपने दृष्टिकोणों के लिए पूर्णतः उत्तरदायी होने की उनसे आशा की जाती है। 'प्रौढ़-शिक्षा में विश्व-विद्यालय स्तर' का यही सार है, यही अर्थ है।

कक्षाओं के अनेक सदस्य, स्थानीय समिति सदस्य, प्रधान, मजिस्ट्रेट तथा संसद सदस्य हो जाते हैं और सब प्रकार के स्थानीय संस्थाओं में क्रियाशील रहते हैं। सम्भवतः जब ये व्यक्ति कक्षाओं में आए थे, तभी इनमें उत्तरदायित्व का अंश वर्तमान था, तथा उनकी उन्नति में जितने विविध गिरिजाघर सहायक रहे हैं उतने ही कार्मिक शैक्षिक परिषद् तथा विश्व-विद्यालय परन्तु कक्षाओं के अनुभव से उनमें आत्म-विश्वास, अनुपात की भावना सावधान निर्णय का अभ्यास तथा यदा-कदा आत्म-अभिव्यक्ति की उल्लेखनीय शक्ति उत्पन्न हुई।

विश्व-विद्यालय विस्तार, विश्व-विद्यालय बस्ती, विश्व-विद्यालय सहायक समिति, और निःसन्देह विशेषतः कार्मिक शैक्षिक परिषद् के साथ विश्व-विद्यालय के सहकारिता की महान सफलता, इन सबने विश्व-विद्यालयों को इंगलैंड के प्रौढ़-शिक्षण का केन्द्र बना दिया है। स्थानीय अधिकारीगण तथा अनेक ऐच्छिक संस्थाएँ निजी विस्तृत प्रबन्ध रखती हैं।

विश्व-विद्यालय के प्रबन्ध कहीं-कहीं अधिक परिमाण में परन्तु फिर भी केवल विश्व-विद्यालय ही अभ्युद्देश तथा परामर्श का उपयुक्त केन्द्र है और सदा इसी को माना जाता है। आज-कल तो यह और भी अधिक है, क्योंकि विश्व-विद्यालय ने एक तो अब प्रौढ़-शिक्षा के देश-विदेश में संगठन, इसके इतिहास, मनोविज्ञान तथा प्रणालियों का अध्ययन आरम्भ कर दिया है और दूसरे भावी प्रौढ़-शिक्षण के शिक्षकों को प्रशिक्षित करना आरम्भ कर दिया है।

श्रमजीवी शैक्षिक परिषद के विश्व-विद्यालय से सम्बन्ध तथा कल्याण राज्य के विकास की, जिसने आम नागरिक पर नैतिक उत्तरदायित्व का लगभग असहनीय भार डाल दिया है, हाल में ही यह प्रवृत्ति हुई है कि प्रौढ़-शिक्षा के मुख्य व्यवसाय का ध्येय विचार-पूर्वक सामाजिक, राजनैतिक संस्थान निर्माण करना रहे। चाहे वह विश्व-विद्यालय के लिए हो, किंवा अन्य संस्थाओं के लिए। सम्भवतः विश्व-विद्यालय इसे कदापि स्वीकार नहीं करेंगे, वह विद्वानों व शिक्षको की संस्था है, और ऐसे सत्य का मुख्य भंडार है जिसमें आधु-निक विश्व आस्था रखता है। वे न ही गिरिजा अर्थात् धार्मिक मठ हैं और न ही राज-नैतिक दल। परन्तु वे हमारे समाज के उच्च उत्तरदायी अंग की भाँति निजी विशेष कर्तव्य निभाती हैं और बाह्य-विश्व को मेधावी स्वतन्त्रता के फल अर्पित कर निजी अनुग्रह प्रदर्शित करती रहेंगी। ये ही सामाजिक उत्तरदायी लोकतन्त्र का प्राण हैं और ऐसा समाज जो उनकी तनिक भी परवाह नहीं करता, ऐसी परिस्थितियों की ओर गतिमान हो रहा है जब कि विश्व-विद्यालयों की शिक्षा प्रदान हेतु और अपेक्षा न रहेगी अपितु विशिष्ट मत विस्तार करने के लिए होगी।